जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय

लाडनूँ- 341 306 (राजस्थान)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

स्नातक (बी.ए.) प्रथम वर्ष

विषय : आगम विद्या एवं प्राकृत साहित्य

प्रथम पत्र : तुलसी मंजरी (सूत्र १ से ३९३)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

विशेषज्ञ समिति

प्रो. प्रेम सुमन जैन
भूतपूर्व विभागाध्यक्ष प्राकृत
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय
जोधपुर (राज.)

प्रो. सत्यरंजन बनर्जी
कलकत्ता विश्वविद्यालय
कोलकाता

प्रो. जे.आर. भट्टाचार्य
विभागाध्यक्ष, प्राकृत एवं संस्कृत
जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय,
लाडनूं

डॉ. हरिशंकर पाण्डेय
सह–आचार्य
सम्पूर्णानन्द विश्वविद्यालय
वाराणसी

डॉ. जिनेन्द्र जैन
सह–आचार्य
जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय,
लाडनूं

डॉ. समणी संगीत प्रज्ञा
सहायक–आचार्य,, प्राकृत विभाग
जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय, लाडनूं

डॉ. समणी रितुप्रज्ञा
स्हायक–आचार्य प्राकृत
जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय
लाडनूं

शुभ प्रज्ञा
सहायक आचार्य
जैन विद्या विभाग
जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय, लाडनूं

लेखक दलः

आचार्य श्री महाप्रज्ञ
अनुशास्ता
जैन विश्वभाती विश्वविद्यालय,लाडनूं

सम्पादक मण्डल–
डॉ. समणी अमितप्रज्ञा
जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय, लाडनूं

कापीराइट :

जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय, लाडनूं –341306 (राजस्थान)

संस्करण : 2011

प्रतियां : 250

प्रकाशक :
जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

तुलसी मञ्जरी

अथ परिभाषा-प्रकरणम्

1. अथ प्राकृतम् 1/1

अथ शब्दो मङ्ग.लार्थोऽधिकारार्थश्च। प्रकृतिः संस्कृतम्। तत्र भवं तत आगतं वा प्राकृतम्। अत्र च प्रकृति-प्रत्यय-लिङ्ग.-कारक-समास-संज्ञादयः संस्कृतवत् वेदितव्याः। 'लोकात्' इति च वर्तते। तेन ऋ- ॠ- लृ- ॡ- ऐ- औ- ङ- ञ- श- ष- विसर्ग- प्लुत- वर्ज्यो वर्ण-समाम्नायो लोकादवगन्तव्यः। ङ-ञौ स्ववर्ग-संयुक्तौ तु भवतः। गङ्ग.ा, पञ्च। एदौतौ च केषाञ्चित्। कैअवं, सौअरिअं। अस्वरं व्यञ्जनं द्विवचनं चतुर्थी च न स्यात्। तादर्थ्यैकवचनं तु प्रायेण।

■ अथ[1] शब्द यहां मंगल और अधिकार अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। अथ शब्द मंगलसूचक होने के कारण किसी रचना के आरम्भ में प्रयुक्त होता है। अधिकार अर्थात् एक के बाद एक सूत्रों में पीछे की अनुवृत्ति ग्रहण करना। आचार्य हेमचन्द्र ने प्राकृत की प्रकृति संस्कृत को माना है।[2] उनके अनुसार संस्कृत में होने वाला (तत्रभवं) अथवा संस्कृत से आया हुआ (तत आगतं) प्राकृत है। प्राकृत में प्रकृति, प्रत्यय, लिंग, कारक, समास और संज्ञा आदि संस्कृत के समान जानना चाहिए।

प्रकृति—नाम, धातु, अव्यय, उपसर्ग आदि को प्रकृति कहते हैं।

प्रत्यय—संज्ञाओं के साथ प्रयुक्त होने वाले सि, औ आदि तथा धातुओं के साथ प्रयुक्त होने वाले तिप्, तस् आदि को प्रत्यय कहते हैं।

लिंग—पुलिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसकलिंग को लिंग कहते हैं।

कारक—क्रिया के निमित्त कर्त्ता, कर्म करण आदि को कारक कहते हैं।

समास—दो या दो से अधिक शब्दों के संयोग को समास कहते हैं।

संज्ञा—स्वर, व्यंजन, लघु, गुरु आदि को संज्ञा कहते हैं।

'लोकात्'[3] की अनुवृत्ति का यहां ग्रहण हुआ है। इसलिए ऋ, ॠ, लृ, ॡ, ऐ औ, ङ, ञ, श, ष, विसर्ग और प्लुत (तीन मात्रा वाला) को छोड़कर शेष वर्ण-समुदाय को लोक व्यवहार से जानना चाहिए।

प्राकृत में स्वतंत्र रूप से ङ और ञ का अस्तित्व नहीं है किन्तु ङ और ञ अपने वर्ग के व्यंजनों के साथ होते हैं, जैसे—गङ्ग.ा, पञ्च। कहीं-कहीं व्याकरणों में ऐ और औ भी मिलते हैं। जैसे—कैअवं, सौअरिअं। प्राकृत में स्वररहित व्यंजन नहीं होता है। द्विवचन और चतुर्थी विभक्ति भी

---

1 (क) मङ्ग.लानन्तरारम्भप्रश्नकात्स्न्येष्वथो अथ। —अमरकोश 3/3/247
(ख) 'अथ' मंगलसूचक शब्द जो किसी रचना के आरम्भ में प्रयुक्त होता है और जिसका अनुवाद 'यहां' 'अब' मंगल, आरम्भ, अधिकार किया जाता है। परन्तु यदि सही रूप से देखा जाय तो 'अथ' का अर्थ मंगल नहीं है, पर ब्रह्मा के कंठ से निकला हुआ मानने के कारण 'अथ' को मंगलसूचक समझा जाता है—ओंकारश्चाथशब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा (भामती 1/1/1)।

2 कोषों में प्रकृति का अर्थ संस्कृत नहीं मिलता है। प्रकृति के मुख्य अर्थ स्वभाव, जनसाधारण आदि किये गये हैं—प्रकृत्या स्वभावेन सिद्धम् इति प्राकृतम्' अथवा 'प्रकृतीनां साधारणजनानामिदं प्राकृतम्' यह व्युत्पत्ति प्राप्त होती है। इस विषय में आचार्य महाप्रज्ञ का मन्तव्य है कि आचार्य हेमचन्द्र ने प्राकृत की प्रकृति संस्कृत माना है। यह उनका सुविधावाद है किन्तु यथार्थवाद नहीं है। उन्होंने प्रथम सात अध्यायों में संस्कृत व्याकरण लिखा और अंतिम आठवें अध्याय में प्राकृत। उसमें विशिष्ट नियम बतलाए। शेष नियमों की पुनरावृत्ति से बचने के लिए संस्कृत का सहारा लेने की अनुशंसा की।—तुलसी मञ्जरी, प्रस्तुति पृ. 5

3 'लोकात्' 1/1/3 हेमशब्दानुशासन

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

नहीं होती। द्विवचन का प्रयोग बहुवचन के रूप में तथा चतुर्थी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग होता है। तादर्थ्य (उसके लिए) एकवचन में प्राय: चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग होता है।

⊙ गङ्गा (गङ्गा—नदी का नाम)

गङ्गा + सि

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्यव्यञ्जनस्य' (42) से स् का लोप करने पर गङ्गा रूप सिद्ध हुआ।

⊙पञ्च (पञ्च-पांच)

पञ्चन् + जस्

'जश्शसोर्लुक्' (सूत्र 396) इस सूत्र से जस् का लुक् करने पर

'अन्त्यव्यञ्जनस्य' (42) इस सूत्र से न् का लोप करने पर पञ्च रूप सिद्ध हुआ।

⊙ कैअवं (कैतवम्-धूर्त)

कैतव + सि

'क-ग-च-ज-त-द-प-य-वां प्रायोलुक्' (17) इससे त् का लोप करने पर

'क्लीबे स्वरान्म् से:' (487) इससे सि को म् करने पर

'मोऽनुस्वार:' (399) इससे म् का अनुस्वार करने पर कैअवं रूप सिद्ध हुआ।

⊙ सौअरिअं (सौन्दर्यम्-सुंदरता)

सौन्दर्य + सि

'ङञणनो व्यञ्जने' (33) से न् को अनुस्वार

'मांसादेर्वा' (139) से विकल्प से अनुस्वार का लोप

'क-ग-च-ज...' (17) से द् का लोप

'स्याद्-भव्य-चैत्य-चौर्यसमेषु यात्' (66) य् से पूर्व इ का आगम

'क-ग-च-ज ...' (17) से य् का लोप

सौअरिअ + सि

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

पक्ष में सौंअरिअं

2. **बहुलम् 1/2**

इत्यधिकृतं वेदितव्यं आशास्त्रपरिसमाप्ते:। ततश्च—

क्वचित्प्रवृत्ति:, क्वचिदप्रवृत्ति:, क्वचिद् विभाषा, क्वचिदन्यदेव।

विधेर्विधानं बहुधा समीक्ष्य, चतुर्विधं बाहुलकं वदन्ति ॥

तच्च यथास्थानमाविष्करिष्याम:।

■ शास्त्र परिसमाप्ति तक 'बहुलं' सूत्र का अधिकार जानना चाहिए। बहुल का अर्थ है—कहीं पर सूत्र की प्रवृत्ति होती है, कहीं पर सूत्र की प्रवृत्ति नहीं होती है, कहीं पर विकल्प से होती है और कहीं पर कुछ अन्य ही हो जाता है। आवश्यकतानुसार बहुल का प्रयोग यथास्थान बतायेंगे।

3. **आर्षम् 1/3**

ऋषीणामिदमार्षम्। आर्षं प्राकृतं बहुलं स्यात्। तदपि यथास्थानमुदाहरिष्याम: ॥

■ ऋषियों की वाणी को आर्ष कहते हैं। आर्ष प्राकृत भी बहुलता युक्त होती है। उसे भी यथास्थान बतायेंगे।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

अथ पूर्वसन्धिप्रकरणम्

4. **त्यदाद्यव्ययात् तत्स्वरस्य लुक् 1/40**

त्यदादेरव्ययात् परस्य तयोरेवादिस्वरस्य बहुलं लुक् स्यात्।

अम्हे—एत्थ = अम्हेत्थ

जइ—अहं = जइहं।

■ त्यद् आदि शब्दों और अव्यय से परे त्यद् आदि शब्द तथा अव्यय हो तो उनके आदि स्वर का बहुलता से लुक् होता है।

⊙ अम्हेत्थ (वयमत्र-हम यहां)

संस्कृत के वयम् और अत्र दो शब्द मिलकर प्राकृत अम्हेत्थ बना है।

वयम्

अस्मद् + जस्

'अम्ह अम्हे अम्हो मो वयं भे जसा' (508) इससे जस् के साथ अस्मद् को अम्हे आदेश करने पर अम्हे रूप सिद्ध हुआ।

अत्र

यह अव्यय है

'एच्छय्यादौ' (112) इससे अकार को एकार करने पर

'त्रपो हि-ह-त्था:' (596) इससे त्र को त्थ आदेश करने पर एत्थ रूप सिद्ध हुआ।

अम्हे + एत्थ

'त्यदाद्यव्ययात् तत्स्वरस्य लुक्' (4) इससे एत्थ के ए का लोप करने पर तथा वर्णसम्मेलन करने पर अम्हेत्थ रूप सिद्ध हुआ।

⊙ जइहं (यदि अहम्—यदि मैं)

संस्कृत यदि और अहम् मिलकर जइहं बना है।

यदि

यदि अव्यय है

'आदेर्यो ज:' (73) इससे आदि य् को ज् करने पर

'क-ग-च-त-द-प-य-वां प्रायो लुक्' (17) इससे द् का लोप करने पर जइ रूप सिद्ध हुआ।

अहम्

अस्मद् + सि

'अस्मदो म्मि अम्मि अम्हि हं अहं अहयं सिना' (507) इससे अस्मद् को सि के साथ अहं आदेश करने पर अहं रूप सिद्ध हुआ।

जइ + अहं

'त्यदाद्यव्ययात् तत्स्वरस्य लुक्' (4) इससे अ का लोप करने पर

वर्ण सम्मेलन करने पर जइहं रूप सिद्ध हुआ।

5. **अधो म-न-याम् 2/78**

संयोगान्तस्थानां मनयां लुक् स्यात्। सरो। नगो इति स्थिते—

■ संयोग के अन्त में स्थित म, न, य का लोप होता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'अधो...' (5) सर + सि उसके बाद
'अतः सेर्डोः (394) से सिकोडो

⊙ सरो (स्मरः-कामदेव)।
स्मर + सि
'अधो म-न-याम्' (5) से म् का लोप करने पर
सर + सि
'अतः सेर्डोः' (394) से सिकोडो
'डित्यन्त्यस्वरादेः' (हेम. 2/1/114) से अंतिम स्वर अ का लोप
सर् + डो
ड् अनुबन्ध जाने पर
सर् + ओ
'अज्झीनं परेण संयोज्यम्' इस न्याय से मिलाने पर सरो रूप सिद्ध हुआ।

6. **अनादौ शेषादेशयोर्द्वित्वम् 2/89**

पदस्यानादौ वर्तमानस्य शेषस्य आदेशस्य च द्वित्वं स्यात्। नग्गो। वाह्यो[1] य लोपेऽनादाविति द्वित्वप्राप्तौ च—

■ पद की अनादि में रहे हुए शेष और आदेश को द्वित्व होता है।

⊙ नग्गो (नग्नः—वस्त्ररहित)
नग्न + सि
'अधो म-न-याम्' (5) से न् का लोप
'अनादौ शेषादेशयोर्द्वित्वम्' (6) से शेष ग् को द्वित्व
नग्ग + सि
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

7. **र-होः 2/93**

अनयोर्द्वित्वं न स्यात्। वाहो।

आदेशस्य—जक्खो। क्वचिन्न भवति, कसिणो। अनादाविति किम्? खलिअं। द्वयोस्तु द्वित्वमस्त्येवेति न भवति—विञ्चुओ। रेफस्य[2] शेषो न भवति। आदेशस्य—

■ र और ह को द्वित्व नहीं होता है।

⊙ वाहो (वाह्यः—ढोने वाला पशु)
वाह्य + सि
'अधो म-न-याम्' (5) से ह् को द्वित्व की प्राप्ति किन्तु
'र-होः' (7) से द्वित्व का निषेध
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ जक्खो (यक्षः—वाणव्यन्तर देव)
यक्ष + सि

---

[1] सूत्र 5 की वृत्ति का शेषांश।
[2] सूत्र 7 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'आदेर्यो जः' (73) से य् को ज्

'क्षः खः क्वचित्तु छझौ' (26) से क्ष् को ख्

'अनादौ.....' (6) से आदेश ख् को द्वित्व

'द्वितीयतूर्ययोरुपरि पूर्वः' (14) से ख् को क्

जक्ख + सि

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

बहुलाधिकार से कहीं-कहीं शेष तथा आदेशभूत वर्ण को द्वित्व नहीं भी होता है। जैसे—

⊙ कसिणो (कृत्स्नः-सम्पूर्ण)

कृत्स्न + सि

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ

'क-ग-ट-ड-त-द-प-श-ष-स क)(पामूर्ध्वं लुक्' (13) से त् का लुक्

'र्ह-श्री-ह्री-कृत्स्न-क्रिया-दिष्ट्यास्वित्' (356) से संयुक्त के अन्त्यव्यंजन से पूर्व इ का आगम

'नो णः' (28) से न् को ण्

कसिण + सि

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

अनादि में ऐसा क्यों?

⊙ खलिअं (स्खलितम्-भ्रष्ट)

स्खलित + सि

'क-ग-ट-ड.....' (13) से स् का लुक्

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

खलिअ + सि

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

यहां ख आदि में होने से द्वित्व नहीं हुआ।

■ जहां दो संयुक्त वर्णों को पहले ही द्वित्व आदेश कर दिया गया है, वहां फिर 'अनादौ....(6) से द्वित्व नहीं होता है। जैसे—विञ्चुओ

⊙ विञ्चुओ (वृश्चिकः—बिच्छू)

वृश्चिक + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'वृश्चिके श्चेर्ञ्चुर्वा' (39) से श्चि के स्थान पर विकल्प से ञ्चु आदेश

विञ्चुक + सि

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

(ङञणनो व्यञ्जने (33) से ञ् को अनुस्वार करने पर विंचुओ रूप भी बनता है।)

पक्ष में विच्छिओ

8. **पापर्द्धौ रः 1/235**

पापर्द्धौ अपदादौ पकारस्य रेफः स्यात्। पारर्द्धि इति स्थिते—

■ पापर्द्धि के आदि प को छोड़कर द्वितीय प् को रेफ आदेश होता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

9. **सर्वत्र लबरामवन्द्रे 2/79**

सर्वत्र ऊर्ध्व अधश्च स्थितानां लबरां लुक् स्यात् वन्द्रशब्दं वर्जयित्वा। पारद्धी। शेषस्य हस्य[1]—विहलो। आदेशस्य हस्य कहावणो।

ऊर्ध्वं[2] लस्य—उक्का

ऊर्ध्वं बस्य—सद्दो

ऊर्ध्वं रकारस्य—अक्को

अधो लकारस्य—सक्ष्णं इति स्थिते—

■ ऊर्ध्व, अधः स्थित ल, ब, र का लोप हो जाता है वन्द्र शब्द को छोड़कर।

⊙ पारद्धी (पापर्द्धिः-शिकार)

पापर्द्धि + सि

'पापर्द्धौ रः' (8) से प् को र्

'सर्वत्र लबरामवन्द्रे' (9) से संयुक्त रेफ का लोप

पारद्धि + सि

'अक्लीबे सौ' (426) से इ को दीर्घ

पारद्धी + सि

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्यव्यञ्जनस्य' (42) से स् का लोप

पारद्धी रूप सिद्ध हुआ।

⊙ शेष ह का उदाहरण—विहलो (विह्वलः-व्याकुल)

विह्वल + सि

'अनादौ....' (6) से ह् को द्वित्व की प्राप्ति किन्तु

'र-होः' (7) से निषेध

विहल + सि

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ आदेश ह का उदाहरण—कहावणो (कार्षापणः - सिक्का विशेष)

कार्षापण + सि

'ह्रस्वः संयोगे' (12) से ह्रस्व

'कार्षापणे' (340) से संयुक्त को ह् आदेश

'अनादौ...' (6) से ह् को द्वित्व की प्राप्ति किन्तु 'र-होः' (7) से निषेध

'पोवः' (24) से प् को व्

कहावण + सि

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ ऊर्ध्व ल का उदाहरण—उक्का (उल्का-आकाश से गिरा हुआ तारा)

उल्का + सि

[1] सूत्र 7 की वृत्ति का शेषांश।

[2] सूत्र 9 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'सर्वत्र ....' (9) से ल् का लोप
'अनादौ ...' (6) क् को द्वित्व
शेष गङ्गा की तरह

⊙ ऊर्ध्व ब का उदाहरण—सद्दो (शब्दः— आवाज)
शब्द + सि
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'बवयोरभेदः' नियम से ब और व को एक
'सर्वत्र...' (9) से ब् का लोप
'अनादौ .....' (6) से द्वित्व
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ ऊर्ध्व र का उदाहरण—अक्को (अर्कः-सूर्य)
अर्क + सि
'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'अनादौ....' (6) से क् को द्वित्व
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

10. **सूक्ष्म-श्न-ष्ण-स्न-ह्न-ह्ण-क्ष्णां ण्हः 2/75**
सूक्ष्मस्य श्नादीनां च ण्हः स्यात्। सण्हं।
अधोवकारस्य[1]—पक्कं
अधो रकारस्य—चक्कं।
अत्र द्व इत्यादि संयुक्तानामुभयप्राप्तौ यथादर्शनं लोपः।
क्वचिदूर्ध्वं—उव्विग्गो, क्वचिदधः—कव्वं।
क्वचित् पर्यायेण बारं, दारं। अवन्द्र इति किं? वन्द्रं।
संस्कृतसमोऽयं प्राकृतशब्दः, निषेधसामर्थ्यात् द्रे-रो-न-वा (2/80) इत्यनेन विकल्पोपि न।

■ सूक्ष्म शब्द के संयुक्त को तथा श्न, ष्ण, स्न, ह्न, ह्ण, क्ष्ण को ण्ह आदेश होता है।

⊙ अधो ल का उदाहरण—सण्हं (श्लक्ष्णम्—कोमल)
श्लक्ष्ण + सि
'सर्वत्र....' (9)से ल् का लोप
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'सूक्ष्म-श्न-ष्ण.....' (10) से क्ष्ण् को ण्ह् आदेश
शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ अधो व का उदाहरण—पक्कं (पक्वम्—पका हुआ)
पक्व + सि
'सर्वत्र....' (9) से व् का लोप
'अनादौ....' (6) से क् को द्वित्व
शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

[1] सूत्र 9 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ अधो र का उदाहरण—चक्कं (चक्रम्-चक्र)

चक्र + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'अनादौ....' (6) से क् को द्वित्व

चक्क + सि

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

■ पूर्व पद और उत्तर पद दोनों में स्थित संयुक्त वर्ण के लोप का प्रसंग होने पर कहीं पूर्व वर्ण का लोप होता है, कहीं उत्तर वर्ण का लोप होता है और कहीं पर दोनों का क्रम से लोप होता है।

ऊर्ध्व लोप का उदाहरण—उव्विग्गो (उद्विग्नः - खिन्न)

उद्विग्न + सि

'क-ग-ट-ड.....' (13) से द् का लोप

'अधो म-न-याम्' (5) से न् का लोप

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ अधो लोप का उदाहरण—कव्वं (काव्यम्—पद्यमय रचना)

काव्य + सि

'अधो मनयाम्' (5) से य् का लोप

'अनादौ....' (6) से व् को द्वित्व

'ह्रस्वः संयोगे' (12) से ह्रस्व

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ क्रमशः लोप का उदाहरण—बारं (द्वारम्-दरवाजा)

द्वार + सि

'क-ग-ट-ड....' (13) से द् का लोप

'बवयोरभेदः' इस न्याय से व् को ब् मानने पर

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ दारं

द्वार + सि

'सर्वत्र ....' (9) से व् का लोप

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ वन्द्र शब्द को छोड़कर ऐसा क्यों? वन्द्रं (वन्द्रम्-समृद्धि, कल्याण)

वन्द्र + सि

'द्रे-रो नवा' (65) विकल्प से रेफ के लोप की प्राप्ति किन्तु

'सर्वत्र....' (9) से निषेध

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

11. **अदूतः सूक्ष्मे वा 1/118**

सूक्ष्मोतोऽद् वा स्यात्। सण्हं, सुण्हं। आर्षे सुहुमं।

श्न—पण्हो।[1] **ष्ण—विण्हू।**

स्न—ण्हाओ। **ह्न—वण्ही।**

■ सूक्ष्म शब्द के ऊ को अ विकल्प से होता है।

⊙ सण्हं (सूक्ष्मम्-सूक्ष्म)

'सूक्ष्म .....' (10) से क्ष्म् को ण्ह्

'अदूतः सूक्ष्मे वा' (11) से ऊ को विकल्प से अ

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

पक्ष में सुण्हं

आर्ष प्राकृत में सूक्ष्म शब्द का सुहुमं रूप बनता है।

⊙ श्न् को ण्ह् आदेश का उदाहरण—पण्हो (प्रश्न-सवाल)

प्रश्न + सि

'सर्वत्र ....' (9)से र् का लोप

'सूक्ष्म-श्न-....' (10) से श्न् को ण्ह्

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ ष्ण् को ण्ह् का—विण्हू (विष्णुः-विष्णु)

विष्णु + सि

'सूक्ष्म-श्न.....' (10) से ष्ण् को ण्ह्

'अक्लीबे सौ' (426) से उ को दीर्घ

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्यव्यञ्जनस्य' (42) से स् का लोप

⊙ स्न् को ण्ह् का-ण्हाओ (स्नातः—स्नान किया हुआ)

स्नात + सि

'सूक्ष्म.....' (10) से स्न् को ण्ह्

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ ह्न् को ण्ह् का—वण्ही (वह्निः-अग्नि)

वह्नि + सि

'सूक्ष्म.....' (10) से ह्न् को ण्ह्

'अक्लीबे सौ' (426) से दीर्घ

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्यव्यञ्जनस्य' (42) से स् का लोप

---

[1] सू. 10 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

12. **ह्रस्वः संयोगे 1/84**

दीर्घस्य यथादर्शनं संयोगे परे ह्रस्वः स्यात्।

पुव्वण्हो।[1] विप्रकर्षे तु कृष्णकृत्स्नशब्दयोः कसणो, कसिणो।

आ—अस्सं[2] ई—तित्थं

ऊ—चुण्णो ए—नरिन्दो

ओ—कुट्टारो।

संयोग इति किं? आयासं। ईसरो।

■ संयोग परे होने पर प्रयोग के अनुसार दीर्घ को ह्रस्व होता है।

⊙ पुव्वण्हो (पूर्वाह्णः—दिन का पहला भाग)

पूर्वाह्ण + सि

'सूक्ष्म-श्न....' (10) से ह्ण् को ण्ह्

'सर्वत्र ...' (9) से र् का लोप

'अनादौ ....' (6) से शेष व् को दित्व

'ह्रस्वः संयोगे' (12) से दीर्घ को ह्रस्व

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

■ विप्रकर्ष यानि स्वरभक्ति[3] (स्वर का आगम) करने पर कृष्ण शब्द का कसणो तथा कृत्स्न का कसिणो रूप बनता है।

⊙ कसणो (कृष्णः-काला)

कृष्ण + सि

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अकार

'कृष्णे वर्णे वा' (359) से संयुक्त वर्ण से पूर्व अकार का आगम

'शषोःसः' (16) से ष् को स्

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ कसिणो (देखें सूत्र 7)

⊙ अस्सं (आस्यम्-मुख)

आस्य + सि

'ह्रस्वः.....' (12) से ह्रस्व

'अधो म-न-याम्' (5) से य् का लोप

'अनादौ ....' (6) से शेष स् को द्वित्व

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ तित्थं (तीर्थम्-घाट)

तीर्थ + सि

'ह्रस्वः....' (12) से ह्रस्व

---

[1] सू. 10 की वृत्ति का शेषांष।

[2] सू. 12 की वृत्ति का शेषांश।

[3] स्वरभक्ति—संयुक्त व्यंजन में एक व्यंजन य, र, ल, व और ह हो या अनुनासिक हो उन्हें अ, इ, ई और उ में से किसी एक स्वर का आगम कर संयुक्त व्यंजन को सरल बना दिया जाता है, उसे स्वरभक्ति कहते हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'सर्वत्र ....' (9) से र का लोप
'अनादौ .....' (6) से थ् को द्वित्व
'द्वितीयतूर्ययो .....' (14) से थ् को त्
शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ चूण्णो: (चूर्ण:-चूर्ण)
चूर्ण + सि
'ह्रस्व: ....' (12) से ह्रस्व
'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप
'अनादौ .....' (6) से ण् को द्वित्व
शेष सरो की तरह

⊙ नरिन्दो (नरेन्द्र:—राजा)
नरेन्द्र + सि
'ह्रस्व:...' (12) से ए को ह्रस्व इ
'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप
शेष सरो की तरह

⊙ कुट्टारो (कोट्टार:—किला या किले के भीतर का ग्राम)
कोट्टार + सि
'ह्रस्व....' (12) से ओ को ह्रस्व
कुट्टार + सि
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ आयासं (आकाशम्-आकाश)
आकाश + सि
'क-ग-च-ज ....' (17) से क् का लोप
'अवर्णो ....' (19) से य श्रुति
'श-षो: स:' (16) से श् को स्
शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह
यहां संयोग परे नहीं होने से दीर्घ को ह्रस्व भी नहीं हुआ।

⊙ ईसरो (ईश्वर:-परमात्मा)
ईश्वर + सि
'सर्वत्र ......' (9) से व् का लोप
'अनादौ ....' (6) से द्वित्व की प्राप्ति
'न दीर्घानुस्वारात्' (18) से द्वित्व निषेध
'शेषो: स:' (16) से श् को स्
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

13. **क-ग-ट-ड-त-द-प-श-ष-स क)(पामूर्ध्वं लुक् 2/77**

संयोगस्य ऊर्ध्वस्थितानां कादीनां लुक् स्यात्। भुत्तं। दुग्धे गकारस्य लोपः, अनादौ शेषादेशयोः (2/89) इति द्वित्वकृते—

■ क, ग, ट, ड, त, द, प, श, ष, स, जिह्वामूलीय क, उपध्मानीय)(प-ये संयोग में ऊर्ध्व स्थित हो तो इनका लोप हो जाता है।

⊙ भुत्तं (भुक्तम्-खाया हुआ)

भुक्त + सि

'क-ग-ट.....' (13) से क् का लोप

'अनादौ ......' (6) से शेष त् को द्वित्व

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

14. **द्वितीयतूर्ययोरुपरि पूर्वः 2/90**

अनयोर्द्वित्वप्रसङ्गे. उपरि पूर्वौ स्याताम्। दुद्धं।

ट—कप्फलं[1] श—णिच्चलो ड—खग्गो ष—निट्ठुरो

त—उप्पलं स—नेहो द—मग्गू क—दुक्खं

प—सुत्तो)(प—अंतप्पाओ

■ वर्ग के द्वितीय तथा चतुर्थ वर्ण को द्वित्व का प्रसंग आने पर द्वितीय वर्ण को वर्ग का प्रथम वर्ण तथा चतुर्थ वर्ण को वर्ग का तृतीय वर्ण हो जाता है।

⊙ दुद्धं (दुग्धम्—दूध)

दुग्ध + सि

'क-ग-ट-ड....' (13) से ग् का लोप

'अनादौ ....' (6) से ध् को द्वित्व

'द्वितीय .....' (14) से ध् को द्

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ ऊर्ध्व ट् का उदाहरण—कप्फलं (कट्फलम्—एक वनस्पति का नाम)

कट्फल + सि

'क-ग-ट......' (13) से ट् का लोप

'अनादौ ....' (6) से फ् को द्वित्व

'द्वितीय ....' (14) से फ् को प्

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ ऊर्ध्व श् का उदाहरण—णिच्चलो (निश्चलः—निश्चल)

निश्चल + सि

'क-ग-ट-...' (13) से श् का लोप

'अनादौ .....' (6) से च् को द्वित्व

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ ऊर्ध्व ड् का उदाहरण—खग्गो (खड्गः—तलवार)

---

[1] सू. 13 की वृत्ति का शेषांष।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

खड्ग + सि

'क-ग-ट......' (13) से ड् का लोप

'अनादौ .....' (6) से ग् को द्वित्व

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ ऊर्ध्व ष् का उदाहरण—निट्ठुरो (निष्ठुरः—कठोर)

निष्ठुर + सि

'क-ग-ट .....' (13) से ष् का लोप

'अनादौ .....' (6) से ठ को द्वित्व

'द्वितीय......' (14) से ठ को ट्

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ ऊर्ध्व त् का उदाहरण—उप्पलं (उत्पलम्—कमल)

उत्पल + सि

'क-ग-ट-ड .....' (13) से त् का लोप

'अनादौ ....' (6) से प् को द्वित्व

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ ऊर्ध्व द् का उदाहरण—मग्गू (मद्गुः—जलकौवा)

मद्गु + सि

'क-ग-ट-ड- ....' (13) से द् का लोप

'अनादौ .....' (6) से ग् को द्वित्व

शेष प्रक्रिया विण्हू की तरह

⊙ ऊर्ध्व प् का उदाहरण—सुत्तो (सुप्तः—सोया हुआ)

सुप्त + सि

'क-ग-ट-ड ......' (13) से प् का लोप

'अनादौ ......' (6) से त् को द्वित्व

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ ऊर्ध्व स् का उदाहरण—नेहो (स्नेहः—प्रेम)

स्नेह + सि

'क-ग-ट-ड........' (13) से स् का लोप

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ (जिह्वामूलीय क्) का उदाहरण—दुक्खं (दु खम्—कष्ट)

दु ख + सि

'क-ग-ट.....' (13) से का लोप

'अनादौ ....' (6) से ख् को द्वित्व

'द्वितीय .....' (14) से ख् को क्

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙)((उपध्मानीय प्) का उदाहरण—अंतप्पाओ (अन्त)(पातः—समावेश)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

अन्त)(पात + सि
'क-ग-ट-ड- ......' (13) से)(का लोप
'अनादौ .....' (6) से प् को द्वित्व
'ङञणनो ......' (33) से न् को अनुस्वार
'क-ग-च-ज .....' (17) से त् का लोप
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

15. **लुप्त-य-र-व-श-ष-सां श-ष-सां दीर्घः 1/43**
लुप्ताः यरवशषसाः येषां तेषां शषसामादिस्वरस्य दीर्घः स्यात्। पाशति।

■ जिस शब्द के य, र, व, श, ष, स का लोप हो गया है और श, ष, स शेष बचा है तो उन शब्दों के आदि स्वर को दीर्घ हो जाता है।

16. **शषोः सः 1/260**
अनयोः सः स्यात्। पासति।

■ शकार और षकार को सकार आदेश होता है।

17. **क-ग-च-ज-द-प-यवां प्रायो लुक् 1/177**

■ स्वर से परे अनादि (आदि में न हो) और असंयुक्त क, ग, च, ज, त, द, प, य, व का प्रायः लोप होता है।

⊙ पासइ (पश्यति—देखता है)
पश्यति
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'अधो मनयाम्' (5) से य् का लोप
'लुप्त .....' (15) से दीर्घ
'न दीर्घानु .....' (18) से द्वित्व निषेध
'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप
पासइ रूप सिद्ध हुआ।

18. **न दीर्घानुस्वारात् 2/92**
दीर्घानुस्वाराभ्यां कृताकृताभ्यां च परयोः शेषादेशयोर्द्धित्वं न स्यात्। पासइ।
शस्य[1] रलोपे—वीसामो
शस्य वलोपे—आसो
शस्य शलोपे—दूसीलो।
षस्य यलोपे—सीसो
षस्य रलोपे—कासओ
षस्य षलोपे—नीसित्तो।
सस्य यलोपे—सासं
सस्य रलोपे—ऊसो
सस्य वलोपे—विकासरो

---
[1] सू. 15 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

सस्य सलोपे—नीसहो।

अत्र सर्वत्र लुप्तयरवेति (1/143) दीर्घः, न दीर्घानुस्वारादिति द्वित्वनिषेधश्च।

सण्डो।[1] उभयोरपि—सेसो।

क[2] —लोओ। च—सई। ग—नओ।

रअं इति स्थिते—

■ कृत (व्याकरण के नियमों से किया गया) तथा अकृत (स्वाभाविक) दीर्घ और अनुस्वार से परे शेष और आदेशभूत वर्ण को द्वित्व नहीं होता है।

⊙ श के र् का लोप—वीसामो (विश्रामः—विश्राम)

'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप

'लुप्त ......' (15) से इ को दीर्घ

'न दीर्घानु ....' (18) से द्वित्व निषेध

'शषोः सः' (16) श् को स्

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ श के व् का लोप—आसो (अश्वः—घोड़ा)

अश्व + सि

'सर्वत्र ......' (9) से व् का लोप

'लुप्त .....' (15) से दीर्घ

'न दीर्घानु ....' (18) से द्वित्व निषेध

'शषोः सः (16) से श् को स्

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ श के श् का लोप—दूसीलो (दुश्शीलः—खराब आचरण वाला)

'क-ग-ट-ड ....' (13) से श् का लोप

'लुप्त .....' (15) से दीर्घ

'न दीर्घानु ....' (18) से द्वित्व निषेध

'शषोः सः' (16) से श् को स

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ ष् के य् का लोप—सीसो (शिष्यः—शिष्य)

शिष्य + सि

'अधो .....' (5) से य् का लोप

'लुप्त .....' (15) से इ को दीर्घ

'न दीर्घानु .....' (18) से द्वित्व निषेध

'शषोः सः' (16) से श् और ष् को स्

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ ष् के र् का लोप—कासओ (कर्षकः—किसान)

---

1 सू. 16 की वृत्ति का शेषांश।

2 सू. 17 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

कर्षक + सि
'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप
'लुप्त ....' (15) से दीर्घ
'न दीर्घानु .....' (18) से द्वित्व निषेध
'शषोः सः' (16) से ष् को स्
'क-ग-च-ज .....' (17) से क् का लोप
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ ष् के व् का लोप—वीसाणो (विष्वाणः—भोजन क्रिया)
विष्वाण + सि
'सर्वत्र ....' (9) से व् का लोप
'लुप्त .....' (15) से इ को दीर्घ
'न दीर्घानु ....' (18) से द्वित्व निषेध
'शषोः सः' (16) से ष् को स्
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ ष् के ष् का लोप—नीसित्तो (निष्षिक्तः—अत्यन्त सिक्त)
'क-ग-ट-ड .....' (13) से प्रथम ष् तथा क् का लोप
'लुप्त ....' (15) से इ को दीर्घ
'न दीर्घानु ....' (18) से द्वित्व निषेध
'शषोः सः' (16) से ष् को स्
'अनादौ .....' (6) से त् को द्वित्व
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ स् के य् का लोप—सासं (सस्यम्—अनाज)
सस्य + सि
'अधो ....' (5) से य् का लोप
'लुप्त .....' (15) से अ को दीर्घ
'न दीर्घानु ....' (18) से द्वित्व निषेध
शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ स् के र् का लोप—ऊसो (उस्रः—किरण)
उस्र + सि
'सर्वत्र .....' (9) से र् का लोप
'लुप्त ....' (15) से उ को दीर्घ
'न दीर्घानु ....' (18) से द्वित्व निषेध
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ स् के व् का लोप—विकासरो (विकस्वरः—खिलनेवाला)
विकस्वर + सि
'सर्वत्र .....' (9) से व् का लोप
'लुप्त .....' (15) से अ को दीर्घ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'न दीर्घानु .....' (18) से द्वित्व निषेध
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ सण्डो (षण्डः—बैल)
षण्ड + सि
'शषोः सः' (16) से ष् को स्
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ सेसो (शेषः—शेष)
शेष + सि
'शषोः सः' (16) से श् और ष् को स् करने पर
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ लोओ (लोकः—संसार)
लोक + सि
'क-ग-च-ज ....' (17) से क् का लोप
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ नओ (नगः—पर्वत)
नग + सि
'क-ग-च-ज ....' (17) से ग् का लोप
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ सई (शची—इन्द्राणी)
शची + सि
'क-ग-च-ज ......' (17) से च् का लोप
'शषोः सः' (16) से श् को स्
इकार उच्चारण के लिए
'अन्त्य .....' (42) से स् का लोप

19. **अवर्णो य-श्रुतिः 1/180**

कगचजेत्यादिना लुकि सति शेषोऽवर्णोऽवर्णात् परो यकारश्रुतिः स्यात्। रययं।

द[1] —गया य—विओओ

प—रिऊ व—लायण्णं

प्रायो ग्रहणात् कादीनां लुक् क्वचिन्न—सुकुसुमं, पयागजलं, अगरू, सचावं, विजणं, सुतारं, विदुरो, सपावं, समवाओ, देवो, दाणवो। स्वरादिति किम्? संकरो, संगमो, नक्कंचरो, धणंजयो, विसंतओ, पुरंदरो, संवुडो, संवरो। असंयुक्तस्येति किम्? अक्को, वग्गो, अच्चो, वज्जो, वित्तं, उद्दामो, विप्पो, पेच्च, सव्वं। क्वचित् तु संयुक्तस्यापि नक्कंचरो। अनादेरिति किम्? कालो, गंधो, चोरो, जारो, तरू, दवो, पावं, वण्णो। यकारस्य तु आदौ जत्वं वक्ष्यते। समासे तु वाक्यविभक्त्यपेक्षया भिन्नपदत्वमपि विवक्ष्यते। तेन तत्र यथादर्शनमुभयमपि स्यात् सुहकरो, सुहयरो। आयमिओ, आगमिओ। जलचरो, जलयरो। बहुतरो, बहुयरो। सुहदो, सुहओ इत्यादि।

---

[1] सू. 17 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

क्वचिदादेरपि—स उण, सो अ। क्वचिच्चस्य जः—पिसाजी। एगत्तं, एगो, अमुगो। असुगो, सावगो, आगारो, तित्थगरो, आगरिसो। लोगस्सुज्जोअगरा इत्यादिषु तु व्यत्ययश्चेति (4/447) वक्ष्यमाणसूत्रेण कस्य गत्वं। आर्षे अन्यदपि दृश्यते—आउण्टणं, अत्र चस्य टत्वम्।

क[1] —तित्थयरो ग—नयरं

च—कायमणी ज—रययं

त—पायालं द—मयणो

प—कयालू य—नयणं

व—लायण्णं

अवर्णादिति किम्? लोअस्स। क्वचिद् भवति—पियइ।

■ क, ग, च, ज आदि का (सूत्र 17 से) लोप होने पर शेष अवर्ण (अ, आ, आ..) यदि अवर्ण से परे हो तो उसको यकार की श्रुति होती है।

⊙ रययं (रजतम्—चांदी)

रजत + सि

'क-ग-च-ज .....' (17) से ज् और त् का लोप

'अवर्णो ....' (19) से य श्रुति

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ गया (गदा—गदा)

गदा + सि

'क-ग-च-ज ......' (17) से द् का लोप

'अवर्णो .....' (19) से य श्रुति

शेष प्रक्रिया गंङ्गा की तरह

⊙ रिऊ (रिपुः—शत्रु)

रिपु + सि

'क-ग-च-ज ....' (17) से प् का लोप

शेष प्रक्रिया विण्हू की तरह

⊙ विओओ (वियोगः—वियोग)

वियोग + सि

'क-ग-च-ज .....' (17) से य् और ग् का लोप

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ लायण्णं (लावण्यम्—सौन्दर्य)

लावण्य + सि

'क-ग-च-ज ....' (17) से व् का लोप

'अवर्णो ....' (19) से य श्रुति

'अधो ......' (5) से य् का लोप

'अनादौ .... ' (6) से ण् को द्वित्व

---

1 सू. 19 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

17वें सूत्र में प्रायः पद का ग्रहण करने से कहीं क, ग आदि व्यंजनों का लोप नहीं भी होता है। यथा—

⊙ सुकुसुमं (सुकुसमम्—सुन्दर फूल)

सुकुसुम + सि

'क-ग-च-ज ....' (17) से प्रायः पद के कारण क् का लोप नहीं करने पर

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ पयागजलं (प्रयागजलम्—गंगा आदि तीन नदियों का जल)

प्रयागजल + सि

'सर्वत्र .....' (9) से र् का लोप

'क-ग-च-ज ....' (17) से य्, ग्, ज् का लोप नहीं करने पर

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ अगरू (अगरुः—अगर, लकडी विशेष)

अगरु + सि

'क-ग-च-ज ....' (17) से ग् का लोप नहीं करने पर

शेष प्रक्रिया विण्हू की तरह

⊙ सचावं (सचापम्—धनुष सहित)

सचाप + सि

'क-ग-च-ज ....' (17) से च् का लोप नहीं करने पर

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ विजणं (विजनम्—निर्जन)

विजन + सि

'क-ग-च-ज ....' (17) से ज् का लोप नहीं करने पर

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष कैअवं की तरह

⊙ सुतारं (सुतारम्—अत्यधिक ऊंची आवाज वाला)

सुतार + सि

'क-ग-च-ज ....' (17) से त् का लोप नहीं करने पर

शेष कैअवं की तरह

⊙ विदुरो (विदुरः—विचक्षण)

विदुर + सि

'क-ग-च-ज ....' (17) से द् का लोप नहीं करने पर

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ सपावं (सपापम्—पाप सहित)

सपाप + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'क-ग-च-ज ....' (17) से प् का लोप नहीं करने पर
'पो वः' (24) से द्वितीय प् को व्
शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ समवाओ (समवायः—समुच्चय, संयोग)
समवाय + सि
'क-ग-च-ज ....' (17) से य् का लोप करने पर तथा व् का लोप नहीं करने पर
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ देवो (देवः—देव)
देव + सि
'क-ग-च-ज .....' (17) से व् का लोप नहीं करने पर
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ दाणवो (दानवः—राक्षस)
दानव + सि
'क-ग-च-ज .....' (17) से व् का लोप नहीं करने पर
'नो णः' (28) से न् को ण् करने पर
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

स्वर से परे ऐसा क्यों?

⊙ संकरो (शंकरः—शिव)
'शषोः सः' (16) से श् को स्
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ संगमो (संगमः—समागम)
संगम + सि
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ नक्कंचरो (नक्तंचरः[1]—राक्षस)
नक्तंचर + सि
'क-ग-ट-ड....' (13) से बहुलाधिकार से त् का लोप
'अनादौ .....' (6) से क् को द्वित्व
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ धणंजयो (धनञ्जयः—अर्जुन)
धनञ्जय + सि
'नो णः' (28) से न् को ण्
'ङञणनो ....' (33) से ञ् को अनुस्वार
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ विसंतओ (द्विषंतपः—शत्रु को तपाने वाला)
द्विषंतप + सि

[1] रात्रौ चरतीति नक्तंचरः।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'क-ग-ट-ड....' (13) से द् का लोप
'शषोः सः' (16) से ष् को स्
'क-ग-च-ज .....' (17) से प् का लोप
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ पुरंदरो (पुरंदरः—इन्द्र)
पुरंदर + सि
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ संवुडो (संवृतः—ढका हुआ)
संवृत + सि
'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ
'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ संवरो (संवरः—आश्रव का निरोध, पुल)
संवर + सि
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

इन सभी में व्यञ्जन का व्यवधान आने से 17वें सूत्र से क, ग आदि का लोप नहीं हुआ है। असंयुक्त में ऐसा क्यों?

⊙ अक्को (अर्कः—सूर्य)
अर्क + सि
'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप
'अनादौ ....' (6) से क् को दित्व
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ वग्गो (वर्गः—समूह)
वर्ग + सि
'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप
'अनादौ ....' (6) से ग् को द्वित्व
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ अच्चो (अर्चः—पूज्य)
अर्च + सि
'सर्वत्र .....' (9) से र् का लोप
'अनादौ .....' (6) से च् को द्वित्व
शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ वज्जो (वर्जः—वर्जन करना)
वर्ज + सि
'सर्वत्र .....' (9) से र् का लोप
'अनादौ ......' (6) से ज् को द्वित्व

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ वित्तं (वित्तम्—धन)

वित्त + सि

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ उद्दामो (उद्दामः—स्वच्छन्द)

उद्दाम + सि

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ विप्पो (विप्रः—ब्राह्मण)

विप्र + सि

'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप

'अनादौ ....' (6) से प् को द्वित्व

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ पेच्च (प्रेत्य—परलोक)

प्रेत्य यह अव्यय है।

'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप

'त्यौऽचैत्ये' (37) से त्य् को च्

'अनादौ ....' (6) से च् को द्वित्व

⊙ सव्वं (सर्वम्—सब)

सर्व + सि

'सर्वत्र .....' (9) से र् का लोप

'अनादौ .....' (6) से व् को द्वित्व

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

ये सभी संयुक्त होने से यहां ककारादि व्यंजनों का लोप नहीं हुआ है।

■ प्राकृत में बहुलाधिकार होने के कारण कहीं-कहीं संयुक्त में भी ककारादि व्यंजनों का लोप हो जाता है। यथा—

⊙ नक्कचरो (नक्तंचरः—राक्षस)

'क-ग-च-ज ....' (17) से बहुलाधिकार से त् का लोप

'अनादौ .... ' (6) से द्वित्व

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

अनादि में ऐसा क्यों?

⊙ कालो (कालः—समय, यमराज)

काल + सि

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ गंधो (गन्धः—गन्ध)

गन्धः + सि

'ङञणनो .... ' (33) से न् को अनुस्वार

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ चोरो (चोरः—चोर)

चोर + सि

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ जारो (जारः—उपपति)

जार + सि

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ तरू (तरुः—वृक्ष)

तरु + सि

शेष प्रक्रिया विण्हू की तरह

⊙ दवो (दवः—दावाग्नि)

दव + सि

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ पावं (पापम्—पाप)

पाप + सि

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ वण्णो (वर्णः—वर्ण)

वर्ण + सि

'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप

'अनादौ ....' (6) से ण् को द्वित्व

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

■ यहां ककारादि व्यंजन आदि में होने से 17वें सूत्र से उसका लोप नहीं हुआ है। आदि यकार को 'आदेर्यो जः' (73) से ज हो जाता है। इसलिए यहां पर यकार का उदाहरण नहीं दिया गया है।

समासयुक्त शब्दों में वाक्य (शब्दसमूह) और विभक्ति की अपेक्षा से भिन्न-भिन्न पदों की तथा एक-एक पद की कल्पना होने से समस्त पदों में प्रयोग के अनुसार ककारादि व्यंजनों का लोप तथा लोप का अभाव ये दोनों कार्य देखे जाते हैं। यथा—

⊙ सुहकरो (सुखकरः[1] —सुख देने वाला)

सुखकर + सि

'ख-घ-थ-ध-भाम्' (30) से ख् को ह्

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ सुहयरो

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

'ख-घ-थ-ध .... ' (30) से ख् को ह्

'अवर्णो .... ' (19) से य श्रुति

[1] सुखं करोतीति सुखकरः।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ आगमिओ (आगमिकः—आगम सम्बन्धी)

आगमिक + सि

'क-ग-च-ज .... ' (17) से क् का लोप

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ आयमिओ

'क-ग-च-ज ... ' (17) से ग् और क् का लोप

'अवर्णो ... ' (19) से य श्रुति

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ जलचरो (जलचरः—जलीय जीव)

जलचर + सि

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ जलयरो

'क-ग-च-ज ... ' (17) से च् का लोप

'अवर्णो ... ' (19) से य श्रुति

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ बहुतरो (बहुतरः—बहुत में से एक)

बहुतर + सि

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ बहुयरो

'क-ग-च-ज ... ' (17) से त् का लोप

'अवर्णो .... ' (19) से य श्रुति

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ सुहदो (सुखदः—सुख देने वाला)

सुखद + सि

'ख-घ-थ-ध-भाम्' (30) से ख् को ह्

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ सुहओ

'ख-घ-... ' (30) से ख् को ह्

'क-ग-च-ज-....' (17) से द् का लोप

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

इन सभी शब्दों में वाक्य तथा विभक्ति की अपेक्षा से कहीं क, ग आदि व्यंजनों का लोप हुआ है और कहीं लोप नहीं भी हुआ है।

बहुलाधिकार के कारण कहीं-कहीं आदि ककारादि का भी लोप हो जाता है। यथा—

⊙ स उण (स पुनः—वह फिर)

तद् + सि

'तदश्च तः सोऽक्लीबे' (416) से त् को स्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'अन्त्य ... ' (42) से द् का लोप

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य ... ' (42) से स् का लोप

पुनर् यह अव्यय है

'क-ग-च-ज..... ' (17) से बहुलाधिकार से आदि प् का लोप

'नो णः' (28) से न् को ण्

'अन्त्य ... ' (42) से र् का लोप

स उण रूप सिद्ध हुआ।

⊙ सो अ (स च—और वह)

तद् + सि

'तदश्च ... ' (416) से त् को स्

'अन्त्य .... ' (42) से द् का लोप

'वैतत्तदः' (415) से विकल्प से सि को डो

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

च यह अव्यय है

'क-ग-च-ज .. ' (17) से च् का लोप

■ कहीं च को भी बहुलाधिकार से ज हो जाता है। यथा—

पिसाजी (पिशाची—स्त्री पिशाच)

पिशाची + सि

'बहुलम्' (2) से च् को ज्

'शषोः सः' (16) से श् को स्

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य ... ' (42) से स् का लोप

■ बहुलाधिकार के कारण कहीं कहीं सूत्र में निर्दिष्ट कार्य से अतिरिक्त भिन्न प्रकार का रूप भी निष्पन्न हो जाता है। यथा—

⊙ एगत्तं (एकत्वम्—एक पना)

एकत्व + सि

'व्यत्ययश्च' (1115) से व्यत्यय

'अनादौ स्वरादसंयुक्तानां क-ख-त-थ-प-फांग-च-द-ध-बभाः' (998) से क् को ग्

'सर्वत्र ... ' (9) से व् का लोप

'अनादौ ... ' (6) से त् को द्वित्व

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

⊙ एगो (एकः—एक, अकेला)

एक + सि

'व्यत्ययश्च' (1115) से व्यत्यय

'अनादौ स्वराद .... ' (998) से क् को ग्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ अमुगो (अमुकः—अमुक)

अमुक + सि

'व्यत्य... ' (1115) से व्यत्यय

'अनादौ स्वराद ... ' (998) से क् को ग्

शेष सरो की तरह

⊙ असुगो (असुकः—प्राण)

असुक + सि

'व्यत्य....' (1115) से व्यत्यय

'अनादौ स्वराद......' (998) से क् को ग्

शेष सरो की तरह

⊙ सावगो (श्रावकः—श्रावक)

श्रावक + सि

'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'व्यत्य....' (1115) से व्यत्यय

'अनादौ स्वराद ....' (998) से क् को ग्

शेष सरो की तरह

⊙ आगारो (आकारः—आकार)

आकार + सि

'व्यत्य .... ' (1115) से व्यत्यय

'अनादौ स्वराद ....' (998) से क् को ग्

शेष सरो की तरह

⊙ तित्थगरो (तीर्थकरः—जिनेन्द्र भगवान्)

तीर्थकर + सि

'ह्रस्वः....' (12) से ई को ह्रस्व

'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप

'अनादौ ....' (6) से थ् को द्वित्व

'द्वितीय ....' (14) से थ् को त्

'व्यत्य ....' (1115) से व्यत्यय

'अनादौ स्वराद ....' (998) से क् को ग्

शेष सरो की तरह

⊙ आगरिसो (आकर्षः—खिंचाव)

आकर्ष + सि

'व्यत्य ....' (1115)से व्यत्यय

'अनादौ स्वराद ....' (998) से क् को ग्

'र्श-र्ष-तप्त-वज्रे वा' (357) से ष् से पूर्व इकार का आगम

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'शषोः सः' (16) से ष् को स्

शेष सरो की तरह

⊙ लोगस्सुज्जोअगरा (लोकस्य उद्योतकराः—तीन लोक को प्रकाशित करने वाले)

लोगस्स

लोक + ङस्

'व्यत्य ...' (1115) से व्यत्यय

'अनादौ स्वराद ....' (998) से क् को ग्

'ङसः स्सः' (408) से ङस् को स्स

उज्जोअगरा

उद्योतकर + जस्

'द्य-य्य-र्यां जः' (113) से द्य् को ज्

'अनादौ ....' (6) से ज् को द्वित्व

'क-ग-ज-त ..... ' (17) से त् का लोप

'व्यत्य .... ' (1115) से व्यत्यय

'अनादौ स्वराद ....' (998) से क् को ग्

'जश्शस्-ङसि-त्तो-दो-द्वामि दीर्घः' (397) से अको दीर्घ

'जश्शसोर्लुक्' (396) से जश् का लुक्

लोगस्स + उज्जोअगरा

'लुक्' (235) से स के अकार का लोप

'अज्झीनं परेण संयोज्यम्' इस न्याय से मिलाने पर

■ आर्ष प्राकृत में 'आर्षम्' (3) सूत्र से 17वें सूत्र में बताये गये कार्य के अतिरिक्त कार्य भी हो जाता है। जैसे—आउण्टणं (आकुञ्चनम्—सिकोड़ना, संकोच करना) यहां च को ट हुआ है।

⊙ तित्थयरो (तीर्थकरः—जिनेन्द्र भगवान्)

तीर्थकर + सि

'ह्रस्वः....' (12) से ई को ह्रस्व

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'अनादौ....' (6) से थ् को द्वित्व

'द्वितीय .....' (14) से थ् को त्

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

'अवर्णो ....' (19) से य श्रुति

शेष प्रक्रिया सरो की तरह

⊙ नयरं (नगरम्—नगर)

नगर + सि

'क-ग-च-ज....' (17) से ग् का लोप

'अवर्णो ....' (19) से य श्रुति

शेष कैअवं की तरह

⊙ कायमणी (काचमणिः—स्फटिक)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

काचमणि + सि

'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप

'अवर्णो .....' (19) से य श्रुति

शेष पारद्धी की तरह

⊙ रययं (देखे सूत्र 19 में)

⊙ पायालं (पातालम्—रसातल)

पाताल + सि

'क-ग-च-ज...' (17) से त् का लोप

'अवर्णो ....' (19) से य श्रुति

शेष कैअवं की तरह

⊙ मयणो (मदनः—कामदेव)

मदन + सि

'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप

'अवर्णो ......' (19) से द् का लोप

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष सरो की तरह

⊙ कयालू (कृपालुः—कृपालु)

कृपालु + सि

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ

'क-ग-च-ज...' (17) से प् का लोप

'अवर्णो ...' (19) से य श्रुति

शेष विण्हू की तरह

⊙ नयणं (नयनम्—नेत्र)

नयन + सि

'क-ग-च-ज...' (17) से य् का लोप

'अवर्णो ...' (19) से य श्रुति

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष कैअवं की तरह

⊙ लायण्णं (देखें सूत्र 19)

अवर्ण से परे ऐसा क्यों?

⊙ लोअस्स (लोकस्य—लोक के)

लोक + ङस्

'क-ग-च-ज ..' (17) से क् का लोप

'ङसः स्सः' (408) से ङस् को स्स

यहां अ से पहले अवर्ण नहीं होने से य श्रुति नहीं हुई है।

बहुलाधिकार के कारण कहीं अ से पहले अवर्ण नहीं होने पर भी य श्रुति हो जाती है। जैसे—

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ पियइ (पिबति—पीता है)

'बवयोरभेद:' नियम से ब को व मानने पर

'क-ग-च-ज...' (17) से व् और त् का लोप

'अवर्णो ....' (19) से य श्रुति

20. **अत: समृद्ध्यादौ वा 1/44**

समृद्ध्यादौ आदेरकारस्य दीर्घो वा स्यात्। सामृद्धि इति स्थिते—

■ समृद्धि आदि शब्दों में आदि अ को दीर्घ विकल्प से होता है।

21. **इत्कृपादौ 1/128**

कृपादिषु शब्देषु आदेर्ऋत इत्वं स्यात्। सामिद्धी। पक्षे समिद्धी। पासिद्धी,[1] पसिद्धी। रलोपे (2/79) दीर्घे (1/44) च, कलोपे (1/177) च, अकारस्य य (1/180) जाते, पायटं इत्यवस्थायाम्—

■ कृपा आदि शब्दों में आदि ऋकार को इकार होता है।

⊙ सामिद्धी (समृद्धि:—संपत्ति)

समृद्धि + सि

'अत: समृद्ध्यादौ वा' (20) से विकल्प से अ को आ

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'अक्लीबे सौ' (426) से इ को दीर्घ

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य ....' (42) से स् का लोप

पक्ष में समिद्धी

⊙ पासिद्धी (प्रसिद्धि:—प्रसिद्धि)

प्रसिद्धि + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'अत: ....' (20) से विकल्प से अ को आ

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

शेष सामिद्धी की तरह

पक्ष में पसिद्धी

22. **टो ड: 1/195**

स्वरात् परस्यासंयुक्तस्यानादेष्टस्य ड: स्यात्।

पायडं,[2] पयडं। रलोपे दीर्घे च पातिपत्—इत्यवस्थायाम्—

■ स्वर से परे अनादि और असंयुक्त ट को ड होता है।

पायडं (प्रकटम्—प्रकट)

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

---

[1] सू. 20 की वृत्ति का शेषांश।

[2] सू. 20 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'अवर्णो ...' (19) से य श्रुति
'टो डः' (22) से ट् को ड्
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में पयडं

23. **प्रत्यादौ डः 1/206**

प्रत्यादौ तस्य डः स्यात्। पाडिपत् इति जाते—

■ प्रति आदि के त को ड होता है।

24. **पोवः 2/231**

स्वरात् परस्यासंयुक्तस्यानादेः पस्य प्रायो वः स्यात् पाडिवत् इति जाते। स्त्रियामादविद्युतः (1/15) इति वक्ष्यमाणसूत्रेणात्त्वे च—पाडिवआ, पडिवआ।

पासुत्तो, पसुत्तो। पाडिसिद्धी, पडिसिद्धी। सदृक्षे दलोपे दीर्घे च सात्त्रक्षो—इति जाते—

■ स्वर से परे असंयुक्त और अनादि प को प्रायः व होता है।

⊙ पाडिवआ (प्रतिपत्—एकम, आरम्भ)
प्रतिपत् + सि
'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'प्रत्यादौ डः' (23) से आदि त् को ड्
'अतः....' (20) से आदि अ को आ
'पो वः' (24) से प् को व्
'स्त्रियामादविद्युतः' (564) से अन्त्यव्यंजन त् को आकार
इकार उच्चारण के लिए
'अन्त्य....' (42) से स् का लोप
पक्ष में पडिवआ

⊙ पासुत्तो (प्रसुप्तः—सोया हुआ)
प्रसुप्त + सि
'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप
'क-ग-ट-ड...' (13) से प् का लोप
'अनादौ....' (6) त् को द्वित्व
'अतः .....' (20) से विकल्प से अ को आ
शेष सरो की तरह
पक्ष में पसुत्तो

⊙ पाडिसिद्धी (प्रतिसिद्धिः—निषेध)
प्रतिसिद्धि + सि
'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्
'अतः ....' (20) से विकल्प से अ को दीर्घ
शेष सामिद्धी की तरह
पक्ष में पडिसिद्धी

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

25. **दृशोः क्विप्-टक्-सकः 1/142**

क्विबाद्यन्तस्य दृशेर्धातोर्ऋतोरिरादेशः स्यात्। सारिक्षो इति जाते—

■ क्विप्, टक् और सक् इन कृदन्त प्रत्ययों से युक्त दृश धातु हो तो उसके ऋकार को रि आदेश होता है।

26. क्षः खः क्वचित्तु छझौ 1/142

क्षस्य खः स्यात् क्वचित्तु छझावपि। इति खे प्राप्ते—

■ क्ष को ख होता है, कहीं-कहीं छकार और झकार भी हो जाता है।

27. छोऽक्ष्यादौ 2/17

अक्ष्यादिषु संयुक्तस्य क्षस्य छः स्यात्। सारिच्छो, सरिच्छो। दीर्घे वलोपे (2/79) च मानसि—इति जाते—

■ अक्षि आदि शब्दों के संयुक्त क्ष को छ होता है।

⊙ सारिच्छो (सदृक्षः—समान)

सदृक्ष + सि

'क्षःखः क्वचित्तु छझौ' (26) से ऋ को रि आदेश

'क-ग-ट-ड....' (13) से द् का लोप

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्

'अनादौ...' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय...' (14) से छ् को च्

'अतः....' (20) से विकल्प से अ को दीर्घ

शेष सरो की तरह

पक्ष में सरिच्छो

28. नो णः 1/228

स्वरात् परस्याऽसंयुक्तस्यानादेर्नस्य णः स्यात्। माणसि—इति स्थिते—

■ स्वर से परे असंयुक्त अनादि न को ण होता है।

29. वक्रादावन्तः 1/26

वक्रादिषु यथादर्शनं प्रथमादेः स्वरस्य अन्तः आगमरूपोऽनुस्वारः स्यात्। माणंसी, मणंसी। दीर्घे आभियाति[1] इति जाते—

■ वक्र आदि शब्दों में प्रयोग के अनुसार कहीं प्रथम तथा कहीं द्वितीय आदि स्वरों के अंत में आगम रूप अनुस्वार होता है।

⊙ माणंसी (मनस्वी—बुद्धिमान्)

मनस्विन् + सि

'अतः...' (20) से विकल्प से अ को दीर्घ

'सर्वत्र...' (9) से व् का लोप

---

[1] सू. 20 की वृत्ति का शेषांश।

'नो णः' (28) से न् को ण्
'अन्त्य....' (42) से न् का लोप
'वक्रादावन्तः' (29) से अनुस्वार
शेष पारद्धी की तरह
पक्ष में मणंसी

30. ख-घ-थ-ध-भाम् 1/187

स्वरात् परेषामसंयुक्तानामनादिभूतानामेषां वर्णानां प्रायो हः स्यात्। इति भस्य हे, यलोपेतलोपे च—आहिआइ, अहिआइ। पारोहो, परोहो। रलोपे दीर्घे च पावासि—इति स्थिते—

■ स्वर से परे असंयुक्त अनादिभूत ख, घ, थ, ध और भ को प्रायः ह होता है।

⊙ आहिआइ (अभियाति—सामने जाता है)
अभियाति
'अतः ....' (20) से विकल्प से अ को दीर्घ
'ख-घ-थ-ध-भाम्' (30) से भ् को ह्
'क-ग-च-ज...' (17) से य् और त् का लोप
पक्ष में अहिआइ

⊙ पारोहो (प्ररोहः—अंकुर)
प्ररोह + सि
'सर्वत्र...' (9) से र् का लोप
'अतः ....' (20) से विकल्प से अ को आ
शेष सरो की तरह
पक्ष में परोहो

31. प्रवासीक्षौ 1/95

अनयोरादेरित उत्वं स्यात्। पावासू पवासू। पाडिस्पद्धी—इत्यवस्थायाम्—

■ प्रवासिन् और इक्षु शब्द के आदि इकार को उकार होता है।

⊙ पावासू (प्रवासी—पथिक, राही)
प्रवासिन् + सि
'सर्वत्र ...' (9) से र् का लोप
'अतः .....' (20) से विकल्प से अ को दीर्घ
'प्रवासीक्षौ' (31) से इ को उ
'अन्त्य ....' (42) से न् का लोप
शेष विण्हू की तरह
पक्ष में पवासू

32. ष्प-स्पयोः फः 2/53

अनयोः फः स्यात्। पाडिप्फद्धी, पडिप्फद्धी। समृद्ध्यादिराकृतिगणः। तेन आफंसो, पारकेरं, पारक्कं, पावयणं।

■ ष्प और स्प को फ होता है।

⊙ पाडिप्फद्धी (प्रतिस्पर्द्धी—प्रतिस्पर्द्धा करने वाला, विरोधी)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

प्रतिस्पर्द्धिन् + सि
'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप
'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्
'अतः ....' (20) से विकल्प से अ को दीर्घ
'ष्प-स्पयोःफः' (32) से स्प् को फ्
'अनादौ ....' (6) से फ् को द्वित्व
'द्वितीय ....' (14) से फ् को प्
'अन्त्य ....' (42) से न् का लोप
शेष पारद्धी की तरह
पक्ष में पडिप्फद्धी

■ वृत्तिकार ने समृद्धि आदि शब्दों को (समृद्धि गण को) आकृतिगण कहा है। आकृतिगण से तात्पर्य है जैसे समृद्धि आदि शब्दों के उदाहरण में आदि अ को दीर्घ कर दिया गया है वैसे ही अन्य शब्दों में जहां आदि अ को विकल्प से दीर्घ दिखाई दे तो उन शब्दों को समृद्धिगण के अन्तर्गत समझना चाहिए। यथा—

⊙ आफंसो (अस्पर्शः—स्पर्श का न होना)
अस्पर्श + सि
'सर्वत्र ...' (9) से र् का लोप
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'अतः ....' (20) से विकल्प से अ को दीर्घ
'ष्प-स्पयोः फः' (32) से स्प् को फ्
'अनादौ ....' (6) से द्वित्व की प्राप्ति किन्तु
'न दीर्घानु ....' (18) से द्वित्व का निषेध
'वक्रादावन्तः' (29) से अनुस्वार का आगम
शेष सरो की तरह

⊙ पारक्कं, पारकेरं (परकीयम्—पराया)
परकीय + सि
'अतः ...' (20) से आदि अ को दीर्घ
'परराजभ्यां क्क-डिक्कौ च' (580) से इदमर्थक प्रत्यय को क्रमशः क्क तथा केर
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में परक्कं, परकेरं

⊙ पावयणं (प्रवचनम्—प्रवचन)
प्रवचन + सि
'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप
'अतः ....' (20) से विकल्प से अ को दीर्घ
'क-ग-च-ज....' (17) से च् का लोप
'अवर्णो ....' (19) से य श्रुति
'नो णः' (28) से न् को ण्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष कैअवं की तरह

33. ङञणनो व्यञ्जने 1/25

एषां स्थाने व्यञ्जने परे अनुस्वारः स्यात्। चाउरंतं इत्यादयोपि सिद्ध्यति।

अथ[1] कृपादिगणः—

इत्वे, पो वः (सू. 24) इति वत्वे च किवा, हिययं। मिष्टं इति स्थिते—

■ ङ, ञ, ण और न के स्थान में व्यञ्जन परे होने पर अनुस्वार हो जाता है।

⊙ चाउरंतं (चतुरन्तम्—चार सीमाओं वाला)

चतुरन्त + सि

'अतः....' (20) से विकल्प से अ को दीर्घ

'क-ग-च-ज...' (17) से त् का लोप

'ङञणनो ......' (33) से न् को अनुस्वार

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में चउरंतं

⊙ किवा (कृपा—कृपा)

कृपा + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष गङ्गा की तरह

⊙ हिययं (हृदयम्—अन्तःकरण)

हृदय + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप

'अवर्णो ....' (19) से य श्रुति

शेष कैअवं की तरह

34. ष्टस्यानुष्ट्रेष्टा संदष्टे 2/34

उष्ट्रादिवर्जितस्य ष्टस्य ठः स्यात्। मिट्ठं, रसे एव। अन्यत्र—

■ उष्ट्र, इष्टा और संदष्ट को छोड़कर शेष शब्दों के ष्ट को ठ होता है।

⊙ मिट्ठं (मृष्टम्—रस)

मृष्ट + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'ष्टस्यानुष्ट्रेष्टासंदष्टे' (34) से ष्ट् को ठ

'अनादौ....' (6) से ठ को द्वित्व

'द्वितीय ....' (14) से ठ को ट्

शेष कैअवं की तरह

---

[1] सू. 21 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

रसार्थक मृष्ट शब्द के ऋकार को ही 'इत्कृपादौ' से इकार होता है, अन्यथा नहीं।

35. ऋतोत् 1/126

आदेर्ऋकारस्य अत् स्यात्। मट्ठं, दिट्ठी, सिट्ठी। वक्रादौ (सू. 29) इति अनुस्वारे गिंठी।

■ आदि ऋकार को अकार होता है।

⊙ मट्ठं (मृष्टम्—चिकना, शुद्ध)
'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ
शेष मिट्ठं की तरह

⊙ दिट्ठी (दृष्टिः—दृष्टि)
दृष्टि + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'ष्टस्या....' (34) से ष्ट् को ठ
'अनादौ.....' (6) से ठ को द्वित्व
'द्वितीय .....' (14) से ठ को ट्
शेष सामिद्धी की तरह

⊙ सिट्ठी (सृष्टिः—रचना)
सृष्टि + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'ष्टस्या....' (34) से ष्ट् को ठ
'अनादौ....' (6) से ठ को द्वित्व
'द्वितीय ....' (14) से ठ को ट्
शेष सामिद्धी की तरह

⊙ गिंठी (गृष्टिः—एक बार ब्याई हुई गाय)
गृष्टि + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'वक्रादावन्तः' (29) से अनुस्वार का आगम
'ष्टस्या....' (34) से ष्ट् को ठ
'अनादौ....' (6) से द्वित्व की प्राप्ति
'न दीर्घानु ....' (18) से द्वित्व निषेध
शेष सामिद्धी की तरह

36. त्व-थ्व-द्व-ध्वां चछजझाः क्वचित् 2/15

एषां यथासंख्यमेते क्वचित् स्युः। पिच्छी, भिऊ, भिंगो, भिंगारो, सिङ्गारो, सिआलो, घिणा, घुसिणं, विद्धकई, इद्धी, गिद्धी, किसो, किसाणू, किसरा, किच्छं, तिप्पं, किसिओ, निवो।

■ त्व, थ्व, द्व, ध्व को कहीं पर क्रमशः च, छ, ज और झ होता है।

⊙ पिच्छी (पृथ्वी—पृथ्वी)
पृथ्वी + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'त्व-थ्व-द्व-ध्वां चछजझाः क्वचित्' (36) से थ्व् को छ्
'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व
'द्वितीय....' (14) से छ् को च्
इकार उच्चारण के लिए
'अन्त्य ....' (42) से स् का लोप

⊙ भिऊ (भृगुः—ऋषि का नाम)
भृगु + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'क-ग-च-ज....' (17) से ग् का लोप
शेष विण्हू की तरह

⊙ भिंगो (भृङ्गः—भ्रमर)
भृङ्ग + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'ङञणनो ....' (33) से ङ् को अनुस्वार
शेष सरो की तरह

⊙ भिंगारो (भृङ्गारः—झारी)
भृङ्गार + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'ङञणनो....' (33) से ङ् को अनुस्वार
शेष सरो की तरह

⊙ सिङ्ग.ारो (शृङ्गारः—शृंगार)
शृङ्ग.ार + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'शषोः सः' (16) से श् को स्
शेष सरो की तरह

⊙ सिआलो (शृगालः—गीदड)
शृगाल + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'शषोः सः' (16) से श् को स्
शेष सरो की तरह

⊙ घिणा (घृणा—घृणा, नफरत)
घृणा + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
शेष गङ्ग.ा की तरह

⊙ घुसिणं (घुसृणम्—केसर)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

घुसृण + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
शेष कैअवं की तरह

⊙ विद्ध-कई (वृद्धकविः—वृद्धकवि)
वृद्धकवि + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'क-ग-च-ज....' (17) से व् का लोप
शेष पारद्धी की तरह

⊙ इद्धी (ऋद्धिः—ऐश्वर्य)
ऋद्धि + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
शेष सामिद्धी की तरह

⊙ गिद्धी (गृद्धिः—आसक्ति)
गृद्धि + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
शेष सामिद्धी की तरह

⊙ किसो (कृशः—दुर्बल)
कृश + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'शषोः सः' (16) से श् को स्
शेष सरो की तरह

⊙ किसाणू (कृशानुः—अग्नि)
कृशानु + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'नो णः' (28) से न् को ण्
शेष विण्हू की तरह

⊙ किसरा (कृशरा—खिचड़ी)
कृशरा + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'शषोः सः' (16) से श् को स्
शेष गङ्गा की तरह

⊙ किच्छं (कृच्छ्रम्—दुःख, कष्ट)
कृच्छ्र + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'सर्वत्र...' (9) से र् का लोप

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष कैअवं की तरह

⊙ तिप्पं (तृप्तम्—संतुष्ट)

तृप्त + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'क-ग-ट-ड...' (13) से बहुलाधिकार से त् का लोप

'अनादौ....' (6) से प् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

⊙ किसिओ (कृषितः—खींचा हुआ, जोता हुआ)

कृषित + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'शषोः सः' (16) से ष् को स्

'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ निवो (नृपः—राजा)

नृप + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष सरो की तरह

37. त्योऽचैत्ये 2/13

चैत्यवर्जिते त्यस्य चः स्यात्। किच्चा[1], किई, धिई, किवो।

■ चैत्य शब्द को छोड़कर शब्दों के त्य को च होता है।

⊙ किच्चा (कृत्या—कार्य, जादू, महामारी का रोग)

कृत्या + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'त्योऽचैत्ये' (37) से त्य् को च्

'अनादौ....' (6) से च् को द्वित्व

शेष गङ्गा की तरह

⊙ किई (कृतिः—रचना, निर्माण)

कृति + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप

शेष सामिद्धी की तरह

⊙ धिई (धृतिः—धैर्य)

धृति + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

---

[1] सू. 21 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

शेष सामिद्धी की तरह

⊙ किवो (कृपः—अश्वत्थामा का मामा, शरद्वत् ऋषि की सन्तान)

कृप + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष सरो की तरह

38. इः स्वप्नादौ 1/46

स्वप्नादिषु आदेरस्य इत्वं स्यात्। किविणो, किवाणं।

■ स्वप्न आदि शब्दों के आदि अकार को इकार होता है।

⊙ किविणो (कृपणः—गरीब, दयापात्र, अभागा)

कृपण + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'इः स्वप्नादौ' (38) से आदि अ को इ

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष सरो की तरह

⊙ किवाणं (कृपाणम्—तलवार, छुरी)

कृपाण + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष कैअवं की तरह

39. वृश्चिके श्चेर्ञ्चुर्वा 2/16

वृश्चिके सस्वरस्य श्चेः स्थाने ञ्चुरादेशो वा स्यात्। विञ्चुओ, विंचुओ। पक्षे—

■ वृश्चिक शब्द में स्वर सहित श्चि के स्थान में ञ्चु आदेश विकल्प से होता है।

⊙ विञ्चुओ, विंचुओ (देखें सूत्र नं. 7)

40. ह्रस्वात्~ थ्य-श्च-त्स-प्सामनिश्चले 2/21

ह्रस्वात् परेषामेषां छः स्यात् निश्चलं वर्जयित्वा। विच्छिओ, वित्तं, वित्ती, हिअं, वाहित्तं, बिंहिओ, विसी, इसी, विइण्हो। स्पृहा शब्दे-ष्पस्पयोः फः (सू. 32) इति फे प्राप्ते—

■ ह्रस्व से परे थ्य, श्च, त्स और प्स को छकार होता है, निश्चल शब्द को छोड़कर।

⊙ विच्छिओ (वृश्चिकः—बिच्छू)

वृश्चिक + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'ह्रस्वात~ थ्य-श्च-त्स-प्सामनिश्चले' (40) से श्च् को छ्

'अनादौ .....' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय ....' (14) से छ् को च्

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष सरो की तरह

⊙ वित्तं (वृत्तम्—वृत्ति, चुना हुआ)

वृत्त + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

शेष कैअवं की तरह

⊙ वित्ती (वृत्तिः—आजीविका)

वृत्ति + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

शेष सामिद्धी की तरह

⊙ हिअं (हृतम्—हरण किया हुआ)

हृत + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'क-ग-च-ज ....' (17) से त् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ वाहित्तं (व्याहृतम्—उक्त, कथित)

व्याहृत + सि

'अधो....' (5) से य् का लोप

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से त् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में वाहिअं

⊙ बिंहिओ (बृंहितः—गरजता हुआ)

बृंहित + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ विसी (वृषी—संन्यासी का आसन)

वृषी + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'शषोः सः' (16) से ष् को स्

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य ....' (42) से स् का लोप

⊙ इसी (ऋषिः—मुनि, मंत्र द्रष्टा, संन्यासी)

ऋषि + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'शषोः सः' (16) से ष् को स्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष पारद्धी की तरह

⊙ विइण्हो (वितृष्णः[1] —इच्छा से मुक्त, सन्तुष्ट)

वितृष्ण + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

'सूक्ष्म-श्न.....' (10) से ष्ण् को ण्ह्

शेष सरो की तरह

41. **स्पृहायाम् 2/23**

स्पृहाशब्दे संयुक्तस्य छः स्यात्। छिहा। बाहुलकात् क्वचिद् अन्यदपि—निप्पिहो।

■ स्पृहा शब्द के संयुक्त वर्ण के स्थान पर छकार आदेश होता है। यद्यपि 'ष्प-स्पयोः फः' (32) सूत्र से 'स्प' के स्थान पर 'फ' होना चाहिए था, पर यह सूत्र उसका अपवाद है।

⊙ छिहा (स्पृहा—इच्छा)

स्पृहा + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'ष्पस्पयोः फः' (32) से स्प् को फ् की प्राप्ति किन्तु

'स्पृहायाम्' (41) से स्प् को छ्

शेष गङ्गा की तरह

बहुलाधिकार के कारण कहीं पर स्प को छकार आदेश नहीं भी होता है। यथा—

⊙ निप्पिहो (निस्पृहः—कामनाशून्य, संतुष्ट)

निस्पृह + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'क-ग-ट-ड....' (13) से स् का लोप

'अनादौ ....' (6) से प् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

42. **अन्त्यव्यञ्जनस्य 1/11**

शब्दानां यदन्त्यव्यञ्जनं तस्य लुक् स्यात्। सइ, उक्किट्ठं, निसंसो, इति कृपादिगणः। नडो[1], भडो, घडो, घडइ। स्वरादितिकिम्? घंटा। असंयुक्तस्येति किम्? खट्टा। अनादेरिति किम्? टक्को। टो डः इति टस्य डः क्वचिन्न अटइ।

अथ[2] प्रत्यादि गणः—पडिवन्नं, पडिहासो, पडिहारो, पाडिप्फद्धी, पडिसारो, पडिनिअत्तं, पडिमा, पडिवया, पडंसुआ, पडिकरइ।

■ शब्दों का जो अंतिम व्यञ्जन होता है, उसका प्राकृत में लोप हो जाता है।

⊙ सइ (सकृत्—एक बार)

सकृत्—यह अव्यय है

[1] विगता तृष्णा यस्य सः वितृष्णः।

[1] सू. 22 की वृत्ति का शेषांश।

[2] सू. 23 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'इत्कृपादौ' (21) ऋ को इ
'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप
'अन्त्य.....' (42) से त् का लोप

⊙ उक्किट्ठं (उत्कृष्टम्—उत्तम)

उत्कृष्ट + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'क-ग-ट-ड.....' (13) से त् का लोप
'ष्टस्या ....' (34) से ष्ट् को ठ्
'अनादौ....' (6) से क् तथा ठ् को द्वित्व
'द्वितीय ......' (14) से ठ् को ट्
शेष कैअवं की तरह

⊙ निसंसो (नृशंसः—क्रूर, निर्दयी)

नृशंस + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'शषोः सः' (16) से श् को स्
शेष सरो की तरह

⊙ नडो (नटः—नट, नाटक करने वाला)

नट + सि
'टो डः' (22) से ट् को ड्
शेष सरो की तरह

⊙ भडो (भटः—योद्धा)

भट + सि
'टो डः' (22) से ट् को ड्
शेष सरो की तरह

⊙ घडो (घटः—घडा)

घट + सि
'टो डः' (22) से ट् को ड्
शेष सरो की तरह

⊙ घडइ (घटते—चेष्टा करता है)

घट् + ते
'टो डः' (22) से ट् को ड्
'व्यञ्जनाददन्ते' (638) से धातु के अन्त में अकार का आगम
घड् अ + ते
'त्यादीनामाद्यत्रयस्याद्यस्येचेचौ' (617) से ते के स्थान पर इच्
च् अनुबन्ध जाने पर
'अज्झीनं परेण संयोज्यम्' इस न्याय से मिलाने पर
घड + इ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

वर्ण-सम्मेलन करने पर घडइ रूप सिद्ध हुआ।

स्वर से परे ट को ड ऐसा क्यों?

⊙ घंटा (घंटा—घंटी)

घंटा + सि

शेष गङ्गा की तरह

यहां टकार स्वर से परे नहीं होने से ट को ड नहीं हुआ है।

असंयुक्त में ऐसा क्यों?

⊙ खट्टा (खट्वा—खाट, सोफा)

खट्वा + सि

'सर्वत्र ल-ब-रामवन्द्रे' (9) से व् का लोप

'अनादौ ....' (6) से ट् को द्वित्व

शेष गङ्गा की तरह

यहां संयोग परे होने पर ट को ड नहीं हुआ है।

अनादि में ऐसा क्यों?

⊙ टक्को (टक्कः—देश-विशेष)

टक्क + सि

शेष सरो की तरह

यहां आदि में ट होने से उसे ड नहीं हुआ है।

बहुलाधिकार के कारण कहीं पर ट को ड नहीं भी होता है। यथा—

⊙ अटइ (अटति—भ्रमण करता है)

अट् + तिप्

'व्यञ्जनाददन्ते' (638) से धातु के अन्त में अकार का आगम

'त्यादीना....' (617) से तिप् के स्थान पर इच्

च् अनुबन्ध जाने पर

'अज्झीनं परेण संयोज्यम्' इस न्याय से मिलाने पर तथा वर्ण-सम्मेलन करने पर अटइ रूप सिद्ध हुआ।

⊙ पडिवन्नं (प्रतिपन्नम्—स्वीकृत)

प्रतिपन्न + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष कैअवं की तरह

⊙ पडिहासो (प्रतिभासः—आभास होना)

प्रतिभास + सि

'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप

'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'ख-घ-थ-ध-भाम्' (30) से भ् को ह्

शेष सरो की तरह

⊙ पडिहारो (प्रतिहारः—द्वारपाल)

प्रतिहार + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्

शेष सरो की तरह

⊙ पाडिप्फद्धी (देखें सू. 32)

⊙ पडिसारो (प्रतिसारः—सजावट, विनाश)

प्रतिसार + सि

'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप

'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्

शेष सरो की तरह

⊙ पडिनिअत्तं (प्रतिनिवृत्तम्—पीछे लौटा हुआ)

प्रतिनिवृत्त + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'प्रत्यादौ डः (23) से त् को ड्

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ

'क-ग-च-ज....' (17) से व् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ पडिमा (प्रतिमा—मूर्ति, प्रतिबिम्ब)

प्रतिमा + सि

'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप

'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्

शेष गङ्गा की तरह

⊙ पडिवया (प्रतिपदा—एकम, पक्ष की पहली तिथि)

प्रतिपदा + सि

'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप

'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्

'पो वः' (24) से प् को व्

'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप

'अवर्णो ....' (19) से य श्रुति

शेष गङ्गा की तरह

⊙ पडंसुआ (प्रतिश्रुत्—प्रतिध्वनि, प्रतिज्ञा)

प्रतिश्रुत् + सि

'सर्वत्र ....' (9) से दोनों र् का लोप

'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'पथि-पृथिवी-प्रतिश्रुन्मूषिक-हरिद्रा-बिभीतकेष्वत्' (44) से इ को अ
'वक्रादावन्तः' (29) से अनुस्वार का आगम
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'स्त्रियामादविद्युतः' (564) से अन्त्यव्यञ्जन त् को आ
शेष गङ्गा की तरह

⊙ पडिकरइ (प्रतिकरोति—प्रतिकार करता है)
प्रति कृ तिप् (प्रति उपसर्गपूर्वक कृ धातु)
'सर्वत्र...' (9) से र् का लोप
'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्
'ऋवर्णस्यारः' (660) से धातु के ऋकार को अर्
'व्यञ्जना....' (638) से अकार का आगम
पडि क् अर् अ तिप्
शेष अटइ की तरह

43. **उदृत्वादौ 1/131**

ऋतु इत्यादिषु आदे ऋत उत् स्यात्। पहुडि, पाहुडं, वावडो, पडाया।

■ ऋतु आदि शब्दों के आदि ऋकार को उकार होता है।

⊙ पहुडि (प्रभृति—इत्यादि, वगैरह)
प्रभृति—यह अव्यय है
'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'उदृत्वादौ' (43) से ऋ के उ
'खघथधभाम्' (30) से भ् को ह्
'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्

⊙ पाहुडं (प्राभृतम्—उपहार)
प्राभृत + सि
'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप
'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ
'ख-घ-थ...' (30) से भ् को ह्
'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्
शेष कैअवं की तरह

⊙ वावडो (व्यापृतः—किसी कार्य में लगा हुआ)
व्यापृत + सि
'अधो.....' (5) से य् का लोप
'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ
'पो वः' (24) से प् को व्
'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्
शेष सरो की तरह

⊙ पडाया (पताका—ध्वज)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

पताका + सि

'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

'अवर्णो ....' (19) से य श्रुति

शेष गङ्गा की तरह

44. **पथि-पृथिवी-प्रतिश्रुन्मूषिक-हरिद्रा-बिभीतकेष्वत् 1/88**

एषु आदेरितोकारः स्यात्। इत्यनेनात्वे।

■ पथिन्, पृथिवी, प्रतिश्रुत्, मूषिक, हरिद्रा और बिभीतक इन शब्दों के आदि इकार को अकार होता है।

45. **एत् पीयूषापीड-बिभीतक-कीदृशेदृशे 1/105**

एषु ईत एत्वं स्यात्। बहेडओ।

■ पीयूष, आपीड, बिभीतक, कीदृश और इदृश इन शब्दों के ईकार को एकार होता है।

⊙ बहेडओ (बिभीतकः—बहेडा)

बिभीतक + सि

'पथि-पृथिवी....' (44) से इ को अ

'एत् पीयूषापीड-बिभीतक-कीदृशेदृशे' (45) से ई को ए

'खघथधभाम्' (30) से भ् को ह्

'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

46. **हरीतक्यामीतोत् 1/99**

हरीतकीशब्दे आदेरीकारस्य अत् स्यात्। हरडई, मडयं। इत्यादि प्रत्यादिगणः।

आर्षे—दुक्कडं, सुयडं, आहडं, अवहडं, इत्यादि। बाहुलकात् पइसमयं, पईवं, संपइ, पइट्ठाणं, पइट्ठा।

■ हरीतकी शब्द के आदि ईकार को अकार होता है।

⊙ हरडई (हरीतकी—हरड़)

हरीतकी + सि

'हरीतक्यामीतोत्' (46) से ई को अ

'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य ....' (42) से स् का लोप

⊙ मडयं (मृतकम्—मरा हुआ)

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ

'प्रत्यादौ डः' (23) से त् को ड्

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

'अवर्णो ....' (19) से य श्रुति

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष कैअवं की तरह

- ■ आर्ष प्राकृत में भी तकार के स्थान में डकार के प्रयोग देखे जाते हैं। यथा—
- • दुक्कडं (दुष्कृतम्—पाप कर्म, निन्द्य आचरण)
- • सुयडं (सुकृतम्—प्रशंसनीय आचरण)
- • आहडं (आहृतम्—छीन लिया हुआ, चोरी किया हुआ)
- • अवहडं (अवहृतम्—छीना हुआ)

बहुलाधिकार के कारण कहीं-कहीं त को ड नहीं भी होता है। यथा—

⊙ पइसमयं (प्रतिसमयम्—प्रत्येक समय)

प्रतिसमय + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ पईवं (प्रतीपम्—प्रतिकूल)

प्रतीप + सि

'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष कैअवं की तरह

⊙ संपइ (संप्रति—इस समय, अधुना)

संप्रति—यह अव्यय है

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'क-ग-च....' (17) से त् का लोप

⊙ पइट्ठाणं (प्रतिष्ठानम्—स्थिति, आधार)

प्रतिष्ठान + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप

'क-ग-ट....' (13) से ष् का लोप

'अनादौ ....' (6) से ठ् को द्वित्व

'द्वितीय....' (14) से ठ् को ट्

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष कैअवं की तरह

⊙ पइट्ठा (प्रतिष्ठा—आदर, सम्मान)

प्रतिष्ठा + सि

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

'क-ग-ट-ड....' (13) से ष् का लोप

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'अनादौ....' (6) से ठ् को द्वित्व
'द्वितीय....' (14) से ठ् को ट्
शेष गङ्गा की तरह

47. **म्नज्ञोर्णः 2/42**

अनयोर्णः स्यात्। पइण्णा।

सवहो[1], सावो, उवसग्गो, पईवो, कासवो, पावं, उवमा, कविलं, कुणवं, कलावो, कवालं, महिवालो, गोवई, तवइ। स्वरादिति किम्? कम्पइ। असंयुक्तस्य इति किम्? अप्पमत्तो। अनादेरितिकिम्? सुहेण पढइ। प्राय इति वचनात् कई, रिऊ, अत्र पस्य वत्वं न। पोवः (सू. 24) इत्यनेन वकारः, कगचज (सू. 17) इत्यनेन लोपः प्राप्तश्च, यस्मिन् कृते श्रुतिसुखमुत्पद्यते स कार्यः।

दृशः[2] क्विपि सरिरूवो, टकि च सरिसो। सकि च सरिच्छो। एवं एआरिसो, भवारिसो, जारिसो, तारिसो, केरिसो, एरिसो, अन्नारिसो, अम्हारिसो, तुम्हारिसो। टक्-सक्-सहचर एव क्विबिह गृह्यते।

क्षस्य[3] खे-खओ, लक्खणं। क्वचित् तु छझावपि खीणं, छीणं, झीणं।

अक्ष्यादिगणो[4] यथा—

अच्छिं, उच्छू, लच्छी, कच्छो।

■ प्राकृत में म्न और ज्ञ को णकार होता है।

⊙ पइण्णा (प्रतिज्ञा—प्रतिज्ञा)
प्रतिज्ञा + सि
'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप
'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप
'म्नज्ञोर्णः' (47) से ज्ञ् को ण्
'अनादौ....' (6) से ण् को द्वित्व
शेष गङ्गा की तरह

⊙ सवहो (शपथः—सौगन्ध)
शपथ + सि
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'पो वः' (24) से प् को व्
'ख-घ-थ.....' (30) से थ् को ह्
शेष सरो की तरह

⊙ सावो (शापः—सराप, आक्रोश)
शाप + सि

---

[1] सू. 24 की वृत्ति का शेषांश।
[2] सू. 25 की वृत्ति का शेषांश।
[3] सू. 26 की वृत्ति का शेषांश।
[4] सू. 27 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'शषोः सः' (16) से श् को स्
'पो वः' (24) से प् को व्
शेष सरो की तरह

⊙ उवसग्गो (उपसर्गः—उपद्रव, बाधा)
उपसर्ग + सि
'पो वः' (24) से प् को व्
'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप
'अनादौ.....' (6) से ग् को द्वित्व
शेष सरो की तरह

⊙ पईवो (प्रदीपः—दीपक)
प्रदीप + सि
'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप
'पो वः' (24) से प् को व्
शेष सरो की तरह

⊙ कासवो (कश्यपः—मदिरासेवी)
कश्यप + सि
'अधो...' (5) से य् का लोप
'लुप्त ....' (15) से अ को दीर्घ
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'पो वः' (24) से प् को व्
शेष सरो की तरह

⊙ पावं (देखें सू. 19)

⊙ उवमा (उपमा—सादृश्य)
उपमा + सि
'पो वः' (24) से प् को व्
शेष गङ्गा की तरह

⊙ कविलं (कपिलम्—भूरा रंग)
कपिल + सि
'पो वः' (24) से प् को व्
शेष कैअवं की तरह

⊙ कुणवं (कुणपम्—मृतशरीर)
कुणप + सि
'पो वः' (24) से प् को व्
शेष कैअवं की तरह

⊙ कलावो (कलापः—समूह, जत्था)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

कलाप + सि

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष सरो की तरह

⊙ कवालं (कपालम्—खोपड़ी)

कपाल + सि

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष कैअवं की तरह

⊙ महिवालो (महिपालः—राजा)

महिपाल + सि

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष सरो की तरह

⊙ गोवई (गोपतिः—गौओं का स्वामी)

गोपति + सि

'पो वः' (24) से प् को व्

'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप

शेष पारद्धी की तरह

⊙ तवइ (तपति—सन्तप्त होता है)

तप् + तिप्

'व्यञ्जना ....' (638) से अकार का आगम

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष अटइ की तरह

स्वर से परे ही प को व ऐसा क्यों?

⊙ कम्पइ (कम्पते—कांपता है)

कम्प् + ते

'व्यञ्जना....' (638) से अ का आगम

शेष घडइ की तरह

यहां पकार स्वर से परे नहीं होने से उसे वकार आदेश नहीं हुआ है।

असंयुक्त में ऐसा क्यो?

⊙ अप्पमत्तो (अप्रमत्तः—प्रमाद से रहित)

अप्रमत्तः + सि

'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप

'अनादौ......' (6) से प् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

यहां संयोग होने से प को व नहीं हुआ है।

अनादि में ऐसा क्यों?

⊙ सुहेण पढइ (सुखेन पठति—सुख से पढ़ता है)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

सुहेण

सुख + टा

'ख-घ-थ.....' (30) से ख् को ह्

'टा-आमोर्णः' (401) से टा को ण

'टाण-शस्येत्' (400) से अ को ए

वर्ण सम्मेलन करने पर

पढइ

पठ् + तिप्

'ठो ढः' (82) से ठ् को ढ्

'व्यंञ्जना....' (638) से अ का आगम

शेष अटइ की तरह

■ 'पो वः' सूत्र में प्रायः पद का ग्रहण होने से कहीं पर स्वर से परे, अनादि तथा असंयुक्त प को भी व नहीं होता है। यथा—

⊙ कई (कपिः—बंदर)

कपि + सि

'क-ग-च-ज.....' (17) से प् का लोप

शेष पारद्धी की तरह

⊙ रिऊ (रिपुः—शत्रु)

रिपु + सि

'क-ग-च-ज....' (17) से प् का लोप

शेष विण्हू की तरह

■ यहां प्रश्न होता है कि जहां 'क-ग-च-ज....' सूत्र से पकार के लोप की प्राप्ति हो तथा साथ ही 'पो वः' सूत्र से पकार को वकार की स्थिति बनती हो तो वहां इन दोनों कार्यों में से कौन सा कार्य करना चाहिए? प को व करना चाहिए या प का लोप करना चाहिए? तब समाधान में वृत्तिकार कहते हैं—'यस्मिन् कृते श्रुतिसुखमुत्पद्यते स कार्यः'[1] यानि दोनों में से जिस कार्य को करने से सुनने में आनन्द आता हो, श्रुतिसुख (कर्णप्रिय) उत्पन्न होता हो, वह कार्य कर लेना चाहिए।

⊙ सरिरूवो (सदृक्रूपः[2] —जिसका रूप समान हो)

सदृक्रूपः + सि

'दृशेः क्विप्-टक्-सकः' (25) से ऋ को रि आदेश

'क-ग-ट-ड......' (13) से द् का लोप

'अन्त्य......' (42) से क् का लोप

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष सरो की तरह

⊙ सरिच्छो (देखें सू. 27)

[1] तुलसी मञ्जरी पृष्ठ 49

[2] सदृग् रूपं यस्य स सदृग्रूपः।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ सरिसो (सदृशः—समान)

⊙ एआरिसो (एतादृशः—ऐसा)

⊙ भवारिसो (भवादृशः—आप जैसा)

⊙ जारिसो (यादृशः—जैसा)

⊙ तारिसो (तादृशः—वैसा)

⊙ केरिसो (कीदृशः—कैसा)

⊙ एरिसो (ईदृशः—ऐसा)

⊙ अन्नारिसो (अन्यादृशः—दूसरों जैसा)

⊙ अम्हारिसो (अस्मादृशः—हमारे जैसा)

इन सभी रूपों में—
'दृशेः......' (25) से ऋ को रि
'क-ग-ट-ड....' (13) से द् को लोप
'शषोः सः' (16) से श् को स्
शेष सरो की तरह

इसके अलावा—
एआरिसो में 'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप
जारिसो में 'आदेर्यो जः' (73) से य् को ज्
केरिसो, एरिसो में 'एत् पीयूषापीड....' (45) से ई को ए
अन्नारिसो में 'अधो....' (5) से य् का लोप तथा 'अनादौ....' (6) से द्वित्व
अम्हारिसो में 'पक्ष्म-श्म-ष्म-ह्मां म्हः' (118) से स्म् को म्ह्)

⊙ तुम्हारिसो (युष्मादृशः—तुम्हारे जैसा)

युष्मादृश + सि
'युष्मद्यर्थपरे तः' (579) से त् को य्
'पक्ष्म-श्म....' (118) से ष्म् को म्ह्
'दृशेः....' (25) से ऋ को रि
'क-ग-ट-ड....' (13) से द् का लोप
'शषोः सः' (16) से श् को स्
शेष सरो की तरह

■ टक्, सक् के साथ आने वाले क्विप् का ही यहां ग्रहण करना चाहिए।[1]

⊙ खओ (क्षयः—नाश)

क्षय + सि
'क्षः खः....' (26) से क्ष् को ख्
'क-ग-च-ज....' (17) से य् का लोप

---

[1] क्विप् प्रत्यय स्वतंत्र रूप से भी आता है। त्यद्, तद्, यद्, अदस्, इदम्, एतद्, एक, द्वि, युष्मद्, अस्मद्, भवतु, किम्—इन सर्वनाम शब्दों के बाद आनेवाली दृश धातु से होने वाले टक्, सक् के साथ भी क्विप् प्रत्यय होता है। यहां पर टक्, सक् के साथ होने वाले क्विप् का ही ग्रहण है, स्वतंत्र रूप से होने वाले क्विप् का नहीं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष सरो की तरह

⊙ लक्खणं (लक्षणम्—कारण, हेतु)

लक्षण + सि

'क्षः खः......' (26) से क्ष् को ख्

'अनादौ.....' (6) से ख् को द्वित्व

'द्वितीय......' (14) से ख् को क्

शेष कैअवं की तरह

⊙ खीणं, छीणं, झीणं (क्षीणम्—नष्ट)

क्षीण + सि

'क्षः खः....' (26) से क्ष् को क्रमशः ख्, छ् तथा झ्

शेष कैअवं की तरह

⊙ अच्छिं (अक्षि—आंख)

अक्षि + सि

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्

'अनादौ .....' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय......' (14) से छ् को च्

शेष कैअवं की तरह

⊙ उच्छू (इक्षुः—ईख)

इक्षु + सि

'प्रवासीक्षौ' (31) से इ को उ

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्

'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से छ् को च्

शेष विण्हू की तरह

⊙ लच्छी (लक्ष्मीः—सम्पत्ति, धन)

लक्ष्मी + सि

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष्म् को छ्

'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से छ् को च्

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप

⊙ कच्छो (कक्षः—कांख)

कक्ष + सि

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्

'अनादौ......' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय ......' (14) से छ् को च्

शेष सरो की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

48. **ई: क्षुते 1/112**

क्षुतशब्दे आदेरुत ईत्वं स्यात्। छीअं, छीरं, सरिच्छो, वच्छो, मच्छिआ, छेत्तं, छुहा, दच्छो, कुच्छी, वच्छं, छुण्णो, कच्छा, छारो।

■ क्षुत शब्द में आदि उकार को ईकार होता है।

⊙ छीअं (क्षुतम्—छींक)

क्षुत + सि

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्

'ई: क्षुते' (48) से उ को ई

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ छीरं (क्षीरम्—दूध)

क्षीर + सि

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् से छ्

शेष कैअवं की तरह

⊙ सरिच्छो (देखें सू. 27)

⊙ वच्छो (वृक्षः—पेड़, द्रुम)

वृक्ष + सि

'ऋतोत्' (35) ऋ को अ

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्

'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से छ् को च्

शेष सरो की तरह

⊙ मच्छिआ (मक्षिका—मक्खी)

मक्षिका + सि

'छोऽक्ष्यादौ....' (27) से क्ष् को छ्

'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से छ् को च्

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष गङ्गा की तरह

⊙ छेत्तं (क्षेत्रम्—आकाश, खेत)

क्षेत्र + सि

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'अनादौ....' (6) से त् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

⊙ छुआ (क्षुधा—बुभुक्षा)

क्षुध् + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्
'क्षुधो हा' (237) से अन्त्य व्यञ्जन ध् को हा
शेष गङ्गा की तरह

⊙ दच्छो (दक्षः—निपुण, चतुर)
दक्ष + सि
'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्
'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व
'द्वितीय ....' (14) से छ् को च्
शेष सरो की तरह

⊙ कुच्छी (कुक्षिः—पेट)
कुक्षि + सि
'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्
'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व
'द्वितीय.....' (14) से छ् को च्
शेष सामिद्धी की तरह

⊙ वच्छं (वक्षः—छाती)
वक्षस् + सि
'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्
'अनादौ .....' (6) से छ् को द्वित्व
'द्वितीय.....' (14) से छ् को च्
'अन्त्य....' (42) से स् का लोप
शेष कैअवं की तरह

⊙ छुण्णो (क्षुण्णः—चूर-चूर किया हुआ, विनाशित)

⊙ छारो (क्षारः—खारा, लवण, भस्म)—
इन दोनों रूपों में—
'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्
शेष सरो की तरह

⊙ कच्छा (कक्षा—विभाग)
कक्षा + सि
'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्
'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व
'द्वितीय.....' (14) से छ् को च्
शेष गङ्गा की तरह

49. **औत ओत् 1/159**

औकारस्यादेरोत् स्यात्। कोच्छेअयं, छुरो, उच्छा, छयं, सारिच्छं। क्वचित् स्थगितशब्देपि छइअं। आर्षे—इक्खू, खीरं, सारिक्खं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

अथ[1] वक्रादिः—वंकं, तंसं, अंसुं।

■ शब्द के आदि औकार को ओकार होता है।

⊙ कोच्छेअयं (कौक्षेयकम्—पेट पर बंधी तलवार)

कौक्षेयक + सि

'औत ओत्' (49) औ को ओ

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्

'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय .....' (14) से छ् को च्

'क-ग-च-ज....' (17) से य् तथा क् का लोप

'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति

शेष कैअवं की तरह

⊙ छुरो (क्षुरः—छुरा, नापित का अस्त्र, पशु का नख)

क्षुर + सि

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्

शेष सरो की तरह

⊙ उच्छा (उक्षा—बैल)

उक्षन् + सि

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्

'अनादौ.....' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय....' (14) से छ् को च्

'अन्त्य....' (42) से न् का लोप

'पुंस्यन आणो राजवच्च' (466) से अन् अन्त उक्षन् शब्द को राजन् वत्

'राज्ञः' (465) से अ को आ

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

⊙ छयं (क्षतम्—घाव)

क्षत + सि

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष् को छ्

'क-ग-च-ज...' (17) से त् का लोप

'अवर्णो....' (19) से य श्रुति

शेष कैअवं की तरह

⊙ सारिच्छं (सादृक्ष्यम्—समान)

सादृक्ष्य + सि

'दृशेः......' (25) से ऋ को रि

'क-ग-ट-ड....' (13) से द् का लोप

---

[1] सू. 29 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'छोऽक्ष्यादौ' (27) से क्ष्य् को छ्
'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व
'द्वितीय....' (14) से छ् को च्
शेष कैअवं की तरह

कहीं स्थगित शब्द में भी संयुक्त को छकार आदेश होता है। जैसे—

⊙ छइअं (स्थगितम्—रोका हुआ)
स्थगित + सि
'छोऽक्ष्यादौ' (27) से बहुलाधिकार के कारण स्थ् को छ्
'क-ग-च-ज....' (17) से ग् तथा त् का लोप
शेष कैअवं की तरह

■ आर्ष प्राकृत में इक्खू (इक्षुः), खीरं (क्षीरम्), सारिक्खं (सादृक्ष्यम्) आदि रूप भी बन जाते हैं। यहां क्ष को छकार नहीं हुआ है।

⊙ वंकं (वक्रम्—टेढ़ा)
वक्र + सि
'वक्रादावन्त' (29) से प्रथम स्वर के अन्त में अनुस्वार का आगम
'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'अनादौ....' (6) से क् को द्वित्व की प्राप्ति
'न दीर्घानु....' (18) से द्वित्व निषेध
शेष कैअवं की तरह

⊙ तंसं (त्र्यस्रम्—त्रिकोण)
=यस्र + सि
'सर्वत्र....' (9) से दोनों र् का लोप
'अधो...' (5) से य् का लोप
'वक्रादावन्तः' (29) से अनुस्वार
'अनादौ .....' (6) से स् को द्वित्व की प्राप्ति
'न दीर्घानु....' (18) से द्वित्व निषेध
शेष कैअवं की तरह

⊙ अंसुं (अश्रु—आँसु)
अश्रु + सि
'वक्रादावन्तः....' (29) से अनुस्वार
'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'अनादौ....' (6) से स् को द्वित्व की प्राप्ति
'न दीर्घानु....' (18) से द्वित्व निषेध
शेष कैअवं की तरह

50. **आदेः श्मश्रुश्मशाने 2/86**

अनयोरादेर्लुक् स्यात्। मंसू, पुंछं, गुंछं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

■ श्मश्रु और श्मशान शब्द में आदि व्यञ्जन का लुक् होता है।

⊙ मंसू (श्मश्रुः—दाढी, मूंछ)

श्मश्रु + सि

'आदेः श्मश्रुश्मशाने' (50) से आदि श् का लुक्

'वक्रादा....' (29) से अनुस्वार

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'अनादौ.....' (6) स् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु.....' (18) से द्वित्व निषेध

शेष विण्हू की तरह

⊙ पुंछं (पुच्छम्—पूंछ)

गुंछं (गुच्छम्—फलों का गुच्छा)

इन दोनों रूपों में—

'वक्रादा.....' (29) से अनुस्वार

'निमित्ताभावे नैमित्तिकस्याप्यभावः' इस न्याय से नैमित्तिक च् का अभाव होने पर

शेष कैअवं की तरह

51. **श्रद्धर्द्धिमूर्धाऽर्धेन्ते वा 2/41**

एषु अन्ते वर्तमानस्य संयुक्तस्य ढो वा स्यात्। मुंढा, पंसू, बुंधं, कंकोडो।

■ श्रद्धा, ऋद्धि, मूर्धन् और अर्ध इन शब्दों के अंत में रहे हुये संयुक्त वर्ण को विकल्प से ढकार होता है।

⊙ मुंढा (मूर्धा—मस्तक)

मूर्धन् + सि

'Ðस्वः....' (12) से ऊ को उ

'वक्रादा....' (29) से अनुस्वार

'श्रद्धर्द्धिमूर्धाऽर्धेन्ते वा' (51) से संयुक्त को विकल्प से ढ्

'अनादौ....' (6) से ढ् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु.......' (18) से द्वित्व का निषेध

'अन्त्य....' (42) से न् का लोप

शेष उच्छा की तरह

पक्ष में ढ़कार का अभाव होने पर—

'Ðस्वः....' (12) से ऊ को उ

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'अनादौ.....' (6) से ध् को द्वित्व

'द्वितीय....' (14) से ध् को द्

'अन्त्य....' (42) से न् का लोप

शेष उच्छा की तरह करने पर मुद्धा बनेगा।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ पंसू (पर्शुः—कुठार, फरसा)

पर्शु + सि

'वक्रादा.....' (29) से अनुस्वार

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'अनादौ....' (6) से स् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु...' (18) से द्वित्व निषेध

शेष विण्हू की तरह

⊙ बुंधं (बुघ्नम्—सबसे नीचे का भाग)

बुघ्न + सि

'वक्रादा.....' (29) से अनुस्वार

'अधो....' (5) से न् का लोप

'अनादौ.....' (6) से ध् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु...' (18) से द्वित्व का निषेध

'गुणाद्याः क्लीबे वा' (614) से पुल्लिंग बुघ्न शब्द का नपुंसक लिंग में प्रयोग

शेष कैअवं की तरह

⊙ कंकोडो (कर्कोटः—सांप की एक जाति)

कर्कोट + सि

'वक्रादा.....' (29) से अनुस्वार

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'टो डः' (22) से ट् को ड्

'अनादौ.....' (6) से क् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु.....' (18) से द्वित्व का निषेध

शेष सरो की तरह

52. **ड्मक्मोः 2/52**

अनयोः पः स्यात्। कुंपलं, दंसणं, विंछिओ, गिंठी, मंजारो एष्वाद्यस्य स्वरस्य अन्ते आगमरूपोऽनुस्वारः जातः।

वयंसो, मणंसी, मणंसिणी, मणंसिला, पडंसुआ—एषु द्वितीयस्य स्वरस्य। उवरिं, अइमुंतयं—अत्र तृतीयस्य स्वरस्य। क्वचिद् छन्दः पूरणेऽपि—देवंनागसुवण्ण। क्वचिन्न स्यात् गिट्ठी, मज्जारो मणसिला, मणासिला। आर्षे मणोसिला, अइमुत्तयं। इति वक्रादिः। साहा[1], मेहो, नाहो, साहू, सहा। स्वरादिति किम्? संखो, संघो, कंथा, बंधो, दंभो। असंयुक्तस्येति किं? अक्खइ। अनादेरिति किं? गज्जंते खे मेहा। बाहुलकात् तिलखलो, पलयघणो, जिणधम्मो। पुप्फं[2], फंदणं। बाहुलकात् क्वचिद् विकल्पः।

■ ड्म और क्म को प होता है।

---

[1] सू. 30 की वृत्ति का शेषांश।

[2] सू. 32 की वृत्ति का शेषांश।

⊙ कुंपलं, कुम्पलं (कुड्मलम्—कली)

कुड्मल + सि

'वक्रादा.....' (29) से अनुस्वार

'ड्मक्मोः' (52) से ड्म् को प्

'अनादौ....' (6) प् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु.....' (18) से द्वित्व का निषेध

शेष कैअवं की तरह

('वर्गेन्त्यो वा' (245) से विकल्प से अनुस्वार को म् करने पर कुम्पलं रूप भी बनता है।)

⊙ दंसणं (दर्शनम्—अवलोकन, निरीक्षण, सम्यक्त्व)

दर्शन + सि

'वक्रादा ....' (29) से अनुस्वार

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'अनादौ.....' (6) से स् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु....' (18) से द्वित्व निषेध

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष कैअवं की तरह

⊙ विंछिओ (वृश्चिकः—बिच्छू)

वृश्चिक + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'वक्रादा....' (29) से अनुस्वार

'वृश्चिके....' (39) से श्चि को विकल्प से ञ्चु की प्राप्ति

'ह्रस्वात्.....' (40) से श्च् को छ्

'अनादौ.....' (6) से द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु.....' (18) से द्वित्व का निषेध

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ गिंठी (देखें सू. 35), गिट्ठी

जहां अनुस्वार का आगम बहुलाधिकार के कारण नहीं होगा वहां 'अनादौ....' (सू. 6) से ठ् को द्वित्व तथा 'द्वितीय....' (14) से ठ् को ट् करने पर गिट्ठी रूप बनेगा।

⊙ मंजारो, मज्जारो (मार्जारः—बिलाव)

मार्जार + सि

'ह्रस्वः....' (12) से आ को अ

'वक्रादा.....' (29) से अनुस्वार

'सर्वत्र......' (9) से र् का लोप

'अनादौ......' (6) से द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु.......' (18) से द्वित्व का निषेध

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष सरो की तरह

जहां अनुस्वार का आगम बहुलाधिकार के कारण नहीं करेंगे वहां 'अनादौ...' (6) से ज् को द्वित्व करने पर मज्जारो रूप बनेगा।

इन शब्दों में आदि स्वर के अंत में अनुस्वार का आगम किया गया है।

⊙ वयंसो (वयस्यः—समान उम्र वाला मित्र)

वयस्य + सि

'अधो......' (5) से य् का लोप

'वक्रादा......' (29) से अनुस्वार का आगम

'अनादौ.....' (6) से स् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु....' (18) से द्वित्व का निषेध

शेष सरो की तरह

⊙ मणंसी (देखें सू. 29)

⊙ मणंसिणी (मनस्विनी—प्रशस्त मन वाली, बुद्धि वाली)

मनस्विनी + सि

'नो णः' (28) से दोनों न् को ण्

'वक्रादा.....' (29) से अनुस्वार

'सर्वत्र ......' (9) से व् का लोप

'अनादौ.....' (6) से स् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु....' (18) से द्वित्व का निषेध

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप

⊙ मणंसिला (मनःशिला—लाल वर्ण की एक उपधातु, मैनशिल)

मनस्शिला + सि

'नो णः' (28) से न् को ण्

'वक्रादा.....' (29) से अनुस्वार का आगम

'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'अनादौ....' (6) से स् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु....' (18) से द्वित्व का निषेध

शेष गङ्गा की तरह

⊙ पडंसुआ (देखें सू. 42)

इन शब्दों में द्वितीय स्वर के अंत में अनुस्वार का आगम किया गया है।

⊙ उवरिं (उपरि—ऊपर)

उपरि—यह अव्यय है

'पो वः' (24) से प् को व्

'वक्रादावन्तः' (29) से अनुस्वार का आगम

('वोपरौ' (171) से विकल्प से उ को अ करने पर अवरिं रूप भी बनता है।)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ अइमुंतयं (अतिमुक्तकः—एक जैन मुनि का नाम)

अतिमुक्तक + सि

'क-ग-च-ज....' (17) से त् तथा द्वितीय क् का लोप

'वक्रादा.....' (29) से अनुस्वार

'क-ग-ट-ड....' (13) से प्रथम क् का लोप

'अनादौ.....' (6) से त् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु.....' (18) से द्वित्व का निषेध

'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति

'गुणाद्याः......' (614) से पुल्लिंग अतिमुक्तक शब्द का नपुंसक लिंग में प्रयोग

शेष कैअवं की तरह

इन शब्दों में तृतीय स्वर के अंत में अनुस्वार का आगम किया गया है।

■ बहुलाधिकार के कारण कहीं छन्द-पूर्ति के लिए भी अनुस्वार का आगम हो जाता है। यथा—

⊙ देवंनागसुवण्ण (देवनागसुपर्ण—वस्तु-विशेष का नाम)

देवनागसुपर्ण—यह संस्कृत वाक्यांश है

'वक्रादावन्तः' (29) से द्वितीय स्वर के अंत में अनुस्वार

'पो वः' (24) से प् को व्

'सर्वत्र .....' (9) से र् का लोप

'अनादौ ......' (6) से ण् को द्वित्व

बहुलाधिकार के कारण कहीं अनुस्वार का आगम नहीं भी होता है। यथा—

⊙ मणासिला, मणसिला (देखें मणंसिला)

इनमें अंतर इतना ही है कि मणंसिला में 'वक्रादा....' (29) से अनुस्वार का आगम हुआ है जबकि मणासिला में अनुस्वार न होकर 'लुप्त....' (15) से ण को दीर्घ (णा) हुआ है तथा मणसिला में समास है, इसलिए यहां वाक्य की अपेक्षा से स् को अन्त्यत्व मानकर 'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप किया गया है, अतः यहां दीर्घ भी नहीं हुआ है।

■ आर्ष प्राकृत में मणोसिला (मनःशिला), अइमुत्तयं (अतिमुक्तकः) रूप भी बनते हैं।

⊙ साहा (शाखा—वृक्ष की डाल)

⊙ सहा (सभा—परिषद्)

इन दोनों रूपों में—

'ख-घ-थ....' (30) से ख् और भ् को ह्

शेष गङ्गा की तरह

(साहा में 'शषोः सः' (16) से श् को स् हुआ है)

⊙ मेहो (मेघः—जलधर)

⊙ नाहो (नाथः—स्वामी, मालिक)

इन दोनों रूपों में—

'ख-घ-थ.....' (30) से घ् तथा थ् को ह्

शेष सरो की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ साहू (साधुः—मुनि, यति, सज्जन)

साधु + सि

'ख-घ-थ....' (30) से ध् को ह्

शेष विण्हू की तरह

स्वर से परे ऐसा क्यों?

⊙ संखो (शंखः—शंख)

शंख + सि

'शषोः सः' (16) से श् को स्

शेष सरो की तरह

⊙ संघो (सङ्घः—साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविकाओं का समुदाय)

⊙ बंधो (बन्धः—बन्धन, कर्म-पुद्गलों का जीव-प्रदेशों के साथ दूध-पानी की तरह मिलना)

इन दोनों रूपों में—

'ङञणनो....' (33) से ङ् और न् को अनुस्वार

शेष सरो की तरह

⊙ कंथा (कन्था—गुदड़ी, पुराने वस्त्रों से बना हुआ ओढ़ना)

कन्था + सि

'ङञणनो.....' (33) से न् को अनुस्वार

शेष गङ्गा की तरह

⊙ दंभो (दम्भः—माया, कपट)

दम्भ + सि

'मोनुस्वारः' (399) से कहीं अनन्त्य में भी म् को अनुस्वार करने पर

शेष सरो की तरह

■ इन शब्दों में व्यञ्जन का व्यवधान आने से ख, घ आदि को ह नहीं हुआ।

असंयुक्त में ऐसा क्यों?

अक्खइ (आख्याति—कहता है) आ उपसर्गपूर्वक ख्यांक् धातु

आख्या + तिप्

'Đस्व....' (12) से आ को अ

'अधो......' (5) से य् का लोप

'अनादौ.....' (6) से ख् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से ख् को क्

'स्वराणां स्वराः' (646) से आ स्वर के स्थान पर अ

शेष अटइ की तरह

यहां संयोग होने से ख को ह नहीं हुआ।

अनादि में ऐसा क्यों?

⊙ गज्जंते खे मेहा (गर्जन्ति खे मेघाः—आकाश में बादल गरजते हैं)

⊙ गज्जंते

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

गर्ज् + अन्ति

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'अनादौ.....' (6) से ज् को द्वित्व

'व्यञ्जना.....' (638) से धातु के अंत में अकार का आगम

'बहुष्वाद्यस्य न्ति न्ते इरे' (621) से अन्ति को न्ते

वर्ण-सम्मेलन करने पर

'ङञणनो.....' (33) से न् को अनुस्वार

⊙ खे

ख + ङि

'डे म्मि ङेः' (409) से ङि को डे

'डित्यन्त्यस्वरादेः' (हेम. 2/1/114) से अंतिम स्वर का लोप

ड् अनुबन्ध जाने पर

'अज्झीनं परेण संयोज्यम्' इस न्याय से मिलाने पर

⊙ मेहा

मेघ + जस्

'ख-घ-थ.....' (30) से घ् को ह्

'जश्शसोर्लुक्' (396) से जस् का लुक्

'जश्शस्-ङसि-त्तो-दो-द्वामि दीर्घः' (397) से अ को दीर्घ

यहां ख आदि में होने से उसे ह नहीं हुआ।

■ बहुलाधिकार के कारण कहीं ख, घ आदि को ह नहीं भी होता है। यथा—

⊙ तिलखलो (तिलखलः—तिल की खली)

तिलखल + सि

शेष सरो की तरह

⊙ पलयघणो (प्रलयघनः—प्रलय का मेघ)

⊙ जिणधम्मो (जिनधर्मः—जिनदेव उपदिष्ट जैन धर्म)

इन दोनों रूपों में—

'सर्वत्र....' (9) र् का लोप

शेष सरो की तरह

(जिणधम्मो में 'अनादौ....' (6) से म् को द्वित्व हुआ है)

इनमें घ, ध को ह नहीं हुआ है।

⊙ पुप्फं (पुष्पम्—पुष्प)

पुष्प + सि

'ष्प-स्पयोःफः' (32) से ष्प् को फ्

'अनादौ.....' (6) से फ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से फ् को प्

शेष कैअवं की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ फंदणं (स्पन्दनम्—थोड़ा हिलना, फरकना)

स्पन्दन + सि

'ष्प-स्पयो:फ:' (32) से स्प् को फ्

'ङ्अणनो.....' (33) से न् को अनुस्वार

'नो ण: (28) से न् को ण्

शेष कैअवं की तरह

53. **वा बृहस्पतौ 1/138**

बृहस्पतिशब्दे ऋत इदुतौ वा स्याताम्। बिहप्फई, बिहप्पई, बुहप्फई, बुहप्पई, बहप्फई, बहप्पई। क्वचित् फो न भवति—निप्पहो।

ङ—पंती[1] , ञ—कंचुओ।

■ बृहस्पति शब्द में ऋ को इकार और उकार विकल्प से होता है।

⊙ बिहप्फई, बुहप्फई, बिहप्पई, बुहप्पई (बृहस्पति:[1] —देवताओं के गुरु बृहस्पति ग्रह)

बृहस्पति + सि

'वा बृहस्पतौ' (53)से ऋ को विकल्प से क्रमश: इ, उ

'ष्प-स्पयो:फ:' (32) से स्प् को फ्

'अनादौ.....' (6) से फ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से फ् को प्

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

शेष पारद्धी की तरह

(बिहप्पई, बुहप्पई में 'क-ग-ट....' (13) से स् का लुक् तथा 'अनादौ....' (6) से प् को द्वित्व हुआ है।)

पक्ष में 'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ करने से बहप्फई, बहप्पई

कहीं ष्प को फ नहीं भी होता है। यथा—

⊙ निप्पहो (निष्प्रभ:—जिसमें चमक न हो)

निष्प्रभ + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'क-ग-ट...' (13) से ष् का लुक्

'अनादौ....' (6) से प् को द्वित्व

'ख-घ-थ....' (30) से भ् को ह्

शेष सरो की तरह

⊙ पंती (पङ्क्ति:—कतार)

पङ्क्ति + सि

'ङ्अणनो....' (33) से ङ् को अनुस्वार

'क-ग-ट-ड....' (13) से क् का लुक्

---

[1] सू. 33 की वृत्ति का शेषांश।

[1] बृहतां वाचां पति:।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'अनादौ.....' (6) से त् को द्वित्व की प्राप्ति
'न दीर्घानु.....' (18) से द्वित्व का निषेध
शेष सामिद्धी की तरह

⊙ कंचुओ (कञ्चुकः—कवच, केंचुली, अंगिया)
कञ्चुक + सि
'ङञणनो....' (33) ञ् को अनुस्वार
'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप
शेष सरो की तरह

54. **षट्-शमी-शाव-सुधा-सप्तपर्णेष्वादेश्छः 1/265**
एषु आदेर्वर्णस्य छः स्यात्। ण—छंमुहो, न—आणंदो।
उष्ट्रादिनिषेधात्[1] ठो न—उट्टो, इट्टा, संदट्टो।
किच्चा[2] , पिच्छी, विज्जो, बुज्झा। सच्चं[3], चैत्यनिषेधात् चो न—

■ षट्, शमी, शाव, सुधा और सप्तपर्ण शब्दों में आदि वर्ण को छकार होता है।

⊙ छंमुहो, छम्मुहो (षण्मुखः—कार्तिकेय)
षण्मुख + सि
'षट्-शमी-शाव-सुधा-सप्तपर्णेष्वादेश्छः' (54) से ष् को छ्
'ङञणनो....' (33) से ण् को अनुस्वार
'ख-घ-थ....' (30) से ख् को ह्
शेष सरो की तरह
जहां 'वर्गेन्त्यो वा' (245) से विकल्प से अनुस्वार को म् करेंगे वहां छम्मुहो रूप बनेगा।

⊙ आणंदो (आनन्दः—हर्ष, महावीर के दस मुख्य उपासकों में पहला)
आनन्द + सि
'नो णः (28) से न् को ण्
'ङञणनो....' (33) से न् को अनुस्वार
शेष सरो की तरह

⊙ उट्टो (उष्ट्रः—ऊँट)
उष्ट्र + सि
'क-ग-ट....' (13) से ष् का लोप
'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप
'अनादौ......' (6) से ट् को द्वित्व
शेष सरो की तरह

⊙ इट्टा (इष्टा—ईंट)
इष्टा + सि

---

[1] सू. 34 की वृत्ति का शेषांश।
[2] सू. 36 की वृत्ति का शेषांश।
[3] सू. 37 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'क-ग-ट....' (13) से ष् का लोप
'अनादौ....' (6) से ट् को द्वित्व
शेष गङ्गा की तरह

⊙ संदट्ठो (संदष्टः— जिसको दंश लगा हो, जो काटा गया हो वह)
संदष्ट + सि
'क-ग-ट....' (13) से ष् का लोप
'अनादौ.....' (6) से ट् को द्वित्व
शेष सरो की तरह

⊙ किच्चा (कृत्वा—करके)
कृत्वा—यह अव्यय है
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'त्व-थ्व-द्व....' (36) से त्व् को च्
'अनादौ....' (6) से च् को द्वित्व

⊙ पिच्छी (देखें सू. 36)

⊙ विज्जो (विद्वान्—विद्वान्)
विद्वस् + सि
'त्व-थ्व-द्व.....' (36) से द्व को ज्
'अनादौ....' (6) से ज् को द्वित्व
'अन्त्य....' (42) से स् का लोप
शेष सरो की तरह

⊙ बुज्झा (बुद्ध्वा—बोध प्राप्त करके)
बुद्ध्वा—यह अव्यय है
'क-ग-ट....' (13)से द् का लोप
'त्व-थ्व-द्व-ध्वां....' (36) से ध्व् को झ्
'अनादौ....' (6) से झ् को द्वित्व
'द्वितीय....' (14) झ् को ज्

⊙ सच्चं (सत्यम्—यथार्थ भाषण, सिद्धान्त)
सत्य + सि
'त्योऽचैत्ये' (37) से त्य् को च्
'अनादौ....' (6) से द्वित्व
शेष कैअवं की तरह

55. **अइर्दैत्यादौ च 1/151**

सैन्यशब्दे दैत्यादौ च अइ इत्यादेशः स्यात्। चइत्तं। अथ स्वप्नादि—

■ सैन्य शब्द में तथा दैत्य आदि शब्दों में ऐ को अइ आदेश होता है।

⊙ चइत्तं (चैत्यम्—मन्दिर, देवालय)
चैत्य + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'अइदैत्यादौ च' (55) से ऐ को अइ
'अधो....' (5) से य् का लोप
'अनादौ....' (6) से त् को द्वित्व
शेष कैअवं की तरह

56. **स्वप्नेनात् 2/108**

स्वप्नशब्दे नकारात् पूर्व इत् स्यात्। सिविणो[1], ईसि।

■ स्वप्न शब्द में नकार से पूर्व इकार होता है।

⊙ सिविणो (स्वप्नः—स्वप्न)
स्वप्न + सि
'सर्वत्र....' (9) से व् का लोप
'इःस्वप्नादौ' (38) से आदि अ को इ
'स्वप्नेनात्' (56) से नकार से पूर्व इकार
'पो वः' (24) से प् को व्
'नो णः' (28) से न् को ण्
शेष सरो की तरह

⊙ ईसि (ईषत्—अल्प, थोड़ा)
ईषत्—यह अव्यय है
'शषोः सः' (16) से ष् को स्
'इः स्वप्नादौ' (38) से अ को इ
'अन्त्य....' (42) से त् का लोप

57. **इत्वे वेतसे 1/207**

वेतसे तस्य डः स्यात् इत्वे सति। वेडिसो।

■ वेतस शब्द में अ को इ होने पर तकार को डकार होता है।

⊙ वेडिसो (वेतसः—बेंत का पेड़)
वेतस + सि
'इः स्वप्नादौ' (38) से प्रथम अ को इ
'इत्वे वेतसे' (57) से त् को ड्
शेष सरो की तरह

58. **पानीयादिष्वित् 1/101**

पानीयादिशब्देषु ईत इत् स्यात् विलिअं, विअणं।

■ पानीय आदि शब्दों में ईकार को इकार होता है।

⊙ विलिअं (व्यलीकम्—अकार्य, अनृत)
व्यलीक + सि
'अधो....' (5) से य् का लोप
'इःस्वप्नादौ' (38) से प्रथम अ को इ

---

[1] सू. 38 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'पानीयादिस्वित्' (58) से ई को इ
'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप
शेष कैअवं की तरह

⊙ विअणं (व्यजनम्—पंखा)
व्यजन + सि
'अधो....' (5) से य् का लोप
'इःस्वप्नादौ' (38) से आदि अ को इ
'क-ग-च-ज....(17) से ज् का लोप
'नो णः' (28) से न् को ण्
शेष कैअवं की तरह

59. **इदुतौ वृष्ट-वृष्टि-पृथङ्-मृदङ्ग-नप्तृके 1/137**

एषु ऋत इकारोकारौ स्याताम्। मुइङ्गो, मिइङ्गो, किविणो, उत्तिमो, मिरिअं, दिण्णं। बहुलाधिकाराण्णत्वाभावेन—दत्तं। इति स्वप्नादिः। मिच्छा।[1] पच्छिमं। उच्छाहो, मच्छलो। अच्छरा। ह्रस्वादिति किम्? सूसारिओ। अनिश्चले इति किम्? निच्चलो। आर्षे—तथ्ये चोपि तच्चं। जाव,[2] ताव। समासे तु वाक्यापेक्षया अन्त्यत्वं विभक्त्यपेक्षया अन्त्यत्वं, तेन उभयमपि—एअगुणा, एअग्गुणा।

अथ[3] ऋत्वादिः—उऊ, परामुट्ठो, पुट्ठो, पउट्ठो, पुहई, पउत्ती।

■ वृष्ट, वृष्टि, पृथङ्, मृदङ्ग तथा नप्तृक शब्दों में ऋकार को इकार और उकार होता है।

⊙ मिइङ्गो, मुइङ्गो (मृदङ्गः—वाद्य-विशेष)
मृदङ्ग + सि
'इदुतौ वृष्ट-वृष्टि-पृथङ्-मृदङ्ग-नप्तृके' (59) से ऋ को क्रमशः इ तथा उ
'इःस्वप्नादौ' (38) से आदि अ को इ
शेष सरो की तरह

⊙ किविणो (देखें सू. 38)

⊙ उत्तिमो (उत्तमः—श्रेष्ठ)
उत्तम + सि
'इः स्वप्नादौ' (38) से आदि अ को इ
शेष सरो की तरह

⊙ मिरिअं (मरिचम्—मिरच)
मरिच + सि
'इःस्वप्नादौ' (38) से आदि अ को इ

---

[1] सू. 40 की वृत्ति का शेषांश।
[2] सू. 42 की वृत्ति का शेषांश।
[3] सू. 43 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'क-ग-च-ज....' (17) से च् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ दिण्णं (दत्तम्—दिया हुआ)

दत्त + सि

'इःस्वप्नादौ' (38) से आदि अ को इ

'पञ्चाशत्-पञ्चदश-दत्ते' (325) से संयुक्त को ण्

'अनादौ.....' (6) से ण् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

बहुलाधिकार के कारण संयुक्त को ण नहीं करने पर दत्तं रूप भी बनता है। जहां ण नहीं करेंगे वहां इकार भी नहीं होगा।

⊙ मिच्छा (मिथ्या—असत्य)

मिथ्या + सि

'ह्रस्वात्......' (40) से थ्य् को छ्

'अनादौ.......' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय......' (14) से छ् को च्

शेष गङ्गा की तरह

⊙ पच्छिमं (पश्चिमम्—पश्चिम दिशा)

पश्चिम + सि

'ह्रस्वात् थ्य.....' (40) से श्च् को छ्

'अनादौ.....' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से छ् को च्

शेष कैअवं की तरह

⊙ उच्छाहो (उत्साहः—दृढ़ उद्यम, उत्साह, पराक्रम)

मच्छलो (मत्सरः—ईर्षालू, द्वेषी)

इन दोनों रूपों में—

'ह्रस्वात्....' (40) से त्स् को छ्

'अनादौ.....' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से छ् को च्

शेष सरो की तरह

इसके अतिरिक्त मच्छलो में 'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल् हुआ है।

⊙ अच्छरा (अप्सराः—इन्द्र की पटरानी, देवी)

अप्सरस् + जस्

'ह्रस्वात्.....' (40) से प्स् को छ्

'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से छ् को च्

'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'जश्शसो....' (396) से जस् का लुक्

'जश्शस्-ङसि.....' (397) से अ को दीर्घ

ह्रस्व से परे ऐसा क्यों?

⊙ सूसारिओ (सूत्सारितः—अच्छी तरह से उखाडा हुआ)

सूत्सारित + सि

'क-ग-ट.....' (13) से त् का लोप

'क-ग-च-ज....' (17) से द्वितीय त् का लोप

शेष सरो की तरह

यहां त्स से पहले दीर्घ होने से उसको छकार नहीं हुआ।

निश्चल शब्द को छोड़कर ऐसा क्यों?

⊙ निच्चलो (निश्चलः—स्थिर)

निश्चल + सि

'क-ग-ट....' (13) से श् का लोप

'अनादौ....' (6) से च् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

■ आर्ष प्राकृत में तथ्यम् का तच्चं (तथ्यम्—सत्य) रूप बनता है। यहां थ्य को छकार नहीं होकर चकार हुआ है।

⊙ जाव (यावत्—जब तक)

यावत्—यह अव्यय है

'आदेर्यो जः' (73) से आदि य् को ज्

'अन्त्य.....' (42) से त् का लोप

⊙ ताव (तावत्—तब तक)

तावत् यह अव्यय है

'अन्त्य....' (42) से त् का लोप

■ समास-गत शब्दों में वाक्य की अपेक्षा अन्त्यत्व और विभक्ति की अपेक्षा अनन्त्यत्व ये दोनों रूप मिलते हैं। जैसे—

⊙ एअगुणा एअग्गुणा (एतद्गुणाः—ये गुण)

एतद्गुण + जस्

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

'अन्त्य....' (42) से वाक्य की अपेक्षा अन्त्यत्व द् का लोप

'जश्शसो....' (396) से जस् का लुक्

'जश्शस्-ङसि...' (397) से अ को दीर्घ

जहां विभक्ति की अपेक्षा द् को अनन्त्यत्व मानेंगे वहां 'क-ग-ट....' (13) से द् का लोप तथा 'अनादौ....' (6) से ग् को द्वित्व करने पर एअग्गुणा रूप बनेगा।

⊙ उऊ (ऋतुः—ऋतु, दो मास का काल-विशेष)

ऋतु + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ
'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप
शेष विण्हू की तरह

⊙ परामुट्ठो (परामृष्टः—विचारित)

⊙ पुट्ठो (स्पृष्टः—छुआ हुआ)

⊙ पउट्ठो (प्रवृष्टः—बरसा हुआ)
इन तीनों रूपों में—
'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ
'ष्टस्या.....' (34) से ष्ट् को ठ्
'अनादौ....' (6) से ठ् को द्वित्व
'द्वितीय.....' (14) से ठ् को ट्
शेष सरो की तरह

इसके अलावा पुट्ठो में 'क-ग-ट....' (13) से स् का लोप तथा पउट्ठो में 'सर्वत्र..' (9) से र् का लोप और 'क-ग-च....' (17) से व् का लोप हुआ है।

⊙ पुहई (पृथिवी—जमीन)
पृथिवी + सि
'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ
'पथि-पृथिवी...' (44) से आदि इ को अ
'ख-घ-थ.....' (30) से थ् को ह्
'क-ग-च-ज....' (17) से व् का लोप
इकार उच्चारण के लिए
'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

⊙ पउत्ती (प्रवृत्तिः—कार्य, वृत्तान्त)
प्रवृत्ति + सि
'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ
'क-ग-च-ज...' (17) से व् का लोप
शेष सामिद्धी की तरह

60. **दिक्-प्रावृषोः सः 1/19**

अनयोरन्त्यव्यञ्जनस्य सः स्यात्। पाउसो, पाउओ, भुई, पहुडि, पाहुडं, परहुओ, निहुअं, निउअं, विउअं, संवुअं, वुत्तन्तो, निव्वुअं, निव्वुई, वुन्दं, वुंदावणो।

■ दिक् और प्रावृष् शब्दों के अंतिम व्यंजन को सकार होता है।

⊙ पाउसो (प्रावृट्—वर्षा ऋतु)
प्रावृष् + सि
'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'क-ग-च-ज....' (17) से व् का लोप

'अन्त्य....' (42) से ष् के लोप की प्राप्ति उसे रोककर

'दिक्-प्रावृषोः सः' (60) से अन्त्य व्यंजन ष् को स

'प्रावृट्-शरत्तरणयः पुंसि' (611) से स्त्रीलिंग प्रावृष् शब्द को पुलिंग में प्रयुक्त

शेष सरो की तरह

- पाउओ (प्रावृतः—आच्छादित)

प्रावृत + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

'क-ग-च-ज....' (17) से व् तथा त् का लोप

शेष सरो की तरह

- भुई (भृतिः—पोषण, वेतन)

भृति + सि

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

शेष सामिद्धी की तरह

- पहुडि, पाहुडं (देखें सू. 43)
- परहुओ (परभृतः—कोयल)

परभृत + सि

'ख-घ-थ....' (30) से भ् को ह्

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप

शेष सरो की तरह

- निहुअं (निभृतम्—उपशान्त, प्रच्छन्न)
- संवुअं (संवृतम्—संगोपित, कषाय और इन्द्रियों का नियंत्रण)
- निव्वुअं (निर्वृतम्—पूरा किया हुआ, निष्पन्न)

इन सभी रूपों मे—

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप

शेष कैअवं की तरह

इसके अलावा निहुअं में 'ख-घ-थ.....' (30) से भ् को ह् तथा निव्वुअं में 'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप होकर 'अनादौ...' (6) से व् को द्वित्व हुआ है।

- निउअं (निवृतम्—घिरा हुआ, उत्तरीय)
- विउअं (विवृतम्—विस्तृत, व्याख्यात)

इन दोनों रूपों में

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'क-ग-च-ज....' (17) से व् तथा त् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ वुत्तन्तो (वृत्तान्तः—समाचार)

वृत्तान्त + सि

'उदृत्वादो' (43) से ऋ को उ

'ह्रस्वः.....' (12) से ह्रस्व

शेष सरो की तरह

⊙ वुंदावणो (वृन्दावनः—स्थान विशेष)

वृन्दावन + सि

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

'ङ्-अणनो....' (33) से न् को अनुस्वार

'नो णः' (28) से द्वितीय न् को ण्

शेष सरो की तरह

⊙ निव्वुई (निर्वृतिः—समाप्ति)

निर्वृति + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'अनादौ.....' (6) से व् को द्वित्व

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

शेष सामिद्धी की तरह

⊙ वुन्दं (वृन्दम्—समूह)

वृन्द + सि

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

शेष कैअवं की तरह

61. **दग्ध-विदग्ध-वृद्धि-वृद्धे ढः 2/40**

एषु संयुक्तस्य ढः स्यात्। वुड्ढो, वुड्ढी, उसहो, मुणालं।

■ दग्ध, विदग्ध, वृद्धि और वृद्ध शब्दों में संयुक्त को ढकार होता है।

⊙ वुड्ढो (वृद्धः—बूढ़ा)

वृद्ध + सि

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

'दग्ध-विदग्ध-वृद्धि-वृद्धे ढः' (61) से संयुक्त को ढ्

'अनादौ.....' (6) से ढ् को द्वित्व

'द्वितीय....' (14) से ढ् को ड्

शेष सरो की तरह

⊙ वुड्ढी (वृद्धिः—बढ़ाव, व्याकरण की एक संज्ञा)

वृद्धि + सि

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'दग्ध...' (61) से संयुक्त को ढ्
'अनादौ.....' (6) से ढ् को द्वित्व
'द्वितीय.....' (14) से ढ् को ड्
शेष सामिद्धी की तरह

⊙ उसहो (ऋषभः—प्रथम जिनदेव)
ऋषभ + सि
'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ
'शषोः सः' (16) से ष् को स्
'ख-घ-थ...' (30) से भ् को ह्
शेष सरो की तरह

⊙ मुणालं (मृणालम्—पद्मनाल)
मृणाल + सि
'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ
शेष कैअवं की तरह

62. **तैलादौ 2/98**

तैलादिषु अनादौ यथादर्शनं व्यञ्जनस्य द्वित्वं स्यात्। उज्जू, जामाउओ, माउओ, माउआ, भाउओ, पिउओ।

■ तैल आदि शब्दों में अनादिभूत व्यंजन को प्रयोग के अनुसार द्वित्व होता है।

⊙ उज्जू (ऋजुः—सरल)
ऋजु + सि
'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ
'तैलादौ' (62) से ज् को द्वित्व
शेष विण्हू की तरह

⊙ जामाउओ (जामातृकः—दामाद)

⊙ माउओ (मातृकः—माता सम्बन्धी)

⊙ भाउओ (भ्रातृकः—भाई सम्बन्धी)

⊙ पिउओ (पितृकः—पिता से सम्बन्धित)
इन सभी रूपों में—
'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ
'क-ग-च-ज....' (17) से त् तथा क् का लोप
शेष सरो की तरह
इसके अलावा भाउओ में 'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप हुआ है।

⊙ माउआ (मातृका—माता सम्बन्धिनी)
मातृका + सि
'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'क-ग-च-ज....' (17) से त् तथा क् का लोप

शेष गङ्गा की तरह

63. **तन्वीतुल्येषु 2/113**

उकारान्ता ङीप्रत्ययान्तास्तन्वीतुल्यास्तेषु संयुक्तस्यान्त्यव्यञ्जनात् पूर्वे उकारः स्यात्। पुहुवी। इति ऋत्वादिः। पहो।[1] कथं पंथं? पथिशब्दसमानार्थस्य पन्थशब्दस्य भविष्यति। पुहई पडंसुआ, मूसओ।

■ उकारान्त (तनु आदि शब्द) ङी प्रत्ययान्त (जिसके अंत में ङी प्रत्यय लगा हुआ हो, तन्वी-तुल्य (गुणवाची) कहे जाते हैं) तन्वी-तुल्य शब्दों में संयुक्त के अंतिम व्यंजन से पूर्व उकार का आगम होता है।

⊙ पुहुवी (पृथ्वी—जमीन)

पृथ्वी + सि

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

'तन्वीतुल्येषु' (63) से संयुक्त के अंतिम व्यंजन के पूर्व उकार

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य ....' (42) से स् का लोप

⊙ पहो (पन्था—मार्ग)

पथिन् + सि

'पथि-पृथिवी....' (44) से इ को अ

'ख-घ-थ....' (30) से थ् को ह्

'अन्त्य.....' (42) से न् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ पंथं (पन्थम्—मार्ग)

पन्थ + सि

'ङञणनो.....' (33) से न् को अनुस्वार

शेष कैअवं की तरह

■ यहां प्रश्न उपस्थित होता है कि क्या 'पंथं' रूप पथिन् शब्द से ही निष्पन्न हुआ है? तब समाधान में वृत्तिकार कहते हैं कि यह पथिन् शब्द का समानार्थक (पर्यायवाचक) पन्थ शब्द है, इसलिए 'पथि-पृथिवी....' (44) इस सूत्र से कार्य नहीं हुआ है।

⊙ पुहई (पृथिवी—जमीन)

पृथिवी + सि

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

'पथि-पृथिवी....' (44) आदि इ को अ

'ख-घ-थ....' (30) से थ् को ह्

'क-ग-च-ज....' (17) से व् का लोप

इकार उच्चारण के लिए

[1] सू. 44 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

⊙ पडंसुआ (देखें सू. 42)

⊙ मूसओ (मूषिकः—चूहा)

मूषिक + सि

'पथि-पृथिवी....' (44) से इ को अ

'शषोः सः' (16) से ष् को स्

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

64. **हरिद्रादौ लः 1/254**

एषु शब्देषु असंयुक्तस्य रस्य लः स्यात्।

■ हरिद्रा आदि शब्दों में असंयुक्त रकार को लकार होता है।

65. **द्रे रो नवा 2/80**

द्रशब्दे रेफस्य लुग् वा स्यात्। हलद्दी, पेऊसं,[1] आवेडो, केरिसो, एरिसो।

म्न— निण्णं,[2] पज्जुण्णो।

ज्ञ—सण्णा, पण्णा।

कोमुई,[3] कोसम्बी, कोञ्चो, कोसिओ।

मासू,[4] मंसू, मस्सू। मसाणं। आर्षे श्मशानशब्दस्य सीआणं, सुसाणं इत्यपि भवति।

सड्ढा,[5] सद्धा। इड्ढी, इद्धी। मुंढा, मुद्धा। अड्ढं, अद्धं।

कुम्पलं,[6] रुप्पिणी। क्वचित् च्मोपि रुच्मी, रुप्पी।

छम्मुहो,[7] छमी, छावो, छुहा, छत्तवण्णो।

सइन्नं।[8] अथ दैत्यादिः—दइच्चो, दइन्नं।

■ 'द्र' (इस संयुक्त व्यंजन) के रेफ का विकल्प से लोप होता है।

⊙ हलद्दी (हरिद्रा—औषधि-विशेष, हल्दी)

हरिद्रा + सि

'पथि-पृथिवी....' (44) से इ को अ

'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्

'द्रे रो नवा' (65) से विकल्प से रेफ का लोप

'अनादौ.....' (6) से द् को द्वित्व

'छाया-हरिद्रयोः' (567) से आप् के प्रसंग में स्त्रीलिंग में विकल्प से ङी

---

[1] सू. 45 की वृत्ति का शेषांश।
[2] सू. 47 की वृत्ति का शेषांश।
[3] सू. 49 की वृत्ति का शेषांश।
[4] सू. 50 की वृत्ति का शेषांश।
[5] सू. 51 की वृत्ति का शेषांश।
[6] सू. 52 की वृत्ति का शेषांश।
[7] सू. 54 की वृत्ति का शेषांश।
[8] सू. 55 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

हलद्दा + ङी + सि

ङ् अनुबंध जाने पर

'लुक्' (235) से स्वर (आ) का स्वर परे होने पर लोप

'अज्झीनं परेण संयोज्यम्' इस न्याय से मिलाने पर

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप

- पेऊसं (पीयूषम्—अमृत)

पीयूष + सि

'एत् पीयूषा....' (45) से ई को ए

'क-ग-च-ज....' (17) से य् का लोप

'शषोः सः' (16) से ष् को स्

शेष कैअवं की तरह

- आवेडो (आपीडः—फूलों की माला, शिरोभूषण)

आपीड + सि

'एत् पीयूषा....' (45) से ई को ए

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष सरो की तरह

- केरिसो, एरिसो (देखें सू. 47)

- णिण्णं (निम्नम्—नीचे)

निम्न + सि

'म्नज्ञोर्णः' (47) से म्न् को ण्

'अनादौ....' (6) से ण् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

- पज्जुण्णो (प्रद्युम्नः—श्रीकृष्ण का पुत्र)

प्रद्युम्न + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'द्य-य्य-र्यां जः' (113) से द्य् को ज्

'अनादौ....' (6) से ज् को द्वित्व

'म्नज्ञोर्णः' (47) से म्न् को ण्

'अनादौ....' (6) से ण् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

- सण्णा (संज्ञा—चेतना, इशारा, सूर्यपत्नी जो विश्वकर्मा की कन्या थी)

संज्ञा + सि

'म्नज्ञोर्णः' (47) से ज्ञ् को ण्

'अनादौ....' (6) से ण् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु....' (18) से द्वित्व का निषेध

'वर्गेन्त्यो वा' (245) से विकल्प से अनुस्वार को उसी वर्ग का अंतिम व्यंजन ण्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष गङ्गा की तरह

⊙ पण्णा (प्रज्ञा—बुद्धि)

प्रज्ञा + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'म्नज्ञोर्णः.....' (47) से ज्ञ् को ण्

'अनादौ....' (6) से ण् को द्वित्व

शेष गङ्गा की तरह

⊙ कोमुई (कौमुदी—शरद् ऋतु की पूर्णिमा, चांदनी)

कौमुदी + सि

'औत ओत्' (49) से औ को ओ

'क-ग-च....' (17) से द् का लोप

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप

⊙ कोसम्बी (कौशाम्बी—वत्स देश की मुख्य नगरी)

कौशाम्बी + सि

'औत ओत्....' (49) से औ को ओ

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'ह्रस्वः......' (12) से आ को अ

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य......' (42) से स् का लोप

⊙ कोञ्चो (क्रौञ्चः—पक्षि-विशेष)

क्रौञ्च + सि

'औत ओत्' (49) से औ को ओ

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ कोसिओ (कौशिकः—उल्लू, कौशिक नाम का एक असुर)

कौशिक + सि

'औत ओत्' (49) से औ को ओ

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ मासू, मस्सू (श्मश्रुः—दाढ़ी-मूंछ)

श्मश्रु + सि

'आदेः.....' (50) से श् का लोप

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'लुप्त.....' (15) से आदि स्वर को दीर्घ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'अनादौ....' (6) से श् को द्वित्व की प्राप्ति
'न दीर्घानु...' (18) से द्वित्व का निषेध
'शषोः सः' (16) से श् को स्
शेष विण्हू की तरह

जहां 'लुप्त....' (15) से दीर्घ नहीं करेंगे, वहां 'अनादौ....' (6) से द्वित्व करने पर मस्सू रूप बनेगा।

⊙ मंसू (देखें सूत्र. 50)

⊙ मसाणं (श्मशानम्—मरघट)
श्मशान + सि
'आदेः....' (50) से श् का लोप
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'नो णः' (28) से न् को ण्
शेष कैअवं की तरह

■ आर्ष प्राकृत में श्मशान शब्द का सीआणं, सुसाणं इस प्रकार रूप भी बनता है।

⊙ सड्ढा, सद्धा (श्रद्धा—धर्म आदि में विश्वास, स्पृहा)
श्रद्धा + सि
'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'श्रद्धर्द्धि......' (51) से विकल्प से संयुक्त को ढ्
'अनादौ.....' (6) से ढ् को द्वित्व
'द्वितीय......' (14) से ढ् को ड्
शेष गङ्गा की तरह

पक्ष में—'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप तथा 'शषोः सः' (16) से श् को स् करने पर सद्धा रूप बनेगा।

⊙ इड्ढी, इद्धी (ऋद्धिः—ऐश्वर्य)
ऋद्धि + सि
'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ
'श्रद्धर्द्धि.....' (51) से विकल्प से संयुक्त को ढ्
'अनादौ.....' (6) से ढ् को द्वित्व
'द्वितीय.....' (14) से ढ् को ड्
शेष सामिद्धी की तरह
पक्ष में—इद्धी (देखें सू. 36)

⊙ मुंढा, मुद्धा (देखें सू. 51)

⊙ अड्ढं, अद्धं (अर्धम्—आधा)
अर्ध + सि
'श्रद्धर्द्धि.....' (51) से विकल्प से संयुक्त को ढ्
'अनादौ.....' (6) से ढ् को द्वित्व

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'द्वितीय......' (14) से ढ् को ड्
शेष कैअवं की तरह

पक्ष में अद्धं—

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप
'अनादौ....' (6) से ध् को द्वित्व
'द्वितीय....' (14) से ध् को द्
शेष कैवअं की तरह

- कुम्पलं (देखें सू. 52)
- रुप्पिणी (रुक्मिणी—वासुदेव कृष्ण की पत्नी)

रुक्मिणी + सि
'ड्मक्मोः' (52) से क्म् को प्
'अनादौ....' (6) से प् को द्वित्व
इकार उच्चारण के लिए
'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप

- रुच्मी, रुप्पी (रुक्मी—रुक्मिणी का भाई)

रुक्मिन् + सि
'ड्मक्मोः' (52) से बहुलाधिकार के कारण कहीं क्म् को च्म्
'अन्त्य.....' (42) से न् का लोप
शेष पारद्धी की तरह

जहां च्म् नहीं करेंगे वहां 'ड्मक्मोः' (52) से क्म् को प् तथा 'अनादौ.....' (6) से प् को द्वित्व करने पर रुप्पी बनेगा।

- छम्मुहो (देखें सू. 54)
- छमी (शमी—अग्नि-गर्भ वृक्ष)

शमी + सि
'षट्-शमी.....' (54) से आदि वर्ण श् को छ्
इकार उच्चारण के लिए
'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप

- छावो (शावः—बच्चा)

शाव + सि
'षट्-शमी....' (54) से आदि वर्ण श् को छ्
शेष सरो की तरह

- छुहा (सुधा—अमृत)

सुधा + सि
'षट्-शमी....' (54) से आदि वर्ण स् को छ्
'ख-घ-थ....' (30) से ध् को ह्
शेष गङ्ग.ा की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ छत्तवण्णो (सप्तपर्णः—छतिवन)

सप्तपर्ण + सि

'षट्-शमी....' (54) से आदि वर्ण स् को छ्

'पो वः' (24) से प् को व्

'क-ग-ट-ड.....' (13) से प् का लोप

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'अनादौ....' (6) से त् तथा ण् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

⊙ सइन्नं (सैन्यम्—सेना)

⊙ दइन्नं (दैन्यम्—दीनता, गरीबी)

इन दोनों रूपों में—

'अइर्दैत्यादौ च' (55) से ऐ को अइ

'अधो....' (5) से य् का लोप

'अनादौ....' (6) से न् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

⊙ दइच्चो (दैत्यः—राक्षस)

दैत्य + सि

'अइर्दैत्यादौ च' (55) से ऐ को अइ

'त्यौऽचैत्ये' (37) से त्य् को च्

'अनादौ....' (6) से च् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

66. **स्याद्-भव्य-चैत्य-चौर्यसमेषु यात् 2/107**

स्यादादिषु चौर्यशब्दतुल्येषु च संयुक्तस्य यात् पूर्व इत् स्यात्। अइसरिअं, भइरवो, वइजवणो, दहवअं, वइआलीअं, वइएसो, वइएहो, वइदब्भो, वइस्साणरो, कइअवं, वइसाहो वइसालो, सइरं, चइत्तं। विश्लेषे न भवति—चेइअं। आर्षे चीवन्दणं।

अथ[1] पानीयादिः—पाणिअं, अलिअं, जिअइ, जिअउ।

■ स्याद्, भव्य, चैत्य तथा चौर्य-तुल्य[2] शब्दों में संयुक्त के य से पूर्व इ होता है।

⊙ अइसरिअं (ऐश्वर्यम्—ऐश्वर्य, सम्पत्ति)

ऐश्वर्य + सि

'अइर्दैत्यादौ च' (55) से ऐ को अइ

'सर्वत्र....' (9) से व् का लोप

'शषोःसः' (16) से श् को स्

'स्याद्-भव्य-चैत्य-चौर्यसमेषु यात्' (66) से य से पूर्व इ

---

[1] सू. 58 की वृत्ति का शेषांश।

[2] र्य जिसके अंत में हो ऐसे शब्द जैसे—स्थैर्य, भार्या, आचार्य आदि।

'क-ग-च-ज....' (17) से य् का लोप

शेष कैअवं की तरह

- भइरवो (भैरवः—महादेव, भैरव राग, भयंकर)
- वइजवणो (वैजवनः—गोत्र-विशेष में उत्पन्न)

इन दोनों रूपों में—

'अइदै....' (55) से ऐ को अइ

शेष सरो की तरह

इसके अलावा वइजवणो में 'नो णः' (28) से न् को ण् हुआ है।

- दइवअं (दैवतम्—देवता सम्बन्धी)
- वइआलीअं (वैतालीयम्—छन्द-विशेष)
- कइअवं (कैतवम्—कपट, दम्भ)

इन तीनों रूपों में—

'अइदै.....' (55) से ऐ को अइ

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

शेष कैअवं की तरह

इसके अलावा वइआलीअं में 'क-ग-च....' (17) से य् का लोप हुआ है।

- वइएसो (वैदेशः—विदेशी)
- वइएहो (वैदेहः—मिथिला का निवासी)

इन दोनों रूपों में—

'अइदै....' (55) से ऐ को अइ

'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप

शेष सरो की तरह

इसके अलावा वइएसो में 'शषोः सः' (16) से श् को स् हुआ है।

- वइदब्भो (वैदर्भः—विदर्भ देश का राजा)

वैदर्भ + सि

'अदई ....' (55) से ऐ को अइ

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'अनादौ....' (6) से भ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से भ् को ब्

शेष सरो की तरह

- वइस्साणरो (वैश्वानरः—अग्नि, सामदेव का अवयव-विशेष)

वैश्वानर + सि

'अइदै....' (55) से ऐ को अइ

'सर्वत्र....' (9) से व् का लोप

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'अनादौ....' (6) स् को द्वित्व

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष सरो की तरह

⊙ वइसाहो (वैशाखः—वैशाख का महीना)

⊙ वइसालो (वैशालः—विशाला में उत्पन्न)

इन दोनों रूपों में—

'अइर्दै....' (55) से ऐ को अइ

'शषोः सः' (16) से श् को स्

शेष सरो की तरह

इसके अलावा वइसाहो में 'ख-घ-थ....' (30) से ख् को ह् हुआ है।

⊙ सइरं (स्वैरम्—स्वेच्छा, स्वच्छन्दता)

स्वैर + सि

'सर्वत्र...' (9) से व् का लोप

'अइर्दै.....' (55) से ऐ को अइ

शेष कैअवं की तरह

⊙ चइत्तं (देखें सू. 55)

■ विश्लेष (पृथक्करण) में ऐ को अइ नहीं होता है। यथा—

⊙ चेइअं (चैत्यम्—मन्दिर)

चैत्य + सि

'ऐत एत्' (70) से ऐ को ए

'स्याद्-भव्य....' (66) से य से पूर्व इ

'क-ग-च-ज....' (17) से त् तथा य् का लोप

शेष कैअवं की तरह

■ आर्ष प्राकृत में 'चैत्य-वन्दनम्' का 'चीवन्दणं' बनता है।

⊙ पाणिअं (पानीयम्—जल)

⊙ अलिअं (अलीकम्—असत्य)

इन दोनों रूपों में—

'पानीयादि ....' (58) से ई को इ

'क-ग-च-ज....' (17) से पाणिअं में य् का तथा अलिअं में क् का लोप

शेष कैअवं की तरह

इसके अलावा पाणिअं में 'नो णः' (28) से न् को ण् हुआ है।

⊙ जिअइ (जीवति—प्राण धारण करता है)

जीव् + तिप्

'व्यञ्जना....' (638) से धातु के अंत में अकार का आगम

'पानीयादि....' (58) से ई को इ

'अज्झीनं परेण संयोज्यम्' इस न्याय से मिलाने पर

'क-ग-च-ज....' (17) से व् का लोप

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

जिअ + तिप्

शेष अटइ की तरह

⊙ जिअउ (जीवतु—जीवित रहे)

जीव् + तुप्

जिअ तक की प्रक्रिया ऊपर की तरह

'दु सु मु विध्यादिष्वेकस्मिंस्त्रयाणाम्' (626) से तुप् के स्थान में दु

'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप

वर्ण सम्मेलन करने पर

67. **डो लः 1/202**

स्वरात् परस्यासंयुक्तस्य अनादेर्डस्य प्रायो लःस्यात्। विलिअं, करिसो, सिरिसो।

■ स्वर से परे असंयुक्त तथा अनादि ड को प्रायः ल होता है।

⊙ विलिअं (व्रीडितम्—लज्जित)

व्रीडित + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'पानीयादि....' (58) से ई को इ

'डो लः' (67) से ड् को ल्

'क-ग-च-ज...' (17) से त् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ करिसो (करीषः—कण्डा)

⊙ सिरिसो (शिरीषः—सिरसा का पेड़)

इन दोनों रूपों में—

'पानीयादि....' (58) से ई को इ

'शषोः सः' (16) से करिसो में ष् को स् तथा सिरिसो में श् और ष् को स्

शेष सरो की तरह

68. **द्विन्योरुत् 1/94**

द्विशब्दे निउपसर्गे च इत उत् स्यात्। दुइअं, तइअं, गहिरं, उवणिअं, आणिअं।

■ 'द्वि' शब्द में और 'नि' उपसर्ग में इ को उ होता है।

⊙ दुइअं (द्वितीयम्—दूसरा)

द्वितीय + सि

'द्विन्योरुत्' (68) द्वि के इ को उ

'सर्वत्र.....' (9) से व् का लोप

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का तथा य् का लोप

'पानीयादि...' (58) से ई को इ

शेष कैअवं की तरह

⊙ तइअं (तृतीयम्—तीसरा)

तृतीय + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ

'क-ग-च-ज....' (17) से द्वितीय त् तथा य् का लोप

'पानीयादि....' (58) से ई को इ

शेष कैअवं की तरह

⊙ उवणिअं (उपनीतम्—समीप में लाया हुआ)

⊙ आणिअं (आनीतम्—लाया हुआ)

इन दोनों रूपों में—

'पानीयादि .....' (58) से ई को इ

'नो णः' (28) से न् को ण्

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

शेष कैअवं की तरह

इसके अलावा उवणिअं में 'पो वः' (24) से प् को व् हुआ है।

⊙ गहिरं (गंभीरम्—गम्भीर, गहरा)

गभीर + सि

'ख-घ-थ.....' (30) से भ् को ह्

'पानीयादि....' (58) से ई को इ

शेष कैअवं की तरह

69. **प्रदीपि-दोहदे लः 1/221**

प्रपूर्वे दीप्यतौ धातौ दोहदशब्दे च दस्य लः स्यात्। पलिविअं, ओसिअंतं, पसिअ, गहिअं, वम्मिओ, तयाणिं। इति पानीयादिः। बाहुलकात् क्वचिद् विकल्पः—पाणीअं, अलीअं, जीअइ, करीसो, उवणीओ इत्यादि।

विड्डो,[1] वुड्डो, विड्डी, वुड्डी। पिहं, पुहं। मिइङ्गो, मुइङ्गो। नत्तिओ, नत्तुओ। दिसा।[2] दड्ढो,[3] विअड्ढो, वुड्ढी, वुड्ढो। क्वचिद् न भवति विद्धकइनिरूविअं। अथ[4] तैलादिः—

■ प्र उपसर्ग पूर्वक दीप् धातु और दोहद शब्द में द को ल होता है।

⊙ पलिविअं (प्रदीपितम्—जलाया हुआ)

प्रदीपित + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'प्रदीपि-दोहदे लः' (69) से द् को ल्

'पानीयादि....' (58) से ई को इ

'पो वः' (24) से प् को व्

'क-ग-च-ज...' (17) से त् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ ओसिअंतं (अवसीदत्—पीड़ा पाता हुआ)

---

[1] सू. 59 की वृत्ति का शेषांश।

[2] सू. 60 की वृत्ति का शेषांश।

[3] सू. 61 की वृत्ति का शेषांश।

[4] सू. 62 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

अवसीद + शतृ + सि

'अवापोते' (224) से अव उपसर्ग के आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन के साथ ओ

'पानीयादि ....' (58) से ई को इ

'क-ग-च-ज.....' (17) से द् का लोप

'शत्रानशः' (923) से शतृ को न्त आदेश

'ङञणनो....' (33) से न् को अनुस्वार

शेष कैअवं की तरह

⊙ पसिअ (प्रसीद—प्रसन्न हो)

प्रसीद

'सर्वत्र...' (9) से र् का लोप

'पानीयादि.....' (58) से ई को इ

'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप

⊙ गहिअं (गृहीतम्—ग्रहण किया हुआ)

गृहीत + सि

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ

'पानीयादि....' (58) से ई को इ

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ वम्मिओ (वल्मीकः—दीमकों के रहने की बाँबी)

वल्मीक + सि

'सर्वत्र.......' (9) से ल् का लोप

'अनादौ....' (6) से म् को द्वित्व

'पानीयादि....' (58) से ई को इ

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ तयाणिं (तदानीम्—तब)

तदानीम्—यह अव्यय है

'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप

'अवर्णो ....' (19) से य श्रुति

'नो णः' (28) से न् को ण्

'पानीयादि.....' (58) से ई को इ

'मोऽनुस्वारः' (399) से म् को अनुस्वार

■ बहुल का अधिकार होने से कहीं (ई को इ) विकल्प से। यथा—पाणीअं, अलीअं, जीअइ, करीसो, उवणीओ इत्यादि। इनमें 'पानीयादि....' (58) से ई को इ नहीं हुआ है। शेष साधनिका ऊपर की तरह है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ विट्ठो, वुट्ठो (वृष्टः—बरसा हुआ)

वृष्ट + सि

'इदुतौ....' (59) से ऋ को क्रमशः इ और उ

'ष्टस्या.....' (34) से ष्ट् को ठ्

'अनादौ......' (6) से ठ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से ठ् को ट्

शेष सरो की तरह

⊙ विट्ठी, वुट्ठी (वृष्टिः—वर्षा)

वृष्टि + सि

'इदुतौ.....' (59) से ऋ को क्रमशः इकार और उकार

'ष्टस्या.....' (34) से ष्ट् को ठ्

'अनादौ....' (6) से ठ् को द्वित्व

'द्वितीय....' (14) से ठ् को ट्

शेष सामिद्धी की तरह

⊙ पिहं, पुहं (पृथक्—अलग)

पृथक्—यह अव्यय है

'इदुतौ.....' (59) से ऋ को क्रमशः इकार और उकार

'ख-घ-थ.....' (30) से थ् को ह्

'वा स्वरे मश्च' (243) से बहुलता से क् को म्

'मोऽनुस्वारः' (399) से म् को अनुस्वार

⊙ मिइङ्गो, मुइङ्गो (देखें सू. 59)

⊙ नत्तिओ, नत्तुओ (नप्तृकः—पौत्र, दौहित्र)

नप्तृक + सि

'इदुतौ....' (59) से ऋ को इकार तथा उकार

'क-ग-ट-ड....' (13) से प् का लोप

'अनादौ....' (6) से त् को द्वित्व

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ दिसा (दिक्—दिशा)

दिश् + सि

'दिक्....' (60) से अंतिम व्यंजन श् को स

'आत्' (हेम. 2/4/18) से आप् प्रत्यय

दिस आप् सि

प् अनुबंध जाने पर

'पदयोः संधिर्वा' (388) से बहुलता से सन्धि

शेष गङ्गा की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ दड्ढो (दग्धः—जला हुआ)

⊙ विअड्ढो (विदग्धः—निपुण, पण्डित)

इन दोनों रूपों में—

'दग्ध......' (61) से संयुक्त को ढ्

'अनादौ....' (6) से ढ् को द्वित्व

'द्वितीय....' (14) से ढ् को ड्

शेष सरो की तरह

इसके अलावा विअड्ढो में 'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप हुआ है।

⊙ वुड्ढी, वुड्ढो (देखें सू. 61)

बहुलाधिकार के कारण कहीं ठकार नहीं भी होता है। यथा—

⊙ विद्धकइनिरूविअं (वृद्धकविनिरूपितम्—वृद्ध कवि के द्वारा जिसका निरूपण किया गया है)

वृद्धकविनिरूपित + सि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

'क-ग-च-ज....' (17) से व् तथा त् का लोप

'पो वः' (24) से प् को व्

शेष कैअवं की तरह

70. **ऐत एत् 1/148**

ऐकारस्यादौ वर्तमानस्य एत्वं स्यात्। तेल्लं, मण्डुक्को।

■ (शब्दों की) आदि में रहे हुये ऐकार को एकार होता है।

⊙ तेल्लं (तैलम्—तेल)

तैल + सि

'ऐत एत्' (70) से ऐ को ए

'तैलादौ' (62) से अनादि व्यञ्जन ल् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

⊙ मण्डुक्को (मण्डूकः—मेंढक)

मण्डूक + सि

'तैलादौ' (62) से क् को द्वित्व

'Ðस्वः.......' (12) से ऊ को उ

शेष सरो की तरह

71. **स्थविर-विचकिलायस्कारे 1/166**

एषु आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह एत् स्यात्। वेइल्लं, उज्जू, विड्डा।

■ स्थविर, विचकिल ओर अयस्कार इन शब्दों में आदि स्वर को उसके आगे रहे हुये स्वर सहित व्यंजन के साथ एकार होता है।

⊙ वेइल्लं (विचकिलम्—पुष्प-विशेष)

विचकिल + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'स्थविर-विचकिलायस्कारे' (71) से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन के साथ एकार

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

'तैलादौ' (62) से ल् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

⊙ उज्जू (देखें सू. 62)

⊙ विड्डा (व्रीडा—लज्जा)

व्रीडा + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'तैलादौ' (62) से ड् को द्वित्व

'ह्रस्वः.....' (12) से ई को इ

शेष गङ्गा की तरह

72. **प्रभूते वः 1/233**

प्रभूते पस्य वः स्यात्। वहुत्तं। अनन्त्यस्य—सोत्तं, पेम्मं।

■ प्रभूत शब्द में प को व होता है।

⊙ वहुत्तं (प्रभूतम्—बहुत)

प्रभूत + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'प्रभूते वः' (72) प् को व्

'ख-घ-थ....' (30) से भ् को ह्

'तैलादौ' (62) से त् को द्वित्व

'ह्रस्वः.....' (12) से ऊ को उ

शेष कैअवं की तरह

अनन्त्य (जो अन्त्य के न हों) के उदाहरण—

⊙ सोत्तं (स्रोतः—प्रवाह, वेग)

स्रोतस् + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'तैलादौ' (62) से त् को द्वित्व

'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ पेम्मं (प्रेम—स्नेह)

प्रेमन् + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'तैलादौ' (62) से म् को द्वित्व

'अन्त्य....' (42) से न् का लोप

शेष कैअवं की तरह

73. **आदेर्यो जः 1/245**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

पदादेर्यस्य जः स्यात्। जुव्वणं। आर्षे—पडिसोओ, विस्सो-असिआ। इति तैलादिः। तणुवी,[1] लहुवी, गरुवी, मउवी। क्वचिदन्यत्रापि—सुरुग्घं। आर्षे सुहुमं।

अथ[2] हरिद्रादिः—हलिद्दी, दलिद्दाइ, दलिद्दो, दालिद्दं, हलिद्दो।

■ पद की आदि में य को ज होता है।

⊙ जुव्वणं (यौवनम्—यौवन, जवानी)

यौवन + सि

'आदेर्यो जः' (73) से य् को ज्

'तैलादो' (62) से व् को द्वित्व

'औत ओत्' (49) औ को ओ

'ह्रस्वः.....' (12) से ओ को उ

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष कैअवं की तरह

■ आर्ष प्राकृत में पडिसोओ (प्रतिस्रोतः—उलटा प्रवाह), तथा विस्सोअसिआ (विस्रोतसिका—विमार्ग-गमन, शंका) रूप भी बनते हैं।

⊙ तणुवी (तन्वी—ईषत्प्राग्भारा-नामक पृथ्वी)

⊙ लहुवी (लघ्वी—छोटी)

⊙ गरुवी (गुर्वी—बड़ी)

इन तीनों रूपों में—

'तन्वी....' (63) से संयुक्त के अन्त्य व्यंजन से पूर्व उ

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

इसके अतिरिक्त—तणुवी में 'नो णः' (28) से न् को ण्

लहुवी में 'ख-घ-थ....' (30) से घ् को ह्

गरुवी में 'उतो मुकुलादिष्वत्' (74) से उ को अ हुआ है।

⊙ मउवी (मृद्वी—कोमल, सुकुमार)

मृद्वी + सि

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ

'तन्वीतुल्येषु' (63) से अन्त्य व्यंजन से पूर्व उ

'क-ग-च-ज...' (17) से द् का लोप

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप

■ बहुलाधिकार के कारण कहीं अन्यत्र भी (तन्वी-तुल्य शब्दों के अतिरिक्त) संयुक्त के अन्त्य व्यंजन से पूर्व उ का आगम हो जाता है। यथा—

⊙ सुरुग्घं (स्रुघ्नम्—देश-विशेष)

---

[1] सू. 63 की वृत्ति का शेषांश।

[2] सू. 64 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

स्रुघ्न + अम्

'तन्वीतुल्येषु' (63) से संयुक्त के अन्त्य व्यंजन से पूर्व उ का आगम

'अधो.....' (5) से न् का लोप

'अनादौ.....' (6) से घ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से पूर्व घ् को ग्

'अमोस्य' (398) से अम् के अ का लोप

'मोनुस्वारः' (399) से म् को अनुस्वार

■ आर्ष में सुहुमं (सूक्ष्मम्) रूप भी बनता है।

⊙ हलिद्दी (देखें सू. 65)

हलद्दी में 'पथि.....' (44) से इ को अ किया गया है और हलिद्दी में वह कार्य नहीं हुआ है।

⊙ दलिद्दाइ (दरिद्राति—दरिद्र होता है)

दरिद्रा + तिप्

'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्

'द्रे रो नवा' (65) से विकल्प से द्वितीय र् का लोप

'अनादौ....' (6) से द् को द्वित्व

शेष अटइ की तरह

⊙ दलिद्दो (दरिद्रः—धन-रहित)

⊙ हलिद्दो (हरिद्रः—वृक्ष-विशेष, पीला रंग)

इन दोनों रूपों में—

'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्

'द्रे रो नवा' (65) से विकल्प से संयुक्त र् का लोप

'अनादौ....' (6) से द् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

⊙ दालिद्दं (दारिद्र्यम्—निर्धनता, दीनता, आलस्य)

दारिद्र्य + सि

'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्

'द्रे रो नवा' (65) से विकल्प से संयुक्त र् का लोप

'अधो.....' (5) से य् का लोप

'अनादौ.....' (6) से द् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

74. **उतो मुकुलादिष्वत् 1/107**

मुकुलादिषु आदेरुतोत्वं स्यात्। जहिट्ठिलो।

■ मुकुल आदि (शब्दों) में आदि उ को अ होता है।

⊙ जहिट्ठिलो (युधिष्ठिरः—पाण्डु-राजा का ज्येष्ठ पुत्र)

युधिष्ठिर + सि

'आदेर्यो जः' (73) आदि य् को ज्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'उतो मुकुलादिष्वत्' (74) से उ को अ
'ख-घ-थ....' (30) से ध् को ह्
'क-ग-ट....' (13) से ष् का लोप
'अनादौ....' (6) से ठ् को द्वित्व
'द्वितीय....' (14) से ठ् को ट्
'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्
शेष सरो की तरह

75. **मेथि-शिथिर-शिथिल-प्रथमे-थस्य ढः 1/215**

एषु थस्य ढः स्यात्। हापवादः। सिढिलो, मुहलो, चलणो, वलुणो, कलुणो।

■ मेथि, शिथिर, शिथिल तथा प्रथम शब्दों में थ को ढ होता है। 'ख-घ-थ....' (30) सूत्र थ को ह करता है, किन्तु यह सूत्र उसका अपवाद सूत्र है।

⊙ सिढिलो (शिथिरः—ढीला, मन्द)
शिथिर + सि
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'मेथि-शिथिर-शिथिल-प्रथमे थस्य ढः' (75) से थ् को ढ्
'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्
शेष सरो की तरह

⊙ मुहलो (मुखरः—वाचाल)
मुखर + सि
'ख-घ-थ.....' (30) से ख् को ह्
'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्
शेष सरो की तरह

⊙ चलणो (चरणः—पैर)

⊙ वलुणो (वरुणः—लोकान्तिक देवों की एक जाति, छन्द-विशेष)

⊙ कलुणो (करुणः—दीन)
इन सभी रूपों में—
'हदिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्
शेष सरो की तरह

76. **पक्वाङ्ग.ार-ललाटे वा 1/47**

एष्वादेरत इत्वं वा स्यात्। इंगालो, सक्कालो, सउमालो।

■ पक्व, अङ्ग.ार और ललाट (शब्दों) में आदि अ को इ विकल्प से होता है।

⊙ इंगालो (अङ्गारः—जलता हुआ कोयला, जैन साधुओं के लिए भिक्षा का एक दोष)
अङ्गार + सि
'पक्वाङ्ग.ार-ललाटे वा' (76) से आदि अ को इ
'ङञणनो.....' (33) से ङ् को अनुस्वार

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्
शेष सरो की तरह

⊙ सक्कालो (सत्कारः—आदर)
सत्कार + सि
'क-ग-ट....' (13) से त् का लोप
'अनादौ.....' (6) से क् को द्वित्व
'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्
शेष सरो की तरह

⊙ सउमालो (सुकुमारः—कोमल)
सुकुमार + सि
'उतो.....' (74) से आदि उ को अ
'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप
'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्
शेष सरो की तरह

77. **किराते चः 1/183**

किराते कस्य चः स्यात्। चिलाओ। पुलिन्दे एवायं विधिः। कामरूपिणि तु नेष्यते—नमिमो हर-किरायं।

■ किरात (शब्द) में क का च होता है।

⊙ चिलाओ (किरातः—भील)
किरात + सि
'किराते चः' (77) से क् को च्
'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्
'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप
शेष सरो की तरह

■ किरात शब्द का अर्थ 'पुलिन्द' यानि भील हो तभी उसके क को च होता है। इसके अतिरिक्त यदि किरात शब्द कामरूपी (यथेच्छ रूप बनानेवाला) इस अर्थ का बोधक हो तो उसके क को च नहीं होगा। यथा—

⊙ नमिमो हर-किरायं (नमामः हर-किरातम्—कामरूपी शिव को नमस्कार करते हैं)

नमिमो
नम् + मस्
'व्यञ्जना....' (638) से धातु के अंत में अकार का आगम
'तृतीयस्य मो-मु-माः' (625) से मस् को मो
'इच्च मो-मु-मे वा' (642) से विकल्प से अ को इ
वर्ण-सम्मेलन करने पर

हर-किरायं
हरकिरात + अम्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप
'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति
'अमोऽस्य' (398) से अम् के अकार का लोप
'मोनुस्वारः' (399) से म् को अनुस्वार

78. **पाटि-परुष-परिघ-परिखा-पनस-पारिभद्रे फः 1/232**
ञिन्नन्ते पटिधातौ परुषादिषु च पस्य फः स्यात्। फलिहा, फलिहो, फालिहद्दो।

■ ञिन्नन्त पटि धातु तथा परुष, परिघ, परिखा, पनस और पारिभद्र में प को फ होता है।

⊙ फलिहा (परिखा—खाई, किले या नगर के चारों ओर की नहर)
परिखा + सि
'पाटि-परुष-परिघ-परिखा-पनस-पारिभद्रे फः' (78) से प् को फ्
'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्
'ख-घ-थ....' (30) से ख् को ह्
शेष गङ्गा की तरह

⊙ फलिहो (परिघः—अर्गला, लोहे का मुद्गर आदि अस्त्र)

⊙ फालिहद्दो (पारिभद्रः—देवदारु का पेड़, निम्ब का पेड़)
'पाटि-परुष.....' (78) से प् को फ्
'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्
'ख-घ-थ....' (30) से फलिहो में घ् को ह् तथा फालिहद्दो में भ् को ह्
शेष सरो की तरह
इसके अलावा फालिहद्दो में 'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप तथा
'अनादौ.....' (6) से द् को द्वित्व हुआ है।

79. **वितस्ति-वसति-भरत-कातर-मातुलिङ्गे. हः 1/214**
एषु तस्य हः स्यात्। काहलो।

■ वितस्ति, वसति, भरत, कातर और मातुलिङ्ग. में त को ह होता है।

⊙ काहलो (कातरः—डरपोक, अधीर)
कातर + सि
'वितस्ति-वसति-भरत-कातर-मातुलिङ्गे. हः' (79) से त् को ह्
'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्
शेष सरो की तरह

80. **शक्त-मुक्त-दष्ट-रुग्ण-मृदुत्वे को वा 2/2**
एषु संयुक्तस्य को वा स्यात्। लुक्को। अवद्दालं।

■ शक्त, मुक्त, दष्ट, रुग्ण और मृदुत्व में संयुक्त को क विकल्प से होता है।

⊙ लुक्को (रुग्णः—रोगी)
रुग्ण + सि
'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्
'शक्त-मुक्त-दष्ट-रुग्ण-मृदुत्वे को वा' (80) से संयुक्त को क्
'अनादौ....' (6) से क् को द्वित्व

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष सरो की तरह

⊙ अवद्दालं (अपद्वारम्—छोटी खिड़की, गुप्तद्वार)

अपद्वार + सि

'पो वः' (24) से प् को व्

'सर्वत्र....' (9) से व् का लोप

'अनादौ....' (6) से द् को द्वित्व

'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्

शेष कैअवं की तरह

81. **भ्रमरे सो वा 1/244**

भ्रमरे मस्य सो वा स्यात्। भसलो।

■ भ्रमर में म को स विकल्प से होता है।

⊙ भसलो (भ्रमरः—भौंरा)

भ्रमर + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'भ्रमरे सो वा' (81) से विकल्प से म् को स्

'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्

शेष सरो की तरह

82. **ठो ढः 1/199**

स्वरात् परस्यासंयुक्तस्यानादेष्ठस्य ढः स्यात्। जढलं, बढलो निट्ठुलो। इति हरिद्रादिः।

बहुलाधिकाराच्चरणशब्दस्य पदार्थवृत्तेरेव, अन्यत्र चरणकरणं। भ्रमरे स संनियोगे एव अन्यत्र भमरो। तथा जढरं, बढरो, निट्ठुरो इत्याद्यपि। आर्षे दुवालसङ्गे इत्याद्यपि। रलोपविकल्पे,[1] समुद्दो, समुद्रो। ह्रदशब्दस्य स्थितिपरिवृत्तौ द्रह इति रूपम्। तत्र द्रहो, दहो। केचिद् रलोपं नेच्छन्ति। द्रहशब्दमपि कश्चित् संस्कृतं मन्यते। वोद्रहादयस्तु तरुणपुरुषादिवाचका नित्यं रेफसंयुक्ता देश्या एव। सिक्खन्तु वोद्रहीओ। वोद्रह द्रहम्मि पडिआ। सिआ,[1] भविओ, चेइअं, चोरिअं, भारिआ, आयरिओ, सूरिओ, धीरिअं, बम्हचरिअं। गरुलो।[2] प्राय इत्युपादानात् क्वचिद् विकल्पः—बलिसं, बडिसं। दालिमं, दाडिमं। गुलो, गुडो। णाली, णाडी। णलं, णडं। आमेलो, आवेडो। क्वचिन्न—निबिडं, पीडिअं, उडू, तडी। गउडो, नीडं इत्येतावपि यथास्थानं वक्ष्यते। दुवयणं।[3] बहुलाधिकारात् क्वचिद् विकल्पः—दु-उणो, बि-उणो। दुइओ, विइओ। क्वचिन्न—दिओ, दिरओ। क्वचिद् ओत्त्वमपि—दोवयणं। नि—णुमज्जइ। क्वचिन्न—निवडइ। पलिविअं,[4] दोहलो। सेला,[5] तेलोक्कं, एरावणो, वेज्जो, वेहव्वं। थेरो,[6] वेइल्लं, एक्कारो।

---

1 सू. 65 की वृत्ति का शेषांश।

1 सू. 66 की वृत्ति का शेषांष।

2 सू. 67 की वृत्ति का शेषांष।

3 सू. 68 की वृत्ति का शेषांष्च।

4 सू. 69 की वृत्ति का शेषांष।

5 सू. 70 की वृत्ति का शेषांष।

6 सू. 71 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

बाहुलकात् बिअइल्लं इत्यपि। जइ।[7] बाहुलकात् सोपसर्गस्यानादेरपि संजमो, संजोगो। क्वचिन्न—पओगो। आर्षे लोपोपि—अहक्खायं, अहाजायं। अथ[8] मुकुलादिः—मउलं, मउरं, मउडं, अगरुं, गरुई, जहिट्ठिलो।

■ स्वर से परे असंयुक्त और अनादि ठ को ढ होता है।

⊙ जढलं (जठरम्—पेट)

जठर + सि

'ठो ढः' (82) से ठ् को ढ्

'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्

शेष कैअवं की तरह

⊙ बढलो (बठरः—मूर्ख छात्र)

बठर + सि

'ठो ढः' (82) से ठ् को ढ्

'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्

शेष सरो की तरह

⊙ निट्ठुलो (निष्ठुरः—निष्ठुर, परुष)

निष्ठुर + सि

'क-ग-ट-ड....' (13) से ष् का लोप

'अनादौ.....' (6) से ठ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से ठ् को ट्

'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्

शेष सरो की तरह

■ बहुलाधिकार के कारण चरण शब्द का अर्थ पैर होने से ही र को ल होगा। अन्यत्र (जहां चरण का अर्थ चारित्र होगा, वहां र को ल नहीं होगा)—चरणकरणं।

⊙ चरणकरणं (चरणकरणम्—संयम का मूल गुण और उत्तरगुण)

चरणकरण + सि

शेष प्रक्रिया कैअवं की तरह

■ भ्रमर में स के संनियोग में ही (यानि जहां म को स होगा) र को ल होगा। अन्यत्र—भमरो।

⊙ भमरो

भ्रमर + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

शेष सरो की तरह

■ (बहुलाधिकार के कारण कहीं र को ल विकल्प से होता है) तथा—

जढरं, बढरो, निट्ठुरो इत्यादि। इनमें 'हरिद्रादौ लः' (64) से र को ल नहीं हुआ है। शेष साधनिका ऊपर की तरह है।

---

[7] सू. 73 की वृत्ति का शेषांष।

[8] सू. 74 की वृत्ति का शेषांष।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

■ आर्ष में दुवालसङ्गे. (द्वादशाङ्गे—बारह अंग) इत्यादि भी (रूप) बनते हैं।

⊙ समुद्दो, समुद्रो, (समुद्रः—समुद्र, मुद्रा-सहित)

समुद्र + सि

'द्रे रो नवा' (65) से विकल्प से र् का लोप

'अनादौ.....' (6) से द् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

पक्ष में—समुद्रो

■ Ðद शब्द में स्थान-परिवर्तन होने से द्रह रूप बनता है।

⊙ दहो, द्रहो (Ðदः—सरोवर)

Ðद + सि

'Ðदे ह-दोः' (365) से ह् और द् का व्यत्यय

'द्रे रो नवा' (65) से विकल्प से र् का लोप

शेष सरो की तरह

पक्ष में—द्रहो

■ कुछ (व्याकरणाचार्य द्रह शब्द में) र् के लोप की इच्छा नहीं करते हैं। द्रह शब्द को भी कुछ (व्याकरणाचार्य) संस्कृत का मानते हैं (जैसे संस्कृत में 'ह्रद' शब्द आता है, वैसे 'द्रह' भी पाया जाता है)। तरुणपुरुष आदि अर्थों के वाचक 'वोद्रह' आदि शब्द नित्य रेफ-संयुक्त और देश्य[1] (देशीय) ही है (माने गए हैं)।

⊙ सिक्खन्तु वोद्रहीओ (सिक्षन्ताम् तरुण्यः—तरुण स्त्रियां शिक्षा ग्रहण करें)

सिक्खन्तु

शिक्ष् + अन्ताम्

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'व्यञ्जना.....' (638) से धातु के अंत में अकार का आगम

'क्षः खः.....' (26) से क्ष् को ख्

'अनादौ.....' (6) से ख् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से ख् को क्

'बहुषु न्तु ह मो' (627) से अन्ताम् को न्तु आदेश

वर्ण-सम्मेलन करने पर

वोद्रहीओ

तरुणी + जस्

तरुणी अर्थ में देशी शब्द वोद्रही प्रयुक्त करने पर

वोद्रही + जस्

---

1 आचार्य हेमचन्द्र ने देशी शब्द की परिभाषा करते हुए कहा है—

जे लक्खणे ण सिद्धा ण पसिद्धा सक्कयाहिहाणेसु।
ण य गउणलक्खणासत्तिसंभवा ते इह णिबद्धा ॥
देसविसेसपसिद्धीइ भण्णमाणा अणंतया हुन्ति।
तम्हा अणाइपाइअ पयट्टभासाविसेसओ देसी ॥ —देशी नाममाला, आ. हेमचन्द्र, 1/3, 4

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'स्त्रियामुदोतौ वा' (474) से जस् को विकल्प से ओ

वर्ण-सम्मेलन करने पर

⊙ वोद्रह-द्रहम्मि पडिआ (तरुणह्रदे पतिता—तरुण-पुरुष-रूपी तालाब में पड़ी)

वोद्रह-द्रहम्मि

तरुणह्रद + ङि

तरुणार्थक देशी शब्द वोद्रह प्रयुक्त करने पर

वोद्रह-ह्रद + ङि

'ह्रदे ह-दोः' (365) से ह् और द् का व्यत्यय

'डे म्मि ङेः' (409) से ङि को म्मि

वर्ण-सम्मेलन करने पर

पडिआ

पतिता + सि

'सद-पतोर्डः' (849) से त् को ड्

'क-ग-च-ज....' (17) से द्वितीय त् का लोप

शेष गङ्गा की तरह

⊙ सिआ (स्यात्—कदाचित्)

स्यात्—यह अव्यय है

'स्याद्-भव्य....' (66) से य् से पूर्व इ का आगम

'क-ग-च-ज....' (17) से य् का लोप

'अन्त्य.....' (42) से त् का लोप

⊙ भविओ (भव्यः—सुन्दर, मुक्ति-योग्य)

भव्य + सि

'स्याद्-भव्य....' (66) से य् से पूर्व इ का आगम

'क-ग-च-ज....' (17) से य् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ चेइअं (देखें सू. 66)

⊙ चोरिअं (चौर्यम्—चोरी, अपहरण)

चौर्य + सि

'औत ओत्' (49) से औ को ओ

'स्याद्-भव्य.....' (66) से संयुक्त के य् से पूर्व इ का आगम

'क-ग-च-ज....' (17) से य् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ भारिआ (भार्या—पत्नी)

भार्या + सि

'स्याद्-भव्य....' (66) से य् से पूर्व इ का आगम

'क-ग-च-ज......' (17) से य् का लोप

शेष गङ्गा की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ आयरिओ (आचार्यः—गण का नायक, मुखिया, गुरु)

आचार्य + सि

'आचार्ये चोच्च' (146) से च् के आ को अ

'स्याद्-भव्य.....' (66) से य् से पूर्व इ का आगम

'क-ग-च-ज.....' (17) से च् तथा य् का लोप

'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति

शेष सरो की तरह

⊙ सूरिओ (सूर्यः—सूरज)

सूर्य + सि

'स्याद्-भव्य.....' (66) से य् से पूर्व इ का आगम

'क-ग-च-ज....' (17) से य् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ धीरिअं (धैर्यम्—धैर्य)

धैर्य + सि

'ईद् धैर्ये' (205) से ऐ को ई

'स्याद्-भव्य.....' (66) से य् से पूर्व इ का आगम

'क-ग-च-ज....' (17) से य् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ बम्हचरिअं (ब्रह्मचर्यम्—ब्रह्मचर्य व्रत)

ब्रह्मचर्य + सि

'सर्वत्र......' (9) से र् का लोप

'पक्ष्म-श्म.....' (118) से ह्म् को म्ह्

'स्याद्-भव्य.....' (66) से य् से पूर्व इ का आगम

'क-ग-च-ज....' (17) से य् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ गरुलो (गरुडः—गरुड, पक्षी विशेष)

गरुड + सि

'डो लः' (67) से ड् को ल्

शेष सरो की तरह

■ प्रायः शब्द का ग्रहण होने से कहीं विकल्प से डकार को लकार होता है। यथा—

⊙ बलिसं, बडिसं (बडिशम्—मछली पकड़ने का कांटा)

बडिश + सि

'डो लः' (67) से विकल्प से ड् को ल्

'शषोः सः' (16) से श् को स्

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—बडिसं

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ दालिमं, दाडिमं (दाडिमम्—अनार)
दाडिम + सि
'डो लः' (67) से विकल्प से ड् को ल्
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—दाडिमं

⊙ गुलो, गुडो (गुडः—गुड़)
गुड + सि
'डो लः' (67) से विकल्प से ड् को ल्
शेष सरो की तरह
पक्ष में—गुडो

⊙ णाली, णाडी (नाडी—सिरा)
नाडी + सि
'वादौ' (227) से न् को विकल्प से ण्
'डो लः' (67) से विकल्प से ड् को ल्
इकार उच्चारण के लिए
'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप
पक्ष में—णाडी

⊙ णलं, णडं (नडम्—भीतर से पोला शराकार तृण)
नड + सि
'वादौ' (227) से विकल्प से न् को ण्
'डो लः' (67) से विकल्प से ड् को ल्
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—णडं

⊙ आमेलो, आवेडो (आपीडः—फूलों की माला, शिरोभूषण)
आपीड + सि
'नीपापीडे मो वा' (170) से विकल्प से प् को म्
'एत्.....' (45) से ई को ए
'डो लः' (67) से विकल्प से ड् को ल्
शेष सरो की तरह
पक्ष में—आवेडो (देखें सू. 65)

■ (बहुलाधिकार के कारण) कहीं (ड को ल) नहीं भी होता है। यथा—

⊙ निबिडं (निबिडम्—घना, गाढ़)
निबिड + सि
शेष कैअवं की तरह

⊙ पीडिअं (पीडितम्—पीडित)
पीडित + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'क-ग-च....' (17) से त् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ उडू (उडुः—एक देव-विमान)

उडु + सि

'वाक्यर्थ-वचनाद्याः' (613) से स्त्रीलिंग उडु शब्द का विकल्प से पुल्लिंग में प्रयोग

शेष विण्हू की तरह

⊙ तडी (तटी—तट)

तटी + सि

'टो डः' (22) से ट् को ड्

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

⊙ गउडो (गौडः—बंगाल का पूर्वी भाग)

गौड + सि

'अउः पौरादौ च' (211) से औ को अउ

शेष सरो की तरह

⊙ नीडं (नीडम्—घोंसला)

नीड + सि

शेष कैअवं की तरह

⊙ दुवयणं (द्विवचनम्—दो का बोधक व्याकरण-प्रसिद्ध प्रत्यय)

द्विवचन + सि

'द्विन्योरुत्' (68) से इ को उ

'सर्वत्र......' (9) से व् का लोप

'क-ग-च-ज....' (17) से च् का लोप

'अवर्णो....' (19) से य श्रुति

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष कैअवं की तरह

■ (बहुलाधिकार के कारण) कहीं विकल्प से (इ को उ)—

⊙ दु-उणो, बिउणो (द्विगुणः—दुगुना)

द्विगुण + सि

'द्विन्योरुत्' (68) से बहुलाधिकार के कारण विकल्प से इ को उ

'सर्वत्र....' (9) से व् का लोप

'क-ग-च-ज....' (17) से ग् का लोप

शेष सरो की तरह

पक्ष में—बि-उणो (उकार के अभाव में 'क-ग-ट-ड....' (13) से द् का लोप)

⊙ दुइओ, बिइओ (द्वितीयः—दूसरा)

द्वितीय + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'द्विन्योरुत्' (68) से इ को उ
'पानीयादि....' (58) से ई को इ
'क-ग-च-ज.....' (17) से त् तथा य् का लोप
शेष सरो की तरह
पक्ष में—विइओ ('क-ग-ट....' (13) से द् का लोप)

■ (बहुलाधिकार के कारण) कहीं इ को उ नहीं भी होता है। यथा—

⊙ दिओ (द्विजः—ब्राह्मण)

⊙ दिरओ (द्विरदः—हस्ती)

इन दोनों रूपों में—
'सर्वत्र....' (9) से व् का लोप
'क-ग-च-ज....' (17) से दिओ में ज् का तथा दिरओ में द् का लोप
शेष सरो की तरह

■ (बहुलाधिकार के कारण) कहीं इ को ओ भी—

⊙ दोवयणं (द्विवचनम्—दो का बोधक व्याकरण-प्रसिद्ध प्रत्यय)

द्विवचन + सि
'द्विन्योरुत्' (68) से बहुलाधिकार से इ को ओ
शेष दुवयणं की तरह

⊙ णुमज्जइ (निमज्जति—डूबता है)

निमज्जति
'वादौ' (227) से विकल्प से न् को ण्
'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

⊙ निवडइ (निपतति—गिरता है)

निपतति
'पो वः' (24) से प् को व्
'सद-पतोर्डः' (849) से त् को ड्
'क-ग-च-ज.....' (17) से द्वितीय त् का लोप

⊙ पलिविअं (देखें सू. 69)

⊙ दोहलो (दोहदः—गर्भिणी स्त्री का मनोरथ)

दोहद + सि
'प्रदीपि.....' (69) से द् को ल्
शेष सरो की तरह

⊙ सेला (शैला—तीसरी नरक-पृथिवी)

शैला + सि
'ऐत एत्' (70) से ऐ को ए
'शषोः सः' (16) से श् को स्
शेष गङ्गा की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ तेलोक्कं (त्रैलोक्यम्—तीन जगत्-स्वर्ग, मर्त्य और पाताल लोक)

त्रैलोक्य + सि

'ऐत एत्' (70) ऐ को ए

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'अधो.....' (6) से क् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

⊙ एरावणो (ऐरावणः—इन्द्र का हाथी)

ऐरावण + सि

'ऐत एत्' (70) से ऐ को ए

शेष सरो की तरह

⊙ वेज्जो (वैद्यः—चिकित्सक, वृक्ष-विशेष)

वैद्य + सि

'ऐत एत्' (70) से ऐ को ए

'द्यय्य-र्यां जः' (113) से द्य् को ज्

'अनादौ.....' (6) से ज् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

⊙ वेहव्वं (वैधव्यम्—विधवापन)

वैधव्य + सि

'ऐत एत्' (70) से ऐ को ए

'ख-घ-थ....' (30) से ध् को ह्

'अधो....' (5) से य् का लोप

'अनादौ.....' (6) से व् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

⊙ थेरो (स्थविरः—जैन साधु, बूढ़ा)

स्थविर + सि

'क-ग-ट-ड.....' (13) से स् का लोप

'स्थविर.....' (71) से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन के साथ एकार

शेष सरो की तरह

⊙ वेइल्लं (देखें सू. 71)

एक्कारो (अयस्कारः—लोहार)

अयस्कार + सि

'स्थविर......' (71) से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन के साथ एकार

'क-ग-ट-ड.....' (13) से स् का लोप

'अनादौ....' (6) से क् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

■ बहुलाधिकार के कारण (कभी एकार नहीं भी होता है)—

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ विअइल्लं

विचकिल + सि

'क-ग-च-ज....' (17) से च् तथा क् का लोप

'तैलादौ' (62) से ल् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

⊙ जइ (देखें सू. 4)

■ बहुलाधिकार के कारण उपसर्ग सहित अनादि य को भी ज हो जाता है। यथा—

⊙ संजमो (संयमः—चारित्र, हिंसादि पाप-कर्मों से निवृत्ति, शुभ अनुष्ठान)

⊙ संजोगो (संयोगः—सम्बन्ध, मेल-मिलाप)

इन दोनों रूपों में—

'आदेर्यो जः' (73) से बहुलाधिकार के कारण अनादि य् को ज्

शेष सरो की तरह

⊙ कहीं उपसर्ग सहित अनादि य को ज नहीं भी होता है।

⊙ पओगो (प्रयोगः—प्रयोजन, उपाय, जीव का व्यापार)

प्रयोग + सि

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'क-ग-च-ज....' (17) से य् का लोप

शेष सरो की तरह

■ आर्ष (प्राकृत) में (आदि य का) लोप भी—

⊙ अहक्खायं (यथाख्यातम्—निर्दोष चारित्र)

⊙ अहाजायं (यथाजातम्—नग्न, प्रावरण-रहित)

⊙ मउलं (मुकुलम्—थोड़ी विकसित कली, कलिका, देह)

⊙ मउरं (मुकुरम्—फूल की कली, दर्पण, बकुल)

⊙ मउडं (मुकुटम्—शिरो-भूषण, किरीट)

इन तीनों रूपों में—

'उतो.....' (74) से आदि उ को अ

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष कैअवं की तरह

इसके अतिरिक्त मउडं में 'टो डः' (22) से ट् को ड् हुआ है।

⊙ अगरुं (अगुरु—अगर, लकड़ी विशेष)

अगुरु + सि

'उतो.....' (74) से आदि उ को अ

शेष कैअवं की तरह

⊙ गरुई (देखें सू. 73) (यहां 'क-ग-च....' (17) से व् का लोप हुआ है)

⊙ जहिट्ठिलो (देखें सू. 74)

83. **पर्यस्त-पर्याण-सौकुमार्ये ल्लः 2/68**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

एषु र्यस्य ल्लः स्यात्। सोअमल्लं।

■ पर्यस्त, पर्याण और सौकुमार्य में र्य को ल्ल होता है।

⊙ सोअमल्लं (सौकुमार्यम्—सुकुमारता)

सौकुमार्य + सि

'औत ओत्' (49) से औ को ओ

'उतो मुकुलादिष्वत्' (74) से उ को अ

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

'ह्रस्वः.....' (12) से आ को ह्रस्व अ

'पर्यस्त-पर्याण-सौकुमार्ये ल्लः' (83) से र्य् को ल्ल्

शेष कैअवं की तरह

84. **ओत् कूष्माण्डी-तूणीर-कूर्पर-स्थूल-ताम्बूल-गुडूची-मूल्ये 1/124**

एषु ऊत ओत् स्यात्। गलोई। इति मुकुलादिः। क्वचिद् आकारोपि विद्दाओ। मेढी[1], सिढिलो, पढमो। पिक्कं,[2] पक्कं। इंगालो, अङ्गारो।

■ कूष्माण्डी, तूणीर, कूर्पर, स्थूल, ताम्बूल, गुडूची और मूल्य इन शब्दों में ऊ को ओ होता है।

⊙ गलोई (गुडूची—वल्ली-विशेष)

गुडूची + सि

'उतो.....' (74) से आदि उ को अ

'डो लः' (67) से ड् को ल्

'ओत् कूष्माण्डी-तूणीर-कूर्पर-स्थूल-ताम्बूल-गुडूची-मूल्ये' (84) से ऊ को ओ

'क-ग-च-ज....' (17) से च् का लोप

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

■ (बहुलाधिकार के कारण) कहीं उ को आकार भी—

⊙ विद्दाओ (विद्रुतः—विनष्ट, पलायित)

विद्रुत + सि

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'अनादौ....' (6) से द् को द्वित्व

'उतो.....' (74) से बहुलाधिकार से उ को आ

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ मेढी (मेथिः—खलिहान में पशु बांधने का काष्ठ—विशेष, आधार)

मेथि + सि

'मेथि-शिथिर.....' (75) से थ् को ढ्

शेष पारद्धी की तरह

---

[1] सू. 75 की वृत्ति का शेषांश।

[2] सू. 76 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ सिढिलो (शिथिलः—ढीला)

शिथिल + सि

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'मेथि.....' (75) से थ् को ढ्

शेष सरो की तरह

⊙ पढमो (प्रथमः—पहला)

प्रथम + सि

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'मेथि....' (75) से थ् को ढ्

शेष सरो की तरह

⊙ पिक्कं, पक्कं (पक्वम्—पका हुआ)

पक्व + सि

'पक्वाङ्ग.र.....' (76) से आदि अ को विकल्प से इ

'सर्वत्र.....' (9) से व् का लोप

'अनादौ.......' (6) से क् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से इ को अ नहीं करने पर पक्कं बनेगा।

⊙ इंगालो (देखें सू. 76)

पक्ष में—अङ्ग.रो

85. **ललाटे च 1/257**

ललाटे आदेर्लस्य णः स्यात्। णिलाट—इति स्थिते।

■ ललाट में आदि ल को ण होता है।

86. **ललाटे ल-डोः 2/123**

ललाटे लकारडकारयोर्व्यत्ययो वा स्यात्। आदिलकारस्य णविधानात् द्वितीयलकार एवायं विधिः। णिडालं, णिलाडं। णडालं, णलाडं। फरुसो[1], फणसो।

■ ललाट (शब्द) में लकार और डकार का व्यत्यय (स्थान-परिवर्तन) विकल्प से होता है। आदि लकार को ण के विधान से द्वितीय लकार के लिए ही यह विधि है (आदि ल को ण हो जाता है, अतः दूसरे लकार का ही डकार के साथ व्यत्यय होता है)।

⊙ णिडालं, णडालं, णिलाडं, णलाडं (ललाटम्—मस्तक)

ललाट + सि

'पक्वाड्.गार.....' (76) से आदि अ को विकल्प से इ

'ललाटे च' (85) से आदि ल् को ण्

'टो डः' (22) से ट् को ड्

'ललाटे ल-डोः' (86) से विकल्प से लकार और डकार का व्यत्यय

शेष कैअवं की तरह

[1] सू. 78 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

पक्ष में—अ को इ नहीं करने पर णडालं रूप बनेगा।
जहां व्यत्यय नहीं करेंगे वहां णिलाडं, णलाडं रूप बनेगा।

⊙ फरुसो (परुषः—कर्कश, कठोर)

⊙ फणसो (पनसः—कटहर का पेड़)

इन दोनों रूपों में—
'पाटि-परुष......' (78) से प् को फ्
शेष सरो की तरह
इसके अतिरिक्त फरुसो में 'शषोः सः' (16) से ष् को स् तथा
फणसो में 'नो णः' (28) से न् को ण् हुआ है।

87. **स्तस्य थोऽसमस्तस्तम्बे 2/45**

समस्तस्तम्बवर्जिते स्तस्य थः स्यात्। हत्वे—विहत्थी[1], वसही, भरहो, माहुलिंगं। क्वचिन्न—वसई। मातुलुङ्ग.शब्दस्य तु—माउलुंगं। विकल्पेन कत्वे—सक्को[2], मुक्को, डक्को, लुक्को।

■ समस्त ओर स्तम्ब को छोड़कर स्त को थ होता है।

⊙ विहत्थी (वितस्तिः—बारह अंगुल का परिमाण-विशेष)

वितस्ति + सि
'वितस्ति.....' (79) से प्रथम त् को ह्
'स्तस्य थोऽसमस्तस्तम्बे' (87) से स्त् को थ्
'अनादौ.....' (6) से थ् को द्वित्व
'द्वितीय .....' (14) से थ् को त्
शेष पारद्धी की तरह

⊙ वसही (वसतिः—स्थान, आश्रय)

वसति + सि
'वितस्ति....' (79) से त् को ह्
शेष सामिद्धी की तरह

⊙ भरहो (भरतः—भरत चक्रवर्ती)

भरत + सि
'वितस्ति.....' (79) से त् को ह्
शेष सरो की तरह

⊙ माहुलिंगं (मातुलिङ्ग.म्—बीजौरे का फल)

मातुलिङ्ग. + सि
'वितस्ति....' (79) त् को ह्
'ङञणनो.......' से ङ् को अनुस्वार

---

[1] सू. 79 की वृत्ति का शेषांश।
[2] सू. 80 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष कैअवं की तरह

■ (बहुलाधिकार के कारण) कहीं त को ह नहीं भी होता है—

⊙ वसई (वसतिः— स्थान, आश्रय)

वसति + सि

'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप

शेष सामिद्धी की तरह

⊙ माउलुंगं (मातुलुङ्गम्—बीजौरे का फल)

मातुलुङ्ग + सि

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

'ङञणनो.....' (33) से ङ् को अनुस्वार

शेष कैअवं की तरह

⊙ सक्को (शक्तः—समर्थ, शक्ति-युक्त)

⊙ मुक्को (मुक्तः—त्यक्त, मोक्षप्राप्त)

⊙ डक्को (दष्टः—डसा हुआ, दाँत से काटा हुआ)

इन तीनों रूपों में

'शक्त-मुक्त.....' (80) से संयुक्त को विकल्प से क्

'अनादौ......' (6) से क् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

इसके अतिरिक्त—सक्को में 'शषोः सः' (16) से श् को स् तथा

डक्को में 'दशन-दष्ट ......' (270) से विकल्प से द् को ड् हुआ है।

पक्ष में—

सत्तो, मुत्तो—'क-ग-ट-ड.....' (13) से क् का लोप तथा 'अनादौ.....' (6) से त् को द्वित्व करने पर सत्तो मुत्तो बनेगा।

दट्ठो—'ष्टस्या.....' (34) से ष्ट् को ठ् तथा 'अनादौ.......(6)से ठ् को द्वित्व और

द्वितीय ....' (14) से ठ् को ट् करने पर दट्ठो बनेगा।

⊙ लुक्को (देखें सू. 80) पक्ष में—

लुग्गो— रुग्ण + सि

'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्

'निमित्ताभावे नैमित्तिकस्याप्यभावः' इस न्याय से ण् को न्

'अधो.....' (5) से न् का लोप

'अनादौ.....' (6) से ग् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

88. **आत्कृशामृदुकमृदुत्वे वा 1/127**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

एषु आदेर्ऋत आद् वा स्यात्। माउक्कं। पक्षे—सत्तो, मुत्तो, दट्ठो, लुग्गो। माउत्तणं इतिरूपं वक्ष्यमाणतणप्रत्ययेन सेत्स्यति। मढो[1], सढो, कमढो, कुढारो, पढइ। असंयुक्तस्य इति किम्? चिट्ठइ। अनादेरिति किं? हिअए ठाइ।

■ कृशा, मृदुक और मृदुत्व में आदि ऋ को विकल्प से आ होता है।

⊙ माउक्कं (मृदुत्वम्—कोमलता)

मृदुत्व + सि

'आत्कृशामृदुकमृदुत्वे वा' (88) से आदि ऋ को विकल्प से आ

'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप

'शक्त.....' (80) से संयुक्त को क्

'अनादौ.....' (6) से क् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—'त्वस्य डिमा-त्तणौ वा' (586) से त्व प्रत्यय को विकल्प से त्तण प्रत्यय करने पर माउत्तणं बनेगा।

⊙ मढो (मठः—संन्यासियों का आश्रम)

⊙ सढो (शठः—धूर्त, कपटी)

⊙ कमढो (कमठः— तापस विशेष, कच्छप, शल्लकी वृक्ष)

⊙ कुढारो (कुठारः—फरसा)

इन सभी रूपों में—

'ठो ढः' (82) से ठ् को ढ्

शेष सरो की तरह

इसके अतिरिक्त—सढो में 'शषोः सः' (16) से श् को स् हुआ है।

⊙ पढइ (देखें सू. 47)

■ असंयुक्त में (ठ को ढ) ऐसा क्यों?

⊙ चिट्ठइ (तिष्ठति—ठहरता है)

स्था + तिप् (ष्ठां—गतिनिवृतौ)

'स्थष्ठा-थक्क-चिट्ठ-निरप्पाः' (679) से स्था को चिट्ठ आदेश

'त्यादीना.....' (617) से तिप् के स्थान पर इच्

च् अनुबंध जाने पर

वर्ण-सम्मेलन करने पर

यहां संयुक्त होने से ठ को ढ नहीं हुआ।

■ अनादि में ऐसा क्यों?

⊙ हिअए ठाइ (हृदये तिष्ठति—हृदय में ठहरता है)

हिअए

हृदय + ङि

'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ

---

[1] सू. 82 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'क-ग-च-ज....' (17) से द् तथा य् का लोप
'डे म्मि ङेः' (409) से ङि को डे
ड् अनुबन्ध जाने पर
'डित्यन्त्यस्वरादेः' (हेम. 2/1/114) से अंतिम स्वर अ का लोप
'वर्ण-सम्मेलन करने पर

ठाइ

'स्थष्ठा-थक्क.....' (679) से स्था को ठा आदेश
शेष चिट्ठइ की तरह
यहां ल आदि में होने से उसे ढ नहीं हुआ।

89. **पर्यस्ते थ-टौ 2/47**

पर्यस्ते स्तस्य थटौ स्याताम्। ल्लत्वे—पल्लट्टं, पल्लत्थं। पल्लाणं।

■ पर्यस्त में स्त को क्रमशः थ और ट होता है।

⊙ पल्लत्थं, पल्लट्टं (पर्यस्तम्—बिखरा हुआ, घिरा हुआ)
पर्यस्त + सि
'पर्यस्त.....' (83) से र्य् को ल्ल्
'पर्यस्ते थ-टौ' (89) से क्रमशः स्त् को थ् तथा ट्
'अनादौ.....' (6) से थ् तथा ट् को द्वित्व
शेष कैअवं की तरह
इसके अतिरिक्त—पल्लत्थं में 'द्वितीय .....' (14) से थ् को त् हुआ है।

⊙ पल्लाणं (पर्याणम्—घोड़े आदि का साज सामान)
पर्याण + सि
'पर्यस्त.....' (83) से र्य् को ल्ल्
शेष कैअवं की तरह

90. **कूष्माण्ड्यां ष्मो लस्तु ण्डो वा 2/73**

कूष्माण्ड्यां ष्मा इत्येतस्य हः स्यात् ण्ड इत्यस्य तु वा लः स्यात्। कोहली[1], कोहण्डी, तोणीरं, कोप्परं[2]।

■ कूष्माण्डी में 'ष्मा' के स्थान पर 'ह' (नित्य) तथा 'ण्ड' के स्थान पर विकल्प से 'ल' होता है।

⊙ कोहली, कोहण्डी (कूष्माण्डी—कोहँडे का गाछ)
कूष्माण्डी + सि
'ओत् कूष्माण्डी.....' (84) से ऊ को ओ
'ह्रस्वः.........' (12) से आ को अ

---

[1] सू. 84 की वृत्ति का शेषांश।

[2] रकारस्य लोपे कृते, अनादौशेषादेशयो (सू. 6) इति द्वित्वे कृते च, ह्रस्वः संयोगे (12) इति सूत्रेण किं न ह्रस्वत्वम्? उच्यते, विधानबलादिह ह्रस्वत्वं न, चेत् क्रियेत तर्हि ओत्त्वं विधानं निरर्थकं स्यात्।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'कूष्माण्ड्यां ष्मो लस्तु ण्डो वा' (90) से ष्म् को नित्य ह् तथा ण्ड् को विकल्प से ल्

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

पक्ष में—विकल्प से ण्ड् को ल् नहीं करने पर कोहण्डी बनेगा।

⊙ तोणीरं (तूणीरम्—तरकश)

तूणीर + सि

'ओत् कूष्माण्डी....' (84) से ऊ को ओ

शेष कैअवं की तरह

⊙ कोप्परं (कूर्परम्—हाथ का मध्य भाग, नदी का तट)

कूर्पर + सि

'ओत् कूष्माण्डी.....' (84) से ऊ को ओ

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'अनादौ......' (6) से प् को द्वित्व

'गुणाद्याः क्लीबे वा' (614) से पुल्लिंग कूर्पर शब्द नपुंसकलिंग में प्रयुक्त करने पर

शेष कैअवं की तरह

91. **स्थूले लो रः 1/255**

स्थूले लस्य रः स्यात्। थोरं। कथं थूलभद्दो—स्थूरस्य हरिद्रादित्वेन भविष्यति। तम्बोलं, गलोई, मोल्लं। हत्थो[1], थुई, थोत्तं, पत्थरो, अत्थि। असमस्तस्तम्बे इति किम्? समत्तो, तम्बो। कासा[2], किसा।

■ स्थूल में ल को र होता है।

⊙ थोरं (स्थूलम्—मोटा)

स्थूल + सि

'क-ग-ट-ड....' (13) से स् का लोप

'ओत् कूष्माण्डी.....' (84) से ऊ को ओ

'स्थूले लो रः' (91) से ल् को र्

शेष कैअवं की तरह

■ (प्रश्न हो सकता है) 'थूलभद्दो' कैसे बना? उत्तर में वृत्तिकार कहते हैं 'थूलभद्दो' 'स्थूरभद्रः' शब्द से निष्पन्न है। उसमें 'हरिद्रादौ लः' से र को ल हुआ है, प्रस्तुत सूत्र से कोई कार्य नहीं हुआ है।

⊙ थूलभद्दो (स्थूरभद्रः—स्थूलभद्र नामक एक जैन मुनि)

स्थूरभद्र + सि

'क-ग-ट.....' (13) से स् का लोप

'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्

[1] सू. 87 की वृत्ति का शेषांश।

[2] सू. 88 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'द्रे रो नवा' (65) से विकल्प से द्वितीय र् का लोप
'अनादौ......' (6) से द् को द्वित्व
शेष सरो की तरह

⊙ तम्बोलं (ताम्बूलम्—पान)
ताम्बूल + सि
'ह्रस्वः.....' (12) से आ को अ
'ओत् कूष्माण्डी....' (84) से ऊ को ओ
शेष कैअवं की तरह

⊙ गलोई (देखें सू. 84)

⊙ मोल्लं (मूल्यम्—मूल्य)
मूल्य + सि
'ओत् कूष्माण्डी .....' (84) से ऊ को ओ
'अधो.....' (5) से य् का लोप
'अनादौ.....' (6) से ल् को द्वित्व
शेष कैअवं की तरह

⊙ हत्थो (हस्तः—हाथ)

⊙ पत्थरो (प्रस्तरः—पत्थर)
इन दोनों रूपों में
'स्तस्य ....' (87) से स्त् को थ्
'अनादौ....' (6) से थ् को द्वित्व
'द्वितीय......' (14) से थ् को त्
शेष सरो की तरह

इसके अतिरिक्त—पत्थरों में 'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप हुआ है।

⊙ थुई (स्तुतिः—स्तव, गुण-कीर्तन)
स्तुति + सि
'स्तस्य.....' (87) से स्त् को थ्
'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप
शेष सामिद्धी की तरह

⊙ थोत्तं (स्तोत्रम्—स्तुति)
स्तोत्र + सि
'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'स्तस्य.....' (87) से स्त् को थ्
'अनादौ.....' (6) से त् को द्वित्व
शेष कैअवं की तरह

⊙ अत्थि (अस्ति—सत्त्व-सूचक अव्यय, प्रदेश)
अस्ति—यह अव्यय है

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'स्तस्य.....' (87) से स्त् को थ्
'अनादौ.....' (6) से थ् को द्वित्व
'द्वितीय.....' (14) से थ् को त्

■ समस्त और स्तम्ब को छोड़कर ऐसा क्यों?

⊙ समत्तो (समस्तः—सम्पूर्ण, समास-युक्त)

⊙ तम्बो (स्तम्बः—खंभा, गुच्छा, घास का गट्ठा)
इन दोनों रूपों में—
'क-ग-ट-ड....' (13) से स् का लोप
शेष सरो की तरह
इसके अतिरिक्त—समत्तों में 'अनादौ....' (6) से त् को द्वित्व हुआ है।

⊙ कासा, किसा (कृशा—दुर्बल स्त्री)
कृशा + सि
'आत्कृशा ....' (88) से ऋ को विकल्प से आ
'शषोः सः' (16) से श् को स्
शेष गङ्गा की तरह
पक्ष में—'इत्कृपादौ' (21) से ऋ को इ करने पर किसा बनेगा।

92. **सेवादौ वा 2/99**

सेवादिषु अनादौ यथादर्शनमन्त्यस्यानन्त्यस्य च द्वित्वं वा स्यात्। माउक्कं, मउअं। माउक्कं, मउत्तणं।

अथ[1] सेवादिः—सेव्वा, सेवा।

■ सेवा आदि में अनादिभूत अन्त्य (अंतिम) और अनन्त्य व्यंजनों को प्रयोग के अनुसार द्वित्व विकल्प से होता है।

⊙ माउक्कं, मउअं (मृदुकम्—कोमल)
मृदुक + सि
'आत्कृशा.....' (88) से ऋ को आ
'क-ग-च-ज.....' (17) से द् का लोप
'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से क् को द्वित्व
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ तथा
'क-ग-च-ज....' (17) से द् तथा क् का लोप करने पर मउअं बनेगा।

⊙ माउक्कं, मउत्तणं (देखें सू. 88)
मउत्तणं में 'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ किया गया है।

⊙ सेव्वा, सेवा (सेवा—भजन, पर्युपासना, भक्ति, आश्रय)
सेवा + सि
'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से व् को द्वित्व

---
[1] सू. 92 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष गङ्गा की तरह

पक्ष में—सेवा

93. **नीड-पीठे वा 1/106**

अनयोरीत एत्त्वं वा स्यात्। नेड्डं, नीडं। नक्खा, नहा। निहित्तो, निहिओ। बाहित्तो, बाहिओ। माउक्कं, माउअं। एक्को, एओ। वाउल्लो वाउलो। थुल्लो, थोरो। हुत्तं, हूअं।

■ नीड और पीठ शब्दों में ई को ए विकल्प से होता है।

⊙ नेड्डं, नीडं (नीडम्—पक्षि-गृह)

नीड + सि

'नीड-पीठे वा' (93) से विकल्प से ई को ए

'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से ड् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से ई को ए तथा ड् को द्वित्व नहीं करने पर नीडं बनेगा।

⊙ नक्खा, नहा (नखाः—नख)

नख + जस्

'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से ख् को द्वित्व

'द्वितीय..... (14) से ख् को क्

'जश्शसो ....' (396) से जस् का लुक्

'जश्शस्.......' (397) से अ को दीर्घ

पक्ष में—जहां विकल्प से ख् को द्वित्व नहीं करेंगे वहां 'ख-घ-थ........(30) से ख् को ह् करने पर नहा बनेगा।

⊙ निहित्तो, निहिओ (निहितः—स्थापित)

निहित + सि

'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से त् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

पक्ष में—जहां विकल्प से द्वित्व नहीं करेंगे वहां 'क-ग-च.....' (17) से त् का लोप करने पर निहिओ बनेगा।

⊙ बाहित्तो, बाहिओ (व्याहृतः—उक्त, कथित)

व्याहृत + सि

'अधो....' (5) से य् का लोप

'इत्कृपादौ' (21) ऋ को इ

'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से त् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

पक्ष में—जहां विकल्प से द्वित्व नहीं करेंगे वहां 'क-ग-च....' (17) से त् का लोप करने पर बाहिओ बनेगा।

⊙ माउक्कं, माउअं (देखें सू. 92)

⊙ एक्को, एओ (एकः—एक, अकेला)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

एक + सि

'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से क् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

पक्ष में—जहां विकल्प से द्वित्व नहीं करेंगे वहां 'क-ग-च....' (17) से क् का लोप करने पर एओ बनेगा।

⊙ वाउल्लो, वाउलो (व्याकुलः—क्षोभ, घबड़ाया हुआ)

व्याकुल + सि

'अधो....' (5) से य् का लोप

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

'सेवादौ वा' (92) से ल् को विकल्प से द्वित्व

शेष सरो की तरह

पक्ष में—जहां द्वित्व विकल्प से नहीं करेंगे वहां वाउलो बनेगा।

⊙ थुल्लो, थोरो (स्थूलः—मोटा)

स्थूल + सि

'क-ग-ट-ड....' (13) से स् का लोप

'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से ल् को द्वित्व

'Ðस्वः.....' (12) से ऊ को उ

शेष सरो की तरह

पक्ष में—'क-ग-ट....' (13) से स् का लोप

'ओत् कूष्माण्डी....' (84) से ऊ को ओ

'स्थूले लो रः' (91) से ल् को र् करने पर थोरो बनेगा।

⊙ हुत्तं, हूअं (हूतम्—आहूत, हवन किया हुआ)

हूत + सि

'सेवादौ वा' (92) से त् को विकल्प से द्वित्व

'ह्रस्वः....' (12) से ऊ को उ

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—जहां द्वित्व विकल्प से नहीं करेंगे वहां 'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप करने पर हूअं बनेगा।

94. **एच्च दैवे 1/153**

दैवशब्दे ऐत एत् अइश्च इत्यादेशाः स्युः। देव्वं, दइव्वं। तुण्हिक्को, तुण्हिओ। मुक्को, मूओ।

■ दैव शब्द में ऐ को ए तथा अइ आदेश होते हैं।

⊙ देव्वं, दइव्वं (दैवम्—भाग्य, प्रारब्ध)

दैव + सि

'एच्च दैवे' (94) से ऐ को क्रमशः ए तथा अइ

'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से व् को द्वित्व

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष कैअवं की तरह

⊙ तुण्हिक्को, तुण्हिओ (तूष्णीकः—मौन रहा हुआ)

तूष्णीक + सि

'सूक्ष्म.....' (10) से ष्ण् को ण्ह्

'पानीयादि .....' (58) से ई को इ

'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से क् को द्वित्व

'ह्रस्वः ......' (12) से ऊ को ह्रस्व

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से क् को द्वित्व नहीं करेंगे वहां 'क-ग-च.....' (17) से क् का लोप करने पर तुण्हिओ बनेगा।

⊙ मुक्को, मूओ (मूकः—गूंगा)

मूक + सि

'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से क् को द्वित्व

'ह्रस्वः.....' (12) से ऊ को उ

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से द्वित्व नहीं करेंगे वहां 'क-ग-च.....' (17) से क् का लोप करने से मूओ बनेगा।

95. **स्थाणावहरे 2/7**

स्थाणौ संयुक्तस्य खः स्यात्; हरश्चेद् वाच्यो न। खण्णू, खाणू।

■ स्थाणु में संयुक्त को ख होता है, यदि वह हर अर्थ का (महादेव) वाचक न हो तो।

⊙ खण्णू, खाणू (स्थाणुः—अचल, पेड का ठूंठ)

स्थाणु + सि

'स्थाणावहरे' (95) से संयुक्त को ख्

'सेवादौ वा' (92) से ण् को द्वित्व

'ह्रस्वः......' (12) से आ को अ

शेष विण्हू की तरह

पक्ष में—विकल्प से द्वित्व नहीं करने पर खाणू बनेगा।

96. **कुतूहले वा ह्रस्वश्च 1/117**

कुतूहले उत ओद् वा स्यात्, तत्संनियोगे वा ह्रस्वश्च।कोउल्लं, कोऊहल्लं, कुऊहल्लं।

■ कुतूहल में उ को ओ विकल्प से होता है ओर उसके संनियोग में ह्रस्व (ऊ को उ) विकल्प से होता है।

⊙ कोउहलं, कोऊहल्लं, कुऊहल्लं (कुतूहलम्—कौतुक, परिहास)

कुतूहल + सि

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप तथा

'कुतूहले वा ह्रस्वश्च' (96) से विकल्प से उ को ओ तथा ऊ को ह्रस्व करने पर कोउहल

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'कुतूहले....' (96) से विकल्प से उ को ओ तथा
'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप और
'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से ल् को द्वित्व करने पर कोऊहल्ल
'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप तथा
'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से ल् को द्वित्व करने पर कुऊहल्ल
शेष कैअवं की तरह

97. **ई: स्त्यान-खल्वाटे 1/74**

अनयोरादेरातः ईः स्यात्। थिण्णं, थीणं। अनन्त्यस्य—अम्हक्केरं, अम्हकेरं, तंच्चेअ, तंचेअ, सोच्चिअ, सोचिअ इति सेवादिः। पेढं[1], पीढं। अहरे[2] इति किम्? थाणुणो रेहा। खल्लीडो[3]। संखायं इति तु समः स्त्यः खा (678) इति खाऽऽदेशे सिद्धम्।

■ स्त्यान और खल्वाट में आदि आ को ई होता है।

⊙ थिण्णं, थीणं (स्त्यानम्—कठिन, जमा हुआ)
स्त्यान + सि
'अधो.....' (5) से य् का लोप
'स्तस्य....' (87) से स्त् को थ्
'ई: स्त्यान-खल्वाटे' (97) से आ को ई
'नो णः' (28) से न् को ण्
'सेवादौ वा' (92) से ण् को द्वित्व
'ह्रस्वः....' (12) से ई को ह्रस्व
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—थीणं (उपरोक्त में से 'सेवादौ.....' तथा 'ह्रस्वः......' नहीं लगेगा)

■ अनन्त्य के (जो अंतिम व्यंजन नहीं है, उनके द्वित्व के उदाहरण)—

⊙ अम्हक्केरं, अम्हकेरं (अस्मदीयम्—हमारा)
अस्मदीय + सि
'पक्ष्म....' (118) से स्म् को म्ह्
'क-ग-च-ज......' (17) से द् का लोप
'इदमर्थस्य केरः' (578) इदमर्थक ईय को केर
'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से क् को द्वित्व
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—विकल्प से द्वित्व नहीं करेंगे वहां अम्हकेरं बनेगा।

⊙ तंच्चेअ, तंचेअ (तद् एव—उसको ही)
तं
तद् + सि
'अन्त्य....' (42) से द् का लोप

---

[1] सू. 93 की वृत्ति का शेषांश।
[2] सू. 95 की वृत्ति का शेषांश।
[3] सू. 97 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष कैअवं की तरह

च्चेअ

एव—यह अव्यय है

'णइ चेअ चिअ च्च अवधारणे' (529) से एव अर्थ में चेअ का प्रयोग

'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से च् को द्वित्व

पक्ष में—विकल्प से द्वित्व नहीं करेंगे वहां तंचेअ बनेगा।

⊙ सो च्चिअ, सो चिअ (स:एव—वह ही)

सो

तद् + सि

'तदश्च....' (416) से त् को स्

'अन्त्य.....' (42) से द् का लोप

शेष सरो की तरह

च्चिअ

एव—यह अव्यय है

'णइ चेअ....' (529) से एव अर्थ में चिअ का प्रयोग

'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से च् को द्वित्व

पक्ष में—विकल्प से द्वित्व नहीं करेंगे वहां सोचिअ बनेगा।

⊙ पेढं, पीढं (पीठम्—आसन, पीढ़ा)

पीठ + सि

'नीड-पीठे वा' (93) से विकल्प से ई को ए

'ठो ढ:' (82) से ठ् को ढ्

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से ए नहीं करेंगे वहां पीढं बनेगा।

■ हर (महादेवार्थक) को छोड़कर ऐसा क्यों?

⊙ थाणुणो रेहा (स्थाणोः रेखा—महादेव का चिन्ह)

थाणुणो

स्थाणु + ङस्

'क-ग-ट-ड....' (13) से स् का लोप

'ङसि-ङसोः पुंक्लीबे वा' (435) से विकल्प से ङस् को णो

वर्ण-सम्मेलन करने पर

रेहा

रेखा + सि

'ख-घ-थ....' (30) से ख् को ह्

शेष गङ्गा की तरह

⊙ खल्लीडो (खल्वाट:—गंजा)

खल्वाट + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'सर्वत्र.....' (9) से व् का लोप
'अनादौ....' (6) से ल् को द्वित्व
'ईः स्त्यान.....' (97) से आ को ई
'टो डः' (22) से ट् को ड्
शेष सरो की तरह

⊙ संखायं (संस्त्यानम्—संघात, प्रतिशब्द)
संस्त्यै + क्त + सि
'समः स्त्यः खाः' (678) से स्त्यै को खा आदेश
क् अनुबंध जाने पर
'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप
'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति
शेष कैअवं की तरह

98. **दुःख-दक्षिण-तीर्थे वा 2/72**
एषु संयुक्तस्य हो वा स्यात्। दुहं, दुक्खं।

■ दुःख, दक्षिण और तीर्थ में संयुक्त को ह विकल्प से होता है।

⊙ दुहं, दुक्खं (दुःखम्—कष्ट)
दुःख + सि
'दुःख-दक्षिण-तीर्थे वा' (98) से विकल्प से संयुक्त को ह्
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—दुक्खं (देखें सू. 14)

99. **दक्षिणे हे 1/45**
दक्षिणशब्दे आदेरस्य हे परे दीर्घः स्यात्। दाहिणो। हे इति किम्? दक्खिणो।

■ दक्षिण शब्द में ह परे होने पर आदि अ को दीर्घ होता है।

⊙ दाहिणो, दक्खिणो (दक्षिणः—दक्षिण दिशा में स्थिति, दाहिना, निपुण)
दक्षिण + सि
'दुःख-दक्षिण.....' (98) से विकल्प से संयुक्त को ह्
'दक्षिणे हे' (99) से आदि अ को आ
शेष सरो की तरह
पक्ष में—विकल्प से संयुक्त को ह् नहीं करेंगे वहां—
'क्षः खः.....' (26) से क्ष् को ख्
'अनादौ.....' (6) से ख् को द्वित्व
'द्वितीय......' (14) से ख् को क् करने पर
दक्खिणो बनेगा।

100. **तीर्थे हे 1/104**
हे सति तीर्थशब्दे ईत ऊत्त्वं स्यात्। तूहं। हे इति किम्? तित्थं।

■ तीर्थ शब्द में (संयुक्त को) ह होने पर ई को ऊ होता है।

⊙ तूहं, तित्थं (तीर्थम्—पवित्र जगह, प्रवचन, घाट, मत)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

तीर्थ + सि

'दु:ख-दक्षिण.....' (98) से विकल्प से संयुक्त को ह्

'तीर्थे हे' (100) से ई को ऊ

'अनादौ.....' (6) से ह् को द्वित्व की प्राप्ति

'र-हो:' (9) से द्वित्व का निषेध

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से संयुक्त को ह् नहीं करेंगे वहां

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'अनादौ.....' (6) से थ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से थ् को त्

'Ðस्व:......' (12) से ई को इ करने पर

तित्थं बनेगा।

101. **स्त्यान-चतुर्थाऽर्थे वा 2/33**

एषु संयुक्तस्य ठो वा स्यात्। ठीणं, थीणं। चउट्ठो, चउत्थो। अट्ठो (प्रयोजनं), अत्थो (धनं)।

■ स्त्यान, चतुर्थ और अर्थ में संयुक्त को ठ विकल्प से होता है।

⊙ ठीणं, थीणं (स्त्यानम्—कठिन, जमा हुआ)

स्त्यान + सि

'अधो.....' (5) से य् का लोप

'ई: स्त्यान.....' (97) से आ को ई

'स्त्यान-चतुर्थाऽर्थे वा' (101) से विकल्प से संयुक्त को ठ्

'नो ण:' (28) से न् को ण्

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—थीणं (देखें सू. 97)

⊙ चउट्ठो, चउत्थो (चतुर्थ:—चौथा)

⊙ अट्ठो, अत्थो (अर्थ:—प्रयोजन, (अट्ठो), धन (अत्थो))

इन सभी रूपों में—

'स्त्यान.....' (101) से विकल्प से संयुक्त को ठ्

'अनादौ....' (6) से ठ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से ठ् को ट्

शेष सरो की तरह

इसके अलावा चउट्ठो में 'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप हुआ है।

पक्ष में—विकल्प से संयुक्त को ठ् नहीं करेंगे वहां—

'सर्वत्र.......' (9) से र् का लोप

'अनादौ.......(6) से थ् को द्वित्व

'द्वितीय ......' (14) से थ् को त् करने पर चउत्थो, अत्थो बनेगा।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

इसके अलावा चउत्थो में 'क-ग-च.....(17) से त् का लोप हुआ है।

102. **मध्यम-कतमे द्वितीयस्य 1/48**

अनयोः द्वितीयस्यात इत्त्वं स्यात्।

■ मध्यम और कतम में द्वितीय अ को इ होता है।

103. **साध्वस-ध्य-ह्यां झः 2/26**

साध्वसे संयुक्तस्य ध्यह्ययोश्च झः स्यात्। मज्झिसो, कइमो। सज्झसं, गुज्झं।

■ साध्वस में संयुक्त को तथा ध्य और ह्य को झ होता है।

⊙ मज्झिमो (मध्यमः—मध्य-वर्ती, स्वर-विशेष)

मध्यम + सि

'मध्यम-कतमे द्वितीयस्य' (102) से द्वितीय अ को इ

'साध्वस-ध्य-ह्यां झः' (103) से संयुक्त को झ्

'अनादौ....' (6) से झ् को द्वित्व

'द्वितीय....' (14) से झ् को ज्

शेष सरो की तरह

⊙ कइमो (कतमः—बहुत में से कौन सा?)

कतम + सि

'मध्यम....' (102) से द्वितीय अ को इ

'क-ग-च-ज...' (17) से त् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ सज्झसं (साध्वसम्—भय)

⊙ गुज्झं (गुह्यम्—रहस्य, गोपनीय)

इन दोनों रूपों में—

'साध्वस.....' (103) से साध्वस में ध्व् को तथा गुह्य में ह्य् को झ्

'अनादौ....' (6) से झ् को द्वित्व

'द्वितीय....' (14) से झ् को ज्

शेष कैअवं की तरह

इसके अतिरिक्त सज्झसं में 'ह्रस्वः.....' (12) से आ को अ हुआ है।

104. **सप्तपर्णे वा 1/49**

सप्तपर्णे द्वितीयस्यात इत्त्वं वा स्यात्। छत्तिवण्णो, छत्तवण्णो।

■ सप्तपर्ण में द्वितीय अ को इ विकल्प से होता है।

⊙ छत्तिवण्णो, छत्तवण्णो (देखें सू. 65)

छत्तिवण्णो में 'सप्तपर्णे वा' (104) से विकल्प से द्वितीय अ को इ हुआ है, शेष साधनिका छत्तवण्णो की तरह ही है।

105. **ईर्हरे वा 1/51**

हरशब्दे आदेरत ईर्वा स्यात्। हीरो, हरो।

■ हर शब्द में आदि अ को ई विकल्प से होता है।

⊙ हीरो, हरो (हरः—महादेव)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

हर + सि

'ईर्हरे वा' (105) से विकल्प से आदि अ को ई

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से अ को ई नहीं करेंगे वहां हरो बनेगा।

106. **ध्वनि-विष्वचोरुः 1/52**

अनयोरादेरस्य उत्त्वं स्यात्। झुणी, वीसुं।

■ ध्वनि और विष्वक् में आदि अ को उकार होता है।

⊙ झुणी (ध्वनिः—शब्द, अवाज)

ध्वनि + सि

'त्व-थ्व......' (36) से ध्व् को झ्

'ध्वनि-विष्वचोरुः' (106) से आदि अ को उ

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष पारद्धी की तरह

⊙ वीसुं (विष्वक्—सब ओर से)

विष्वक्—यह अव्यय है

'सर्वत्र....' (9) से व् का लोप

'लुप्त.....' (15) से आदि स्वर इ को दीर्घ

'शषोः सः' (16) से ष् को स्

'अनादौ....' (6) से स् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु.....' (18) से द्वित्व का निषेध

'ध्वनि.....' (106) से अ को उ

'वा स्वरे मश्च' (243) से बहुलाधिकार से अन्त्यव्यंजन को मकार

'मोनुस्वारः' (399) से म् को अनुस्वार

107. **चण्डखण्डिते णा वा 1/53**

अनयोरादेरस्य णकारेण सहितस्य उत्त्वं वा स्यात्। चुडं, चंडं। खुडिओ, खंडिओ।

■ चण्ड और खण्डित में आदि अ को णकार सहित उकार विकल्प से होता है।

⊙ चुडं, चंडं (चण्डम्—उग्र, भयानक, तेजस्वी)

चण्ड + सि

'चण्डखण्डिते णा वा' (107) से विकल्प से णकार सहित आदि अ को उ

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—णकार सहित अ को उ नहीं करेंगे वहां 'ङञणनो....' (33) से ण् को अनुस्वार करने पर चंडं बनेगा।

⊙ खुडिओ, खंडिओ (खण्डितः—त्रुटित, विच्छिन्न)

खण्डित + सि

'चण्ड.....' (107) से विकल्प से णकार सहित आदि अ को उ

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष सरो की तरह

पक्ष में—णकार सहित अ को उ नहीं करेंगे वहां 'ङञणनो....' (33) से ण् को अनुस्वार करने पर खंडिओ बनेगा।

108. **गवये वः 1/54**

गवयशब्दे वकाराकारस्य उत्त्वं स्यात्। गउओ।

■ गवय शब्द में वकार के अकार को उकार होता है।

⊙ गउओ (गवयः—नील गाय, पशु-विशेष)

गवय + सि

'गवये वः' (108) से वकार के अकार को उ

'क-ग-च-ज....' (17) से व् तथा य् का लोप

शेष सरो की तरह

109. **प्रथमे पथोर्वा 1/55**

प्रथमशब्दे पकारथकारयोरकारस्य युगपत् क्रमेण च उकारो वा स्यात्। पुढुमं, पढुमं, पुढमं, पढमं।

■ प्रथम शब्द में पकार और थकार के अकार को एक साथ (युगपत्) तथा क्रम से (पहले प के अ को फिर थ के अ को) उकार विकल्प से होता है।

⊙ पुढुमं, पुढमं, पढुमं, पढमं (प्रथमम्—पहला, आद्य, नूतन)

प्रथम + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'प्रथमे पथोर्वा' (109) से विकल्प से प और थ के अ को युगपत् तथा क्रमशः उकार

'मेथि-शिथिर....' (75) से थ् को ढ्

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—युगपत् तथा क्रमशः उकार नहीं करेंगे वहां पढमं बनेगा।

110. **ज्ञो णत्वेभिज्ञादौ 1/56**

अभिज्ञादिषु[1] ज्ञस्य णत्वे कृते ज्ञस्यैव अत उत्त्वं स्यात्। अहिण्णू, सव्वण्णू, कयण्णू, आगमण्णू। णत्वे इति किम्?

■ अभिज्ञा आदि में ज्ञ को ण (आदेश) करने पर ज्ञ के ही अ को उकार होता है।

⊙ अहिण्णू (अभिज्ञः—अच्छी तरह जानने वाला, निपुण, ज्ञाता)

⊙ सव्वण्णू (सर्वज्ञः—सर्व पदार्थों का जानकार)

⊙ कयण्णू (कृतज्ञः—किये हुए उपकार की कदर करने वाला)

---

[1] येषां ज्ञस्य णत्वे सति उत्त्वं दृश्यते तेऽभिज्ञादयः।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ आगमण्णू (आगमज्ञः—शास्त्रों का जानकार)

इन सभी रूपों में—

'म्नज्ञोर्णः' (47) से ज्ञ् को ण्

'ज्ञो णत्वेभिज्ञादौ' (110) से ण् के अ को उ

'अनादौ.....' (6) से ण् को द्वित्व

शेष विण्हू की तरह

इसके अतिरिक्त—अहिण्णू में 'ख-घ-थ.....' (30) से भ् को ह्

सव्वण्णू में 'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप तथा 'अनादौ....' (6) से व् को द्वित्व

कयण्णू में 'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ, 'क-ग-च....' (17) से त् का लोप तथा 'अवर्णो....' (19) से य श्रुति हुई है।

■ णकार करने पर (अ को उ) ऐसा क्यों?

111. **ज्ञो ञः 2/83**

ज्ञसंबंधिनो ञस्य लुग् वा स्यात्। अहिज्जो, सव्वज्जो। म्न-ज्ञोर्णः (सू. 47) इति सूत्रेण णत्वं, लुगभावपक्षे एव। अभिज्ञादावितिकिम्? पण्णो। क्वचिद् ञस्य लुग् न। विण्णाणं।

■ ज्ञ[1] से सम्बन्धित ञकार का विकल्प से लोप होता है।

⊙ अहिज्जो (अभिज्ञः—निपुण, ज्ञाता)

⊙ सव्वज्जो (सर्वज्ञः—सर्व पदार्थों का जानकार)

इन दोनों रूपों में—

'ज्ञो ञः' (111) से विकल्प से ञ् का लोप

'अनादौ....' (6) से ज् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

इसके अतिरिक्त—अहिज्जो में 'ख-घ-थ.....' (30) से भ् को ह्

सव्वज्जो में 'सर्वत्र ......'(9) से र् का लोप तथा 'अनादौ.....' (6) से व् को द्वित्व हुआ है।

■ 'म्नज्ञोर्णः' इस सूत्र से णकार, लुक् के अभाव पक्ष में ही होता है (जहां ञकार का विकल्प से लोप नहीं होगा वहां)। इसलिए यहां ज्ञकार को णकार नहीं हुआ है।

अभिज्ञ आदि में (अ को उ) ऐसा क्यों?

⊙ पण्णो (प्रज्ञः—जानकार, दक्ष, निपुण)

प्रज्ञ + सि

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'म्नज्ञोर्णः' (47) से ज्ञ् को ण्

'अनादौ....' (6) से ण् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

---

[1] संस्कृत भाषा के नियमानुसार जकार और ञकार मिलकर ज्ञकार बनता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

■ (बहुलाधिकार के कारण) कहीं अकार का लोप नहीं भी होता है। यथा—

⊙ विण्णाणं (विज्ञानम्—निश्चयात्मक ज्ञान)

विज्ञान + सि

'म्नज्ञोर्णः' (47) से ज्ञ् को ण्

'अनादौ.....' (6) से ण् को द्वित्व

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष कैअवं की तरह

112. **एच्छय्यादौ 1/57**

शय्यादिषु आदेरस्य एत्त्वं स्यात्।

■ शय्या आदि में आदि अ को एकार होता है।

113. **द्य-य्य-र्यां जः 2/24**

एषु संयुक्तानां जः स्यात्। सेज्जा।[2]

■ द्य, य्य, र्य इन संयुक्त वर्णों के स्थान पर ज होता है।

⊙ सेज्जा (शय्या—सेज, घर, वसति, उपाश्रय)

शय्या + सि

'एच्छय्यादौ' (112) से आदि अ को ए

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'द्य-य्य-र्यां जः' (113) से संयुक्त य्य् को ज्

'अनादौ....' (6) से ज् को द्वित्व

शेष गङ्गा की तरह

114. **मरकत-मदकले गः कंदुके त्वादेः 1/182**

अनयोः कस्य गः स्यात् कंदुकेत्वाद्यस्य। गेंदुअं, एत्थ।

■ मरकत और मदकल के क को तथा कंदुक में आदि क को ग होता है।

⊙ गेंदुअं (कन्दुकम्—गेंद)

कन्दुक + सि

'मरकत-मदकले गः कंदुके त्वादेः' (114) से आदि क् को ग्

'एच्छय्यादौ' (112) से आदि अ को ए

'ङञणनो....' (33) से न् को अनुस्वार

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ एत्थ (अत्र—यहां)

अत्र—यह अव्यय है

'एच्छय्यादौ' (112) से आदि अ को ए

'त्रपो हि-ह-त्थाः' (596) से त्र को त्थ आदेश

115. **उत्सौन्दर्यादौ 1/160**

---

[2] सू. 112 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

सौन्दर्यादिषु औत उत् स्यात्।

■ सौन्दर्य आदि में औ को उ होता है।

116. **ब्रह्मचर्य-तूर्य-सौन्दर्य-शौण्डीर्ये र्यो रः 2/63**

एषु र्यस्य रः स्यात्। जापवादः। सुन्देरं[1]। आर्षे-पुरेकम्मं। मज्जं[2], भज्जा, कज्जं, वज्जं, पज्जाओ, मज्जाया, मरगयं[3], मयगलो। अथ सौन्दर्यादिः—सुंदेरं, मुंजायणो, सुण्डो, सुद्धोअणी, दुवारिओ, सुगंधत्तणं, पुलोमी, सुवण्णिओ। इति सौन्दर्यादिः।

■ ब्रह्मचर्य, तूर्य, सौन्दर्य और शौण्डीर्य में र्य को र होता है। ज का अपवाद है।

⊙ सुन्देरं (सौन्दर्यम्—सुन्दरता)

सौन्दर्य + सि

'उत्सौन्दर्यादौ' (115) से औ को उ

'एच्छय्यादौ' (112) से आदि अ को ए

'ब्रह्मचर्य-तूर्य-सौन्दर्य-शौण्डीर्ये र्यो रः' (116) से र्य् को र्

'अनादौ........' (6) से र् को द्वित्व की प्राप्ति

'र-होः' (17) से द्वित्व का निषेध

शेष कैअवं की तरह

■ आर्ष में 'पुरेकम्मं' (पुराकर्म-पूर्व का कर्म) भी बनता है।

⊙ मज्जं (मद्यम्—दारू)

⊙ कज्जं (कार्यम्—प्रयोजन, काम, करने योग्य)

⊙ वज्जं (वर्यम्-श्रेष्ठ, प्रधान)

इन तीनों रूपों में—

'द्य-य्य.....' (113) से क्रमशः द्य्, र्य् को ज्

'अनादौ....' (6) से ज् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

इसके अतिरिक्त कज्जं में 'ह्रस्वः.....' (12) से आ को अ हुआ है।

⊙ भज्जा (भार्या—पत्नी)

⊙ मज्जाया (मर्यादा—व्यवस्था, सीमा, अवधि, किनारा)

इन दोनों रूपों में—

'द्य-य्य.....' (113) से र्य् को ज्

'अनादौ.....' (6) से ज् को द्वित्व

शेष गङ्गा की तरह

इसके अतिरिक्त भज्जा में 'ह्रस्वः......' (12) से आ को अ

मज्जाया में 'क-ग-च.....' (17) से द् का लोप तथा

'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति हुई है।

---

[1] सू. 115 की वृत्ति का शेषांश।

[2] सू. 113 की वृत्ति का शेषांश।

[3] सू. 114 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ पज्जाओ (पर्यायः—समान अर्थ का वाचक शब्द, पदार्थ-धर्म, क्रम)

पर्याय + सि

'द्य-य्य....' (113) से र्य् को ज्

'अनादौ.....' (6) से ज् को द्वित्व

'क-ग-च-ज.....' (17) से य् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ मरगयं (मरकतम्—नील वर्णवाला रत्न-विशेष, पन्ना)

मरकत + सि

'मरकत.....' (114) से क् को ग्

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

'अवर्णो......' (19) से य श्रुति

शेष कैअवं की तरह

⊙ मयगलो (मदकलः—मद से उत्कट, हाथी)

मदकल + सि

'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप

'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति

'मरकत....' (114) से क् को ग्

शेष सरो की तरह

⊙ सुंदेरं (देखें इसी सूत्र में सुन्देरं)

यहां 'ङञणनो.....' (33) से न् को अनुस्वार हुआ है।

⊙ मुंजायणो (मौञ्जायनः—ऋषि-विशेष)

मौञ्जायन + सि

'उत्सौन्दर्यादौ' (115) से औ को उ

'ङञणनो......' (33) से ञ् को अनुस्वार

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष सरो की तरह

⊙ सुण्डो (शौण्डः—मत्त, मद्यप, दक्ष)

शौण्ड + सि

'शषोः सः' (16) श् को स्

'उत्सौन्दर्यादौ' (115) से औ को उ

शेष सरो की तरह

⊙ सुद्धोअणी (शौद्धोदनिः—बुद्धदेव)

शौद्धोदनि + सि

'शषोः सः (16) से श् को स्

'उत्सौन्दर्यादौ' (115) से औ को उ

'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप

'नो णः' (28) से न् को ण्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष पारद्धी की तरह

⊙ दुवारिओ (दौवारिकः—द्वारपाल)

दौवारिक + सि

'उत्सौन्दर्यादौ' (115) से औ को उ

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ सुगंधत्तणं (सौगन्ध्यम्—सुगन्धि)

सुगंध + ष्यञ् + सि

'त्वस्य डिमा-त्तणौ वा' (586) से त्व अर्थ में आने वाले ष्यञ् प्रत्यय को विकल्प से त्तण

वर्ण-सम्मेलन करने पर

सुगंधत्तण + सि

शेष कैअवं की तरह

⊙ पुलोमी (पौलोमी—इन्द्राणी)

पौलोमी + सि

'उत्सौन्दर्यादौ' (115) से औ को उ

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य......' (42) से स् का लोप

⊙ सुवण्णिओ (सौवर्णिकः—सुवर्ण-मय, सोने का बना हुआ)

सौवर्णिक + सि

'उत्सौन्दर्यादौ' (115) से औ को उ

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'अनादौ.....' (6) से ण् को द्वित्व

'क-ग-च-ज.....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

117. **ब्रह्मचर्ये चः 1/59**

ब्रह्मचर्ये चस्य अत एत्त्वं स्यात्।

■ ब्रह्मचर्य में चकार के अ को एकार होता है।

118. **पक्ष्म-श्म-ष्म-स्म-ह्मां म्हः 2/74**

पक्ष्मसंबंधिक्ष्मस्य श्मादीनां च म्ह इत्यादेशः स्यात्। बम्हचेरं[1], तूरं, सोण्डीरं। पम्हाइं[2]।

■ पक्ष्म संबंधि क्ष्म को तथा श्म, ष्म, स्म और ह्म को म्ह आदेश होता है।

⊙ बम्हचेरं, बंभचेरं (ब्रह्मचर्यम्—मैथुन से निवृत्ति)

ब्रह्मचर्य + सि

'सर्वत्र......' (9) से र् का लोप

---

[1] सू. 116 की वृत्ति का शेषांश।

[2] सू. 118 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'पक्ष्म-श्म......' (118) से ह्म् को म्ह्
'ब्रह्मचर्ये चः' (117) से च के अ को ए
'ब्रह्मचर्य-तूर्य....' (116) से र्य् को र्
'अनादौ.....' (6) से र् को द्वित्व की प्राप्ति
'र-होः' (7) से द्वित्व का निषेध
शेष कैअवं की तरह
इसके अलावा बंभचेरं में 'पक्ष्म.....' (118) से बहुलाधिकार ह्म् को म्भ् तथा 'मोनुस्वारः' (399) से म् को अनुस्वार हुआ है।

⊙ तूरं (तूर्यम्—वाद्य, बाजा)
तूर्य + सि
'ब्रह्मचर्य-तूर्य....' (116) से र्य् को र्
'अनादौ....' (6) से र् को द्वित्व की प्राप्ति
'र-होः' (7) से द्वित्व का निषेध
शेष कैअवं की तरह

⊙ सोण्डीरं (शौण्डीर्यम्—पराक्रम, गर्व)
शौण्डीर्य + सि
'औत ओत्' (49) से औ को ओ
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'ब्रह्मचर्य-तूर्य....' (116) से र्य् को र्
'अनादौ....' (6) से र् को द्वित्व की प्राप्ति
'र-होः' (7) से द्वित्व का निषेध
शेष कैअवं की तरह

⊙ पम्हाइं (पक्ष्माणि—आंखों के बाल)
पक्ष्मन् + जस्
'पक्ष्म-श्म.....' (118) से क्ष्म् को म्ह्
'अन्त्य.....' (42) से न् का लोप
'जश्शस्-ई-इं-णयः सप्राग्दीर्घाः' (488) से जस् को इं तथा अ को दीर्घ
वर्ण-सम्मेलन करने पर

119. **आत्कश्मीरे 1/100**
कश्मीरे ईत आत् स्यात्।

■ कश्मीर में ई को आ होता है।

120. **कश्मीरे म्भो वा 2/60**

कश्मीरे संयुक्तस्य म्भो वा स्यात्। कम्भारो। पक्षे म्हत्वे—कम्हारो[1], गिम्हो, विम्हओ। क्वचित् म्भोपि दृश्यते—बम्भणो, बंभचेरं। क्वचिन्न—रस्सी, सरो।

---

[1] सू. 118 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

■ कश्मीर में संयुक्त को म्भ विकल्प से होता है।

⊙ कम्भारो, कम्हरो (कश्मीरः—एक प्रसिद्ध देश)

कश्मीर + सि

'कश्मीरे म्भो वा' (120) से संयुक्त को विकल्प से मी्

'आत्कश्मीरे' (119) से ई को आ

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से संयुक्त को म्भ् नहीं करेंगे वहां 'पक्ष्म-श्म......' (118) से श्म् को म्ह् करने पर कम्हारो बनेगा।

⊙ गिम्हो (ग्रीष्मः—ग्रीष्म-ऋतु)

ग्रीष्म + सि

'सर्वत्र ....' (9) से र् का लोप

'ह्रस्वः......' (12) से ई को इ

'पक्ष्म.....' (118) से ष्म् को म्ह्

शेष सरो की तरह

⊙ विम्हओ (विस्मयः—आश्चर्य)

विस्मय + सि

'पक्ष्म....' (118) से स्म् को म्ह्

'क-ग-च-ज....' (17) से य् का लोप

शेष सरो की तरह

■ कहीं पर (बहुलाधिकार के कारण हम् के स्थान पर) म्भ् भी दिखाई देता है। यथा—

⊙ बम्भणो (ब्राह्मणः—द्विज)

ब्राह्मण + सि

'सर्वत्र......' (9) से र् का लोप

'ह्रस्वः......' (12) से आ को अ

'पक्ष्म.....' (118) से बहुलाधिकार के कारण म्ह् को म्भ्

शेष सरो की तरह

⊙ बंभचेरं (देखें सू. 118)

■ कहीं (बहुलाधिकार के कारण श्म्, स्म् आदि को म्ह्) नहीं भी होता है। यथा—

⊙ रस्सी (रश्मिः—किरण)

रश्मि + सि

'अधो.....' (5) से म् का लोप

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'अनादौ.....' (16) से स् को द्वित्व

शेष पारद्धी की तरह

⊙ सरो (देखें सू. 5)

121. **वल्ल्युत्कर-पर्यन्ताश्चर्ये वा 1/58**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

एषु आदेरस्य एत्त्वं वा स्यात्। वेल्ली, वल्ली। उक्केरो, उक्करो।

■ वल्ली, उत्कर, पर्यन्त और आश्चर्य में आदि अ को ए विकल्प से होता है।

⊙ वेल्ली, वल्ली (वल्ली—लता)

वल्ली + सि

'वल्ल्युत्कर-पर्यन्ताश्चर्ये वा' (121) से विकल्प से अ को ए

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप

पक्ष में—विकल्प से ए नहीं करने पर वल्ली बनेगा।

⊙ उक्केरो, उक्करो (उत्करः—समूह, कर-रहित)

उत्कर + सि

'क-ग-ट-ड......' (13) से त् का लोप

'अनादौ......' (6) से क् को द्वित्व

'वल्ल्युत्कर.....' (121) से विकल्प से आदि अ को ए

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से ए नहीं करने पर उक्करो बनेगा।

122. **एतः पर्यन्ते 2/65**

पर्यन्ते एकारात् परस्य र्यस्य रः स्यात्। पेरंतो, पज्जंतो।

■ पर्यन्त में एकार से परे र्य को र होता है।

⊙ पेरंतो, पज्जंतो (पर्यन्तः—सीमा, प्रान्तभाग)

पर्यन्त + सि

'वल्ल्युत्कर.....' (121) से आदि अ को विकल्प से ए

'एतः पर्यन्ते' (122) से र्य् को र्

'ङञणनो.....' (33) से न् को अनुस्वार

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से एकार नहीं करेंगे वहां 'द्य-य्य....' (113) से र्य् को ज् तथा 'अनादौ....' (6) से ज् को द्वित्व करने पर पज्जंतो बनेगा।

123. **आश्चर्ये 2/66**

आश्चर्ये एतः परस्य र्यस्य रः स्यात्। अच्छेरं।

■ आश्चर्य में एकार से परे र्य को र होता है।

⊙ अच्छेरं (आश्चर्यम्—विस्मय, चमत्कार)

आश्चर्य + सि

'ह्रस्वः.....' (12) से आ को अ

' ह्रस्वात्......' (40) से श्च् को छ्

'अनादौ......' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से छ् को च्

'वल्ल्युत्कर....' (121) से अ को विकल्प से ए ह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'आश्चर्ये' (123) से र्य् को र्

शेष कैअवं की तरह

124. **अतोरिआर-रिज्ज-रीअं 2/67**

आश्चर्ये अकारात् परस्य र्यस्य रिअ, अर, रिज्ज, रीअ एते आदेशाः स्युः। अच्छरिअं, अच्छअरं, अच्छरिज्जं, अच्छरीअं।

■ आश्चर्य में अकार से परे र्य को रिअ, अर, रिज्ज और रीअ ये आदेश होते हैं।

⊙ अच्छरिअं, अच्छअरं, अच्छरिज्जं, अच्छरीअं (आश्चर्यम्—विस्मय)

आश्चर्य + सि

' ह्रस्वः.....' (12) से आ को अ

' ह्रस्वात् ......' (40) से श्च् को छ्

'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से छ् को च्

'अतोरिआर-रिज्ज-रीअं' (124) से र्य को क्रमशः रिअ, अर, रिज्ज और रीअ आदेश

शेष कैअवं की तरह

125. **तोऽन्तरि 1/60**

अन्तरशब्दे तस्य अत एत्त्वं स्यात्। अंतेउरं, अंतेआरी। क्वचिन्न—अंतग्गयं, अंतो-वीसम्भनिवेसिआणं।

■ अन्तर शब्द में त के अ को एकार होता है।

⊙ अंतेउरं (अन्तःपुरम्—राजस्त्रियों का निवास-गृह)

अन्तर्पुर + सि

'ङञणनो.....' (33) से न् को अनुस्वार

'तोऽन्तरि' (125) से त के अ को ए

'अन्त्य......' (42) से वाक्य की अपेक्षा र् का लोप

'क-ग-च-ज....' (17) से प् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ अंतेआरी (अन्तश्चारी—बीच में जाने वाला)

अन्तर्चारिन् + सि

'ङञणनो.....' (33) से न् को अनुस्वार

'तोऽन्तरि' (125) से त के अ को ए

'अन्त्य.....' (42) से र् (वाक्य की अपेक्षा) तथा न् का लोप

'क-ग-च-ज....' (17) से च् का लोप

शेष पारद्धी की तरह

■ कहीं (बहुलाधिकार के कारण त के अ को ए) नहीं भी होता है। यथा—

⊙ अंतग्गयं (अन्तर्गतम्—मध्यवर्ती)

अन्तर्गत + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'ङअणनो.....' (33) से न् को अनुस्वार
'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप
'अनादौ.....' (6) से ग् को द्वित्व
'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप
'अवर्णो .....' (19) से य श्रुति
शेष कैअवं की तरह

⊙ अंतो-वीसम्भनिवेसिआणं (अन्तर्विस्रम्भनिवेशितानाम्—जिनके हृदय में विश्वास रहा हुआ है, उनके)
अन्तर्विस्रम्भनिवेशित + आम्
'ङअणनो.....' (33) से न् को अनुस्वार
'र: पदान्ते विसर्गस्तयो:' (1/3/53) से रेफ का विसर्ग
'अतो डो विसर्गस्य' (387) से विसर्ग को डो
ड् अनुबंध जाने पर
'डित्यन्त्यस्वरादे:' (हेम. 2/1/114) से अंतिम स्वर अ का लोप
'अज्झीनं परेण संयोज्यम्' इस न्याय से मिलाने पर
'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'लुप्त.....' (15) से इ को दीर्घ
'अनादौ....' (6) से स् को द्वित्व की प्राप्ति
'न दीर्घानु.....' (18) से द्वित्व का निषेध
'शषो: स:' (16) से श् को स्
'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप
'टा-आमोर्ण:' (401) से आम् को ण आदेश
'जश्शस्.....' (397) से अ को दीर्घ
'क्त्वा-स्यादेर्ण-स्वोर्वा' (402) से णकार के अंत में अनुस्वार का आगम
वर्ण-सम्मेलन करने पर

126. **पद्म-छद्म-मूर्ख-द्वारे वा 2/112**

एषु संयुक्तस्यान्त्यव्यञ्जनात् पूर्व उद् वा स्यात्। पउमं। पक्षे—

■ पद्म, छद्म, मूर्ख और द्वार में संयुक्त के अन्त्य व्यंजन से पूर्व उ विकल्प से होता है।

⊙ पउमं, पोम्मं (पद्मम्—सूर्य-विकासी कमल)
पद्म + सि
'पद्म-छद्म-मूर्ख-द्वारे वा' (126) से विकल्प से संयुक्त के अन्त्य व्यंजन से पूर्व उ
'क-ग-च-ज.....' (17) से द् का लोप
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—विकल्प से अन्त्य व्यंजन से पूर्व उ नहीं करेंगे वहां
'ओत् पद्मे' (127) से आदि अ को ओ
'क-ग-ट-ड.....' (13) से द् का लोप
'अनादौ.....' (6) से म् को द्वित्व करने पर पोम्मं बनेगा।

127. **ओत् पद्मे 1/61**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

पद्मशब्दे आदेरत ओत्त्वं स्यात्। पोम्मं[1], छउमं, छम्मं। मुरुक्खो, मुक्खो। दुवारं। पक्षे—

■ पद्म शब्द में आदि अ को ओकार होता है।

⊙ पोम्मं (देखें सू. 126)

⊙ छउमं, छम्मं (छद्मम्—कपट, माया, बहाना)

छद्मन् + सि

'पद्म-छद्म.....' (126) से विकल्प से संयुक्त के अन्त्य व्यंजन से पूर्व उ

'क-ग-च-ज.....' (17) से द् का लोप

'अन्त्य.....' (42) से न् का लोप

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से अन्त्य व्यंजन से पूर्व उ नहीं करेंगे वहां

'क-ग-ट-ड....' (13) से द् का लोप

'अनादौ....' (6) से म् को द्वित्व करने पर

छम्मं बनेगा।

⊙ मुरुक्खो, मुक्खो (मूर्खः—अज्ञानी, बेवकूफ)

मूर्ख + सि

'ह्रस्वः.....' (12) से ऊ को उ

'पद्म-छद्म......' (126) से विकल्प से संयुक्त के अन्त्य व्यंजन से पूर्व उ

'अनादौ......' (6) ख् को द्वित्व

'द्वितीय......' (14) से ख् को क्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से अन्त्य व्यंजन से पूर्व उ नहीं करेंगे वहां

'ह्रस्वः.....' (12) से ऊ को उ

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'अनादौ....' (6) से ख् को द्वित्व

'द्वितीय....' (14) से ख् को क् करने पर मुक्खो बनेगा।

⊙ दुवारं, देरं (द्वारम्—दरवाजा)

द्वार + सि

'पद्म-छद्म.....' (126) से विकल्प से संयुक्त के अन्त्य व्यंजन से पूर्व उ

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से अन्त्य व्यंजन से पूर्व उ नहीं करेंगे वहां

'द्वारे वा' (128) से विकल्प से आ को ए

'सर्वत्र.....' (9) से व् का लोप करने पर देरं बनेगा।

128. **द्वारे वा 1/79**

---

[1] सू. 126 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

द्वारशब्दे आत एद् वा स्यात्। देरं। पक्षे वारं, दारं। कथं[1] नेरइओ नारइओ? नैरयिकनारयिकशब्दयोर्भविष्यति। आर्षे अन्यत्रापि—पच्छेकम्मं, असहेज्ज देवासुरी।

■ द्वार शब्द में आ को ए विकल्प से होता है।

⊙ देरं (देखें सू. 127)

⊙ वारं, दारं (देखें सू. 10)

■ प्रश्न उपस्थित होता है कि नेरइओ, नारइओ कैसे बना? क्या इसी सूत्र से नारयिक शब्द में आ को ए विकल्प से हुआ है? तब समाधान में वृत्तिकार कहते हैं कि ये दोनों रूप नैरयिक और नारयिक नामक अलग-अलग शब्दों से निष्पन्न हैं। ('द्वारे वा' सूत्र से यहां कुछ कार्य नहीं हुआ है)

⊙ नेरइओ (नैरयिकः—नरक-सम्बन्धी, नरक में उत्पन्न प्राणी)
 नैरयिक + सि
 'ऐत एत्' (70) से ऐ को ए
 'क-ग-च-ज....' (17) से य् तथा क् का लोप
 शेष सरो की तरह

⊙ नारइओ (नारयिकः—नरक का जीव)
 नारयिक + सि
 'क-ग-च-ज....' (17) से य् तथा क् का लोप
 शेष सरो की तरह

■ आर्ष में अन्यत्र भी (आ को ए हो जाता है)—

⊙ पच्छेकम्मं (पश्चात्कर्म—बाद की क्रिया, यतियों की भिक्षा का दोष)

⊙ असहेज्ज देवासुरी (असाहाय्य देवासुरी—सहायता रहित देव और राक्षस)

129. **नमस्कार-परस्परे द्वितीयस्य 1/62**
 अनयोर्द्वितीयस्य अत ओत्त्वं स्यात्। नमोक्कारो, परोप्परं।

■ नमस्कार और परस्पर में द्वितीय अ को ओकार होता है।

⊙ नमोक्कारो (नमस्कारः—प्रणाम, जैनशास्त्र में प्रसिद्ध मंत्र-विशेष)
 नमस्कार + सि
 'नमस्कार-परस्परे द्वितीयस्य' (129) से द्वितीय अ को ओ
 'क-ग-ट-ड.....' (13) से स् का लोप
 'अनादौ.....' (6) से क् को द्वित्व
 शेष सरो की तरह

⊙ परोप्परं (परस्परम्—आपस में)
 परस्पर + सि
 'नमस्कार.....' (129) से द्वितीय अ को ओ
 'क-ग-ट-ड.....' (13) से स् का लोप
 'अनादौ.....' (6) से प् को द्वित्व
 शेष कैअवं की तरह

---
[1] सू. 128 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

130. **नात् पुनर्यादाई वा 1/65**

नञः परे पुनः शब्दे आदेरस्य आद्, आइ इत्यादेशौ वा स्तः। न उणा, न उणाइ, न उण, न उणो। केवस्यापि दृश्यते—पुणाइ।

■ नञ् से परे पुनः शब्द में आदि अ को आ और आइ ये दो आदेश विकल्प से होते हैं।

⊙ न उणा, न उणाइ, न उण, न उणो (न पुनः—फिर नहीं)

न पुनर्—यह अव्यय है

'क-ग-च-ज....' (17) से प् का लोप

'नो णः' (28) से न् को ण्

'अन्त्य.....' (42) से र् का लोप

'नात् पुनर्यादाई वा' (130) से विकल्प से पुनः शब्द के अ को आ तथा आइ आदेश

पक्ष में—विकल्प से अ को आ तथा आइ नहीं करेंगे वहां न उण (ऊपर की तरह), न उणो बनेगा।

इसके अलावा न उणो में—जहां र् का लोप नहीं करेंगे वहां

'रः पदान्ते विसर्गस्तयोः' (हेम. 1/3/53) से रेफ का विसर्ग

'अतो डो विसर्गस्य' (387) से विसर्ग को डो

ड् अनुबंध जाने पर

'डित्यन्त्यस्वरादेः' (हेम. 2/1/114) से अंतिम स्वर अ का लोप

'अज्झीनं परेण संयोज्यम्' इस न्याय से मिलाने पर

■ (बहुलाधिकार के कारण कहीं न पूर्व में न होने पर भी) केवल पुनर् के भी (अ को आइ) दिखाई देता है—

⊙ पुणाइ

पुनर् यह अव्यय है

'नो णः' (28) से न् को ण्

'अन्त्य.....' (42) से र् का लोप

'नात् .....' (130) से बहुलता से अ को आइ

131. **वालाब्वरण्ये लुक् 1/66**

अनयोरादेरस्य लुग् वा स्यात्। लाउं, अलाउं। रण्णं, अरण्णं। अत इति किम्? आरण्णकुंजरो व्व वेल्लंतो।

■ अलाबु और अरण्य में आदि अ का लोप विकल्प से होता है।

⊙ लाउं, अलाउं (अलाबुम्—तुम्बी फल, लौकी)

अलाबु + सि

'वालाब्वरण्ये लुक्' (131)से विकल्प से अ का लोप

'बो वः' (279) से ब् को व्

'क-ग-च-ज....' (17) से व् का लोप

शेष कैअवं की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

पक्ष में—विकल्प से अ का लोप नहीं करेंगे वहां अलाउं बनेगा।

⊙ रण्णं, अरण्णं (अरण्यम्—वन)

अरण्य + सि

'वालाब्वरण्ये......' (131) से विकल्प से आदि अ का लोप

'अधो......' (5) से य् का लोप

'अनादौ....' (6) से ण् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से अ का लोप नहीं करेंगे वहां अरण्णं बनेगा।

■ अकार का ही (लोप) ऐसा क्यों?

⊙ आरण्णकुंजरो व्व वेल्लंतो (आरण्यकुञ्जर इव रममाणः—जंगली हाथी के समान रमण करता हुआ)

⊙ आरण्णकुंजरो (आरण्यकुञ्जरः—जंगली हाथी)

आरण्यकुञ्जर + सि

'अधो.....' (5) से य् का लोप

'अनादौ....' (6) से ण् को द्वित्व

'ङञणनो.....' (33) से ञ् को अनुस्वार

शेष सरो की तरह

⊙ व्व (इव—समान)

इव—यह अव्यय है

'मिव पिव विव व्व व विअ इवार्थे वा' (527) से इव अर्थ में व्व

⊙ वेल्लंतो (रममाणः—रमण करता हुआ)

रम् + आनश् + सि

'रमेः संखुड्ड-खेड्डोब्भाव-किलिकिञ्च-कोट्टुम-मोट्टाय-णीसर-वेल्लाः' (804) से रम् को वेल्ल आदेश

'शत्रानशः' (923) से आनश् को न्त आदेश

'ङञणनो.....' (33) से न् को अनुस्वार

शेष सरो की तरह

132. **वाव्ययोत्खातादावदातः 1/67**

अव्ययेषु उत्खातादिषु च आदेराकारस्य अद् वा स्यात्। अहव, अहवा। उक्खयं, उक्खायं। चमरो, चामरो। कलओ, कालओ। ठविओ, ठाविओ। परिट्ठविओ, परिट्ठाविओ। संठविओ, संठाविओ। पययं, पाययं।

■ अव्ययों में और उत्खात आदि में आदि आकार को अ विकल्प से होता है।

⊙ अहव, अहवा (अथवा—या, अथवा)

अथवा—यह अव्यय है

'ख-घ-थ.....' (30) से थ् को ह्

'वाव्ययोत्खातादावदातः' (132) से विकल्प से आ को अ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

पक्ष में—आ को अ नहीं करेंगे वहां अहवा बनेगा।

⊙ उक्खयं, उक्खायं (उत्खातम्—उखाड़ा हुआ, उन्मूलित)

उत्खात + सि

'क-ग-ट-ड....' (13) से त् का लोप

'अनादौ.....' (6) से ख् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से ख् को क्

'वाव्ययो.....' (132) से विकल्प से आ को अ

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

'अवर्णो .....' (19) से य श्रुति

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—उक्खायं

⊙ चमरो, चामरो (चामरः—चँवर)

⊙ कलओ, कालओ (कालकः—तिल, मस्सा, लहसुन)

इन दोनों रूपों में—

'वाव्ययो....' (132) से विकल्प से आ को अ

शेष सरो की तरह

पक्ष में—चामरो, कालओ

इसके अतिरिक्त कलओ, कालओ में 'क-ग-च....' (17) से क् का लोप हुआ है।

⊙ ठविओ, ठाविओ (स्थापितः—रखा हुआ)

⊙ परिट्ठविओ, परिट्ठाविओ (परिष्ठापितः—सामने स्थापित)

⊙ संठविओ, संठाविओ (संस्थापितः—अच्छी तरह से स्थापित)

इन सभी रूपों में—

'स्थष्ठा-थक्क-चिट्ठ-निरप्पाः' (679) से स्था को ठा आदेश

'वाव्ययो.....' (132)से विकल्प से आ को अ

'पो वः' (24) से प् को व्

'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप

शेष सरो की तरह

पक्ष में—क्रमशः ठाविओ, परिट्ठाविओ, संठाविओ

इसके अतिरिक्त परिट्ठविओ, परिट्ठाविओ में 'अनादौ.....' (6) से ठ् को द्वित्व तथा 'द्वितीय.....' (14) से ठ् को ट् हुआ है।

⊙ पययं, पाययं (प्राकृतम्—प्राकृत-भाषा)

प्राकृत + सि

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'वाव्ययो....' (132) से विकल्प से आ को अ

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ

'क-ग-च-ज....' (17) से क् तथा त् का लोप

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—पाययं

133. **इदेदोद् वृन्ते 1/139**

वृन्तशब्दे ऋत इत्, एत्, ओच्च स्यात्।

■ वृन्त शब्द में ऋ को इ, ए और ओ होता है।

134. **वृन्ते ण्टः 2/31**

वृन्ते संयुक्तस्य ण्टः स्यात्। तलविंटं, तालविण्टं। तलवेण्टं तालवेण्टं, तलवोण्टं, तालवोण्टं। हलिओ, हालिओ। नराओ, नाराओ। बलया, बलाया। कुमरो, कुमारो। खइरो, खाइरो। इत्युत्खातादिः। केचिद् ब्राह्मणपूर्वाह्णयोरपीच्छन्ति—बम्हणो, बाम्हणो, पुव्वण्हो, पुव्वाण्हो। दवग्गी, दावग्गी, चडू, चाडू—इति शब्दभेदात् सिद्धम्।

■ वृन्त में संयुक्त (वर्ण) को ण्ट होता है।

⊙ तलविण्टं, तालविण्टं, तलवेण्टं, तालवेण्टं, तलवोण्टं, तालवोण्टं (तालवृन्तम्—पंखा)

तालवृन्त + सि

'वाव्ययो.....' (132) से विकल्प से आ को अ

'इदेदोद् वृन्ते' (133) से ऋ को क्रमशः इ, ए और ओ

'वृन्ते ण्टः' (134) से संयुक्त को ण्ट्

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—तालविण्टं, तालवेण्टं, तालवोण्टं

⊙ हलिओ, हालिओ (हालिकः—हल जोतनेवाला)

⊙ नराओ, नाराओ (नाराचः—लोहमय बाण, संहनन-विशेष)

⊙ कुमरो, कुमारो (कुमारः—अविवाहित, युवराज)

⊙ खइरो, खाइरो (खादिरः—खदिर-वृक्ष-सम्बन्धी)

इन सभी रूपों में—

'वाव्ययो.....' (132) से विकल्प से आ को अ

'क-ग-च-ज....' (17) से हलिओ में क् का, नराओ में च् का तथा खइरो में द् का लोप

शेष सरो की तरह

पक्ष में क्रमशः हालिओ, नाराओ, कुमारो, खाइरो

⊙ बलया, बलाया (बलाका—बक की एक जाति)

बलाका + सि

'वाव्ययो....' (132) से विकल्प से आ को अ

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

'अवर्णो ......' (19) से य श्रुति

शेष गङ्गा की तरह

पक्ष में—बलाया

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

■ कुछ (व्याकरणाचार्य) ब्राह्मण और पूर्वाह्ण में भी (विकल्प से आ को अ करने की) इच्छा करते हैं—

⊙ बम्हणो, बाम्हणो (ब्राह्मणः—द्विज)

ब्राह्मण + सि

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'वाव्ययो....' (132) से विकल्प से आ को अ

'पक्ष्म.....' (118) से ह्म् को म्ह्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—बाम्हणो

⊙ पुव्वण्हो, पुव्वाण्हो (देखें सू. 12)

इसके अतिरिक्त 'वाव्ययो.....' (132) से विकल्प से आ को अ हुआ है।

पक्ष में—पुव्वाण्हो

⊙ दवग्गी (दवाग्निः—जंगल की आग)

⊙ दावग्गी (दावाग्निः—जंगल की आग)

इन दोनों रूपों में—

'Ðस्वः.......' (12) से आ को अ

'अधो.....' (5) से न् का लोप

'अनादौ.....' (6) से ग् को द्वित्व

शेष पारद्धी की तरह

⊙ चडू (चटुः—प्रिय वचन, व्रती का एक आसन)

⊙ चाडू (चाटुः—प्रिय वाक्य, खुशामद)

इन दोनों रूपों में—

'टो डः' (22) से ट् को ड्

शेष विण्हू की तरह

■ दवग्गी, दावग्गी, चडू, चाडू—ये शब्दभेद से ही सिद्ध है। यहां विकल्प से आ को अ नहीं हुआ है।

135. **घञ् वृद्धेर्वा 1/68**

घञ् वृद्धिरूपाकारस्यादेरद् वा स्यात्। पवहो, पवाहो। पयरो, पयारो। पत्थवो, पत्थावो। क्वचिन्न—राओ।

■ घञ (प्रत्यय के निमित्त से बना) वृद्धि रूप आदि आकार को विकल्प से अ होता है।

⊙ पवहो, पवाहो (प्रवाहः—स्रोत, बहाव, जलधारा, उत्तम अश्व)

⊙ पयरो, पयारो (प्रचारः—संचार, प्रसार)

⊙ पयरो, पयारो (प्रकारः—भेद, किस्म, तरह)

⊙ पत्थवो, पत्थावो (प्रस्तावः—अवसर, प्रसंग, प्रकरण)

इन सभी रूपों में—

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'सर्वत्र .....' (9) से र् का लोप

'घञ् वृद्धेर्वा' (135) से विकल्प से आ को अ

शेष सरो की तरह

इसके अतिरिक्त पयरो में 'क-ग-च....' (17) से क्रमशः च् तथा क् का लोप तथा 'अवर्णो....' (19) से य श्रुति और

पत्थवो में 'स्तस्य....' (87) से स्त् को थ्, 'अनादौ.....' (6) से थ् को द्वित्व तथा 'द्वितीय.....' (14) से थ् को त् हुआ है।

■ (बहुलाधिकार के कारण) कहीं (आ को अ विकल्प से) नहीं भी—

⊙ राओ (रागः—प्रेम, द्वेष, रँगना)

राग + सि

'क-ग-च-ज....' (17) से ग् का लोप

शेष सरो की तरह

136. **महाराष्ट्रे 1/69**

महाराष्ट्रे आदेराकारस्य अत् स्यात्।

■ महाराष्ट्र में आदि आकार को अ होता है।

137. **महाराष्ट्रे ह-रोः 2/119**

महाराष्ट्रे हरोर्व्यत्ययः स्यात्। मरहट्ठं।

■ महाराष्ट्र में ह और र का व्यत्यय (स्थान परिवर्तन) होता है।

⊙ मरहट्ठं (महाराष्ट्रम्—एक देश, मराठा)

महाराष्ट्र + सि

'महाराष्ट्रे.....' (136) से आदि आ को अ

महाराष्ट्रे ह-रो:' (137) से ह् और र् का व्यत्यय

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'ह्रस्वः.....' (12) से आ को अ

'ष्टस्या.....' (34) से ष्ट् को ठ्

'अनादौ....' (6) से ठ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से ठ् को ट्

शेष कैअवं की तरह

138. **मांसादिष्वनुस्वारे 1/70**

मांसप्रकारेषु अनुस्वारे सति आदेरातः अत् स्यात्। मंसं, मंसलं, पंसू, पंसणो, कंसं, कंसिओ, वंसिओ, पंडवो, संसिद्धिओ, संजत्तिओ इत्यादि। अनुस्वार इति किम्?

■ मांसादि जैसे (शब्दों) में अनुस्वार होने पर आदि आ को अ होता है।

⊙ मंसं (मांसम्—फल का गर्भ)

⊙ मंसलं (मांसलम्—पीन, पुष्ट)

⊙ कंसं (कांस्यम्—कांसा, वाद्य-विशेष)

इन तीनों रूपों में—

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'मांसादिष्वनुस्वारे' (138) से आदि आ को अ

शेष कैअवं की तरह

इसके अतिरिक्त कंसं में 'अधो.....' (5) से य् का लोप और

'अनादौ.....' (6) से स् को द्वित्व की प्राप्ति

तथा 'न दीर्घानु.....' (18) से द्वित्व का निषेध हुआ है।

⊙ पंसू (पांशुः—धूली, रज)

पांशु + सि

'मांसादिष्वनुस्वारे' (138) से आ को अ

'शषोः सः' (16) से श् को स्

शेष विण्हू की तरह

⊙ पंसणो (पांसनः—कलंकित करने वाला)

पांसन + सि

'मांसादिष्वनुस्वारे' (138) से आ को अ

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष सरो की तरह

⊙ कंसिओ (कांसिकः—ठठेरा)

⊙ वंसिओ (वांशिकः—वंश-वाद्य बजाने वाला)

इन दोनों रूपों में—

'मांसादिष्वनुस्वारे' (138) से आ को अ

'क-ग-च-ज.....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

इसके अतिरिक्त वंसिओ में 'शषोः सः' (16) से श् को स् हुआ है।

⊙ पंडवो (पाण्डवः—राजा पाण्डु के पुत्र-युधिष्ठिर आदि)

पाण्डव + सि

'ङञणनो.....' (33) से ण् को अनुस्वार

'मांसादिष्वनुस्वारे' (138) से आ को अ

शेष सरो की तरह

⊙ संसिद्धिओ (सांसिद्धिकः—स्वभाव-सिद्ध)

सांसिद्धिक + सि

'मांसादिष्वनुस्वारे' (138) से आ को अ

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ संजत्तिओ (सांयात्रिकः—जहाज से यात्रा करने वाला)

सांयात्रिक + सि

'मांसादिष्वनुस्वारे' (138) से आदि आ को अ

'आर्देयो जः' (73) से य् को ज्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'ह्रस्वः......' (12) से द्वितीय आ को अ
'सर्वत्र......' (9) से र् का लोप
'अनादौ......' (6) से त् को द्वित्व
'क-ग-च-ज.....' (17) से क् का लोप
शेष सरो की तरह

■ अनुस्वार होने पर ऐसा क्यों?

139. **मांसोदेर्वा 1/29**

मांसादीनामनुस्वारस्य लुग् वा स्यात्। मासं, मासलं, पासू, कासं। कह,कहं। एव, एवं। नूण, नूणं। इयाणि, इयाणिं। दाणि, दाणिं। कि किं। समुहं, संमुहं।

■ मांस आदि के अनुस्वार का लोप विकल्प से होता है।

⊙ मासं (मांसम्—फल का गर्भ)

⊙ मासलं (मांसलम्—पीन, पुष्ट)

⊙ कासं (कांस्यम्—कांसा)

इन तीनों रूपों में—
'मांसादेर्वा' (139) से विकल्प से अनुस्वार का लोप
शेष कैअवं की तरह
इसके अतिरिक्त कासं में 'अधो.....' (5) से य् का लोप और
'अनादौ....' (6) से स् को द्वित्व की प्राप्ति तथा
'न दीर्घानु.....' (18) से द्वित्व का निषेध हुआ है।

⊙ पासू (पांशुः—धूली)
पांशु + सि
'मांसादेर्वा' (139) से विकल्प से अनुस्वार का लोप
'शषोः सः' (16) से श् को स्
शेष विण्हू की तरह

⊙ कह, कहं (कथम्—कैसे)

⊙ एव, एवं (एवम्—इस प्रकार)

⊙ कि, किं (किम्—क्या?)

ये तीनों अव्यय हैं, इन सभी में—
'मोनुस्वारः' (399) से म् को अनुस्वार
'मांसादेर्वा' (139) से विकल्प से अनुस्वार का लोप
पक्ष में—विकल्प से अनुस्वार के लोपाभाव में क्रमशः कहं, एवं, किं
इसके अतिरिक्त कह, कहं में 'ख-घ-थ....' (30) से थ् को ह् हुआ है।

⊙ नूण, नूणं (नुनम्—निश्चय)

⊙ इयाणि, इयाणिं (इदानीम्—अब)

ये दोनों अव्यय हैं, इनमें
'नो णः' (28) से न् को ण्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'मानुस्वारः' (399) से म् को अनुस्वार
'मांसादेर्वा' (139) से विकल्प से अनुस्वार का लोप
पक्ष में—विकल्प से अनुस्वार के लोपाभाव में क्रमशः नूणं, इयाणिं
इसके अतिरिक्त इयाणि, इयाणिं में 'क-ग-च-ज.....' (17) से द् का लोप तथा
'अवर्णो ...' (19) से बहुलाधिकार से य श्रुति और
'पानीयादि....' (58) से ई को इ हुआ है।

⊙ दाणि, दाणिं (इदानीम्—अब)
इदानीम्—यह अव्यय है
'इदानीमो दाणिं' (941) से शौरसेनी प्राकृत-भाषा में इदानीम् को दाणिं आदेश
'मांसादेर्वा' (139) से विकल्प से अनुस्वार का लोप
पक्ष में—विकल्प से अनुस्वार के लोपाभाव में दाणिं बनेगा।

⊙ समुहं, संमुहं (संमुखम्—सामने आया हुआ)
संमुख + सि
'मांसादेर्वा' (139) से विकल्प से अनुस्वार का लोप
'ख-घ-थ......' (30) से ख् को ह्
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—विकल्प से अनुस्वार के लोपाभाव में संमुहं बनेगा।

140. **किंशुके वा 1/86**
किंशुके आदेरित एकारो वा स्यात्। केसुअं,[1] किंसुअं।

■ किंशुक में आदि इ को एकार विकल्प से होता है।

⊙ केसुअं, किंसुअं (किंशुकम्—पलाश का पुष्प)
किंशुक + सि
'किंशुके वा' (140) से विकल्प से इ को ए
'मांसादेर्वा' (139) से विकल्प से अनुस्वार का लोप
'शषोः सः' (16) से श् के स्
'क-ग-च-ज......' (17) से क् का लोप
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—विकल्प से इ को ए तथा अनुस्वार के लोपाभाव में किंसुअं बनेगा।

141. **ईर्जिह्वा-सिंह-त्रिंशद्-विंशतौ त्या 1/92**
जिह्वादिषु इकारस्य तिशब्देन सह ईः स्यात्। सीहो।

■ जिह्वा, सिंह और त्रिंशत् में इकार को तथा विंशति में तिशब्द के साथ आदि इ को ई होता है।

⊙ सीहो (सिंहः—मृगराज, केसरी)

---

[1] सू. 139 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

सिंह + सि

'ईर्जिह्वा-सिंह-त्रिंशद्-विंशतौ त्या' (141) से इ को ई

'मांसादेर्वा' (139) से विकल्प से अनुस्वार का लोप

शेष सरो की तरह

142. **हो घोऽनुस्वारात् 1/264**

अनुस्वारात् परस्य हस्य घो वा स्यात्। सिंघो इत्यादि। जीहा।[2]

■ अनुस्वार से परे ह को घ विकल्प से होता है।

⊙ सिंघो (सिंहः—मृगराज, केसरी)

सिंह + सि

'हो घोऽनुस्वारात्' (142) से विकल्प से ह् को घ्

शेष सरो की तरह

⊙ जीहा (जिह्वा—जीभ)

जिह्वा + सि

'ईर्जिह्वा....' (141) से इ को ई

'सर्वत्र.....' (9) से व् का लोप

'अनादौ.....' (6) से ह् को द्वित्व की प्राप्ति

'र-होः' (7) से द्वित्व का निषेध

शेष गङ्गा की तरह

143. **विंशत्यादेर्लुक् 1/28**

विंशत्यादीनामनुस्वारस्य लुक् स्यात्। तीसा, वीसा। बहुलाधिकारात् क्वचिन्न भवति—सिंहदत्तो। संघारो,[1] **संहारो। क्वचित् घोऽननुस्वारादपि—दाघो। सक्कयं,**[2] **सक्कारो, इत्यादि।**

■ विंशति आदि के अनुस्वार का लोप होता है।

⊙ तीसा (त्रिंशत्—तीस)

त्रिंशत् + सि

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'ईर्जिह्वा.....' (141) से इ को ई

'विंशत्यादेर्लुक्' (143) से अनुस्वार का लोप

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'अन्त्य.....' (42) से त् का लोप

'आत्' (हेम. 2/4/18) से स्त्रीलिंग में आप् प्रत्यय

प् अनुबंध जाने पर

---

[2] सू. 141 की वृत्ति का शेषांश।

[1] सू. 142 की वृत्ति का शेषांश।

[2] सू. 143 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

तीस आ सि

'पदयोः संधिर्वा' (388) से सन्धि

शेष गङ्गा की तरह

⊙ वीसा (विंशतिः—बीस)

विंशति + सि

'ईर्जिह्वा.....' (141) से ति शबद के साथ आदि इ को ई

'विंशत्यादेर्लुक्' (143) से अनुस्वार का लोप

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'आत्' (हेम. 2/4/18) से स्त्रीलिंग में आप् प्रत्यय

प् अनुबंध जाने पर

वीस आ सि

'पदयोः सन्धिर्वा' (388) से सन्धि

शेष गङ्गा की तरह

■ बहुलाधिकार के कारण कहीं (अनुस्वार से परे ह को घ) नहीं होता है—

⊙ सिंहदत्तो (सिंहदत्तः—एक व्यक्ति, सिंह से दिया हुआ)

सिंहदत्त + सि

शेष सरो की तरह

⊙ संघारो, संहारो (संहारः—प्रलय, संक्षेप, नरक-विशेष)

संहार + सि

'हो घोऽनुस्वारात्' (142) से विकल्प से ह् को घ्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से ह् को घ् का अभाव होने से संहारो बनेगा।

■ (बहुलाधिकार के कारण) कहीं अनुस्वार नहीं होने पर भी (ह को) घ—

⊙ दाघो (दाहः—ताप, दहन, रोग-विशेष)

दाह + सि

'हो घोऽनुस्वारात्' (142) से बहुलाधिकार से ह् को घ्

शेष सरो की तरह

⊙ सक्कयं (संस्कृतम्—संस्कार-युक्त, संस्कृत भाषा)

संस्कृत + सि

'विंशत्यादेर्लुक्' (143) से अनुस्वार का लोप

'क-ग-ट......' (13) से स् का लोप

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ

'अनादौ.....' (6) से क् को द्वित्व

'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप

शेष कैअवं की तरह

⊙ सक्कारो (संस्कारः—सजावट, स्मृति का कारणभूत एक गुण, वेग)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

संस्कार + सि
'विंशत्या....' (143) से अनुस्वार का लोप
'क-ग-ट-ड....' (13) से स् का लोप
'अनादौ....' (6) से क् को द्वित्व
शेष सरो की तरह

144. **श्यामाके मः 1/71**

श्यामाके मस्य आत अत् स्यात्। सामओ।

■ श्यामाक में म के आ को अ होता है।

⊙ सामओ (श्यामाकः—धान्य-विशेष)
श्यामाक + सि
'अधो.....' (5) से य् का लोप
शषोः सः' (16) से श् को स्
'श्यामाके मः' (144) से द्वितीय आ को अ
'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप
शेष सरो की तरह

145. **इः सदादौ वा 1/72**

सदादिषु आत इत्त्वं वा स्यात्। सइ, सया। निसिअरो, निसाअरो। कुप्पिसो, कुप्पासो।

■ सदा आदि में आ को इ विकल्प से होता है।

⊙ सइ, सया (सदा-हमेशा)
सदा—यह अव्यय है
'इः सदादौ वा' (145) से आ को विकल्प से इ
'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप
पक्ष में—विकल्प से इ नहीं वहां सया बनेगा।
इसके अतिरिक्त सया में 'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति हुई है।

⊙ निसिअरो, निसाअरो (निशाचरः—राक्षस)
निशाचर + सि
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'इः सदादौ वा' (145) से विकल्प से आ को इ
'क-ग-च-ज....' (17) से च् का लोप
शेष सरो की तरह
पक्ष में—विकल्प से इ नहीं वहां निसाअरो बनेगा।

⊙ कुप्पिसो, कुप्पासो (कूर्पासः—कञ्चुक, जनानी कुरती)
कूर्पास + सि
'ह्रस्वः.....' (12) से ऊ को उ
'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'अनादौ....' (6) से प् को द्वित्व
'इः सदादौ वा' (145)से विकल्प से आ को इ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से इ नहीं वहां कुप्पासो बनेगा।

146. **आचार्ये चोच्च 1/73**

आचार्ये शब्दे चस्यात् इत्त्वं अत्त्वं च स्यात्। आइरिओ, आयरिओ।

■ आचार्य शब्द में च के आ को इकार और अकार होता है।

⊙ आइरिओ, आयरिओ (देखें सू. 82)

आइरिओ में 'आचार्ये .....' (146) से च के आ को इ हुआ है। शेष आयरिओ की तरह ही है।

147. **उः सास्ना-स्तावके 1/75**

अनयोरादेरात उत्त्वं स्यात्। सुण्हा, थुवओ।

■ सास्ना और स्तावक में आदि आ को उकार होता है।

⊙ सुण्हा (सास्ना—गौ का गल-कम्बल)

सास्ना + सि

'उः सास्ना-स्तावके' (147) से आदि आ को उ

'सूक्ष्म-श्न....' (10) से स्न् को ण्ह्

शेष गङ्गा की तरह

⊙ थुवओ (स्तावकः—स्तुति करने वाला)

स्तावक + सि

'स्तस्य....' (87) से स्त् को थ्

'उः सास्ना....' (147) से आ को उ

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

148. **ऊद् वासारे 1/76**

आसारे आदेरात ऊद् वा स्यात्। ऊसारो, आसारो।

■ आसार में आदि आ को ऊ विकल्प से होता है।

⊙ ऊसारो, आसारो (आसारः—वेग वाली वृष्टि)

आसार + सि

'ऊद् वासारे' (148) से आदि आ को विकल्प से ऊ

शेष सरो की तरह

पक्ष में—आसारो

149. **आर्यायां र्यः श्वश्र्वाम् 1/77**

आर्याशब्दे श्वश्र्वां वाच्यायां र्यस्यातः ऊः स्यात्। अज्जू। श्वश्र्वामिति किम्? अज्जा।

■ श्वश्रुवाची आर्या शब्द में र्य के आ को ऊ होता है।

⊙ अज्जू (आर्या—सास)

आर्या + सि

'द्य-य्य......' (113) से संयुक्त को ज्

'अनादौ.....' (6) से ज् को द्वित्व

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'ह्रस्वः..... ' (12) से आ को अ
'आर्यायां र्यः श्वश्र्वाम्' (149) से र्य् के आ को ऊ
इकार उच्चारण के लिए
'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप
श्वश्रुवाची में ऐसा क्यों?

⊙ अज्जा (आर्या—साध्वी, पार्वती, आर्या छन्द)
आर्या + सि
'ह्रस्वः....' (12) से आ को अ
'द्य-य्य....' (113) से र्य् को ज्
'अनादौ.....' (6) से ज् को द्वित्व
शेष गङ्गा की तरह

150. **एद् ग्राह्ये 1/78**

ग्राह्ये शब्दे आदेरात एत् स्यात्। गेज्झं।

■ ग्राह्य शब्द में आदि आ को ए होता है।

⊙ गेज्झं (ग्राह्यम्—ग्रहण-योग्य)
ग्राह्य + सि
'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप
'एद् ग्राह्ये' (150) से आ को ए
'साध्वस.....' (103) से ह्य् को झ्
'अनादौ....' (6) से झ् को द्वित्व
'द्वितीय.....' (14) से झ् को ज्
शेष कैअवं की तरह

151. **पारापते रो वा 1/80**

पारापते रस्य आत एद् वा स्यात्। पारेवओ, पारावओ।

■ पारापत में रकार के आ को ए विकल्प से होता है।

⊙ पारेवओ, पारावओ (पारापतः—कबूतर)
पारापत + सि
'पारापते रो वा' (151) से र् के आ को ए
'पो वः' (24) से प् को व्
'क-ग-च-ज....' (17) से त् का लोप
शेष सरो की तरह

पक्ष में—पारावओ

152. **उदोद्वार्द्रे 1/82**

आर्द्रे आदेरात उद् ओच्च वा स्यात्। उल्लं, ओल्लं। पक्षे—अद्दं, अल्लं।

■ आर्द्र में आदि आ को उ और ओ विकल्प से होता है।

⊙ उल्लं, ओल्लं, अल्लं, अद्दं (आर्द्रम्—गीला)
आर्द्र + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'उदोद्वार्द्रे' (152) से आ को विकल्प से क्रमशः उ और ओ
'सर्वत्र.....' (9) से आदि रेफ का लोप
'क-ग-ट-ड....' (13) से द् का लोप
'हरिद्रादौ लः' (64) से र् को ल्
'अनादौ......' (6) से ल् को द्वित्व
शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से आ को उ, ओ नहीं करेंगे वहां 'ह्रस्वः......' (12) से आ को अ करने पर अल्लं बनेगा।

जहां रकार को लकार नहीं करेंगे वहां
'ह्रस्वः......' (12) से आ को अ
'सर्वत्र....' (9) से दोनों र् का लोप
'अनादौ....' (6) से द् को द्वित्व करने पर अद्दं बनेगा।

153. **ओदाल्यां पंक्तौ 1/83**

पङ्क्तिवाचिनी आलीशब्दे आत ओत्त्वं स्यात्। ओली। पङ्क्ताविति किं? आली (सखी)।

■ पंक्तिवाची आली शब्द में आ को ओकार होता है।

⊙ ओली (आली—पंक्ति, श्रेणी)
आली + सि
'ओदाल्यां पंक्तौ' (153) से आ को ओ
इकार उच्चारण के लिए
'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप

■ पंक्तिवाची में (आ को ओ) ऐसा क्यों?

⊙ आली (आली—सखी)
आली + सि
इकार उच्चारण के लिए
'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

154. **ताम्राम्रे म्बः 2/56**

अनयोः संयुक्यस्य म्बः स्यात्। तम्बं, अम्बं। अम्बिरतम्बिर इति देश्यौ।

■ ताम्र और आम्र में संयुक्त को म्ब होता है।

⊙ तम्बं (ताम्रम्—तांबा)

⊙ अम्बं (आम्रम्—आम्र-फल)
इन दोनों रूपों में—
'ह्रस्वः....' (12) से आ को अ
'ताम्राम्रे म्बः' (154) से संयुक्त को म्ब्
शेष कैअवं की तरह

■ अम्बिर (आम का फल) और तम्बिर (तांबा) ये देशी शब्द है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

155. **इत एद् वा 1/85**

संयोगे परे आदेरिकारस्य एकारो वा स्यात्। वेण्हू, विण्हू। पेण्डं, पिण्डं। सेन्दूरं, सिन्दूरं। धम्मेल्लं, धम्मिल्लं। क्वचिन्न—चिंता।

■ संयोग परे होने पर आदि इकार को एकार विकल्प से होता है।

⊙ वेण्हू, विण्हू (देखें सू. 11)

इसके अतिरिक्त—वेण्हू में 'इत एद् वा' (155) से विकल्प से इ को ए हुआ है।

⊙ पेण्डं, पिण्डं (पिण्डम्—समूह, भिक्षा में मिलता आहार)

⊙ सेन्दूरं, सिन्दूरं (सिन्दूरम्—रक्तवर्ण)

⊙ धम्मेल्लं, धम्मिल्लं (धम्मिल्लम्—बँधा हुआ केश)

इन तीनों रूपों में—

'एत ऐद् वा' (155) से विकल्प से इ को ए

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—क्रमशः पिण्डं, सिन्दूरं, धम्मिल्लं

■ (बहुलाधिकार के कारण) कहीं (संयोग परे इ को ए) नहीं भी—

⊙ चिंता (चिंता—शोक)

चिंता + सि

शेष गङ्गा की तरह

156. **मिरायाम् 1/87**

मिराशब्दे इत एकारः स्यात्। मेरा।

■ मिरा शब्द में इ को एकार होता है।

⊙ मेरा (मिरा—मर्यादा)

मिरा + सि

'मिरायाम्' (156) से इ को ए

शेष गङ्गा की तरह

157. **निशीथ-पृथिव्योर्वा 1/216**

अनयोः थस्य ढो वा स्यात्। निसीढो, निसीहो। पुढवी, पुहई।

■ निशीथ और पृथिवी में थ को ढ विकल्प से होता है।

⊙ निसीढो, निसीहो, (निशीथः-मध्य रात्रि, प्रकाश का अभाव)

निशीथ + सि

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'निशीथ-पृथिव्योर्वा' (157) से विकल्प से थ् को ढ्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से थ् को ढ् नहीं वहां

'ख-घ-थ......' (30) से थ् को ह् होने से निसीहो बनेगा।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ पुढवी, पुहई (पृथिवी- जमीन)

पृथिवी + सि

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ

'पथिपृथिवी.....' (44) से इ को अ

'निशीथ.......' (157) से विकल्प से थ् को ढ्

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य.....' (42) से स् का लोप

पक्ष में—पुहई (देखें सू. 59)

158. **शिथिलेङ्.गुदे वा 1/89**

अनयोरादेरितोद् वा स्यात्। सढिलं, सिढिलं। अंगुअं, इंगुअं।

■ शिथिल और इंगुद में आदि इ को अ विकल्प से होता है।

⊙ सढिलं, सिढिलं (शिथिलम्-ढीला)

शिथिल + सि

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'शिथिलेङ्.गुदे वा' (158) से विकल्प से इ को अ

'मेथि......' (75) से थ् को ढ्

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—सिढिलं

⊙ अंगुअं, इंगुअं (इंगुदम्—इंगुद वृक्ष का फल)

इंगुद + सि

'शिथिले.....' (158) से विकल्प से इ को अ

'क-ग-च-ज......' (17) से द् का लोप

शेष कैअवं की तरह

159. **तित्तिरौ रः 1/90**

तित्तिरिशब्दे रस्येतोत् स्यात्। तित्तिरो।

■ तित्तिरि शब्द में रकार के इ को अ होता है।

⊙ तित्तिरो (तित्तिरिः—तीतर)

तित्तिरि + सि

'तित्तिरौ रः' (159) से रकार के इ को अ

शेष सरो की तरह

160. **इतौ तो वाक्यादौ 1/91**

वाक्यादिभूते इति शब्दे तस्य इतोत् स्यात्। इअ जंपिआवसाणे। वाक्यादावितिकिम्?

■ वाक्य की आदि में रहे हुए इति शब्द में तकार के इ को अ होता है।

⊙ इअ जंपिआवसाणे (इति कथितावसाने-यह कह चुकने पर)

⊙ इअ

इति—यह अव्यय है

'इतौ तो वाक्यादौ' (160) से तकार के इ को अ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'क-ग-च-ज.......' (17) से त् का लोप

⊙ जंपिआवसाणे

कथितावसान + ङि

'कथेर्वज्जर-पज्जरोप्पाल-पिसुण-संघ-बोल्ल-चव-जम्प-सीस-साहाः' (665) से कथ् धातु को जम्प् आदेश

जम्पितावसान + ङि

'मोनुस्वारः' (399) से बहुलता से म् को अनुस्वार

'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप

'नो णः' (28) से न् को ण्

'डे म्मि ङेः' (409) से ङि को डे

ड् अनुबंध जाने पर

'डित्यन्त्यस्वरादेः (हेम 2/1/114) से अंतिम स्वर अ का लोप

'अज्झीनं परेण संयोज्यम्' इस न्याय से मिलाने पर

■ वाक्य की आदि में ऐसा क्यों?

161. **इतेः स्वरात् तश्च द्विः 1/42**

पदात् परस्य इतेरादिस्वरस्य लुक्स्यात्, स्वरात् परश्च तकारो द्विः स्यात्। किं इति-किंति तह इति-तहत्ति। पदादिति किम्? इअ नाणं।

■ पद से परे इति के आदि स्वर का लोप होता है और स्वर से परे तकार को द्वित्व होता है।

⊙ किंति (किमिति—यह क्या है)

किं

किम् + सि

'किमः किम्' (491) से सि सहित किम् को किम्

'मोनुस्वारः (399) से म् को अनुस्वार

ति

इति- यह अव्यय है

'इतेः स्वरात् तश्च द्विः' (161) से इति के इ का लोप

वर्ण-सम्मेलन करने पर

⊙ तहत्ति (तथा इति-वैसे ही)

तहा

तथा—यह अव्यय है

'ख-घ-थ.....' (30) से थ् को ह्

त्ति

इति—यह अव्यय है।

'इतेः ....' (161) से इति के इ का लुक् तथा त् को द्वित्व

तहात्ति

वर्ण सम्मलेन करने पर

ह्रस्वः - (12) से आ को अ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

■ पद से परे (इति के इ का लोप) ऐसा क्यों?

⊙ इअ नाणं (इति ज्ञानम्-यह ज्ञान)

⊙ इअ (देखे सू. 160)

नाणं

ज्ञान + सि

'म्नज्ञोर्णः' (47) से ज्ञ् को ण्

'नो णः' (28) से द्वितीय न् को ण्

शेष कैअवं की तरह

(आर्ष में न भी होता है अतः नाणं)

यहां आदि में इति होने से इ का लोप नहीं हुआ है।

162. **निर्दुरोर्वा 1/13**

अनयोरन्त्यव्यञ्जनस्य लुग् वा स्यात्।

■ निर् और दुर् के अन्त्य व्यंजन का विकल्प से लोप होता है।

163. **र्लुकि निरः 1/93**

निरुपसर्गस्य रेफलोपे सति इत ईत्त्वं स्यात्। नीसारो।

■ निर् उपसर्ग के रेफ का लोप होने पर इ को ई होता है।

⊙ नीसारो, निस्सारो (निस्सारः—सारहीन)

निस्सार + सि

'निर्दुरोर्वा' (162) से निर् के अन्त्य व्यंजन स् का विकल्प से लोप

'र्लुकि निरः' (164) से इ को ई

शेष सरो की तरह

पक्ष में—निस्सारो

164. **र्लुकि दुरो वा 1/115**

दुरुपसर्गस्य रेफलोपे सति उत ऊत्वं वा स्यात्। दूसहो, दुसहो। पक्षे-निस्सारो, दुस्सहो।

■ दुर् उपसर्ग के रेफ का लोप होने पर उ को ऊ विकल्प से होता है।

⊙ दूसहो, दुसहो, दुस्सहो (दुस्सहः—असह्य)

दुस्सह + सि

'निर्दुरोर्वा' (162) से दुर् के अन्त्य व्यंजन का विकल्प से लोप

'र्लुकि दुरो वा' (164) से विकल्प से उ को ऊ

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से रेफ का लोप करेंगे तथा उ को ऊ विकल्प से नहीं करेंगे वहां दुसहो बनेगा।

जहां विकल्प से अन्त्य व्यंजन का लोप तथा उ को ऊ नहीं करेंगे वहां दुस्सहो बनेगा।

165. **युधिष्ठिरे वा 1/96**

युधिष्ठिरे आदेरित ऊत्वं वा स्यात्। जहुट्ठिलो, जहिट्ठिलो।

■ युधिष्ठिर में आदि इ को विकल्प से ऊ होता है।

⊙ जहुट्ठिलो, जहिट्ठिलो (देखें सू. 74)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

जहुट्ठिलो में 'युधिष्ठिरे वा' (165) से विकल्प से आदि इ को उ हुआ है।

166. **ओच्च द्विधा[1] कृगः 1/97**

द्विधाशब्दे कृग् धातोः प्रयोगे इत ओत्त्वमुत्त्वं च स्यात्। दोहा किज्जइ, दुहा किज्जइ। क्वचित् केवलस्यापि भवति—दुहा वि सो सुरवहूसत्थो। कृग इति किम्? दिहा गयं।

■ द्विधा शब्द के साथ कृग् धातु का प्रयोग होने पर उसके (द्विधा के) इ को ओकार और उकार होता है।

⊙ दोहा किज्जइ, दुहा किज्जइ (द्विधा क्रियते—दो प्रकार से किया जाता है)

दोहा, दुहा (द्विधा—दो प्रकार से)

द्विधा—यह अव्यय है

'सर्वत्र....' (9) से व् का लोप

'ओच्च द्विधा कृगः' (166) से इ को क्रमशः ओ तथा उ

'ख-घ-थ....' (30) से ध् को ह्

⊙ किज्जइ (क्रियते—किया जाता है)

कृ + क्य + ते

'ईअ-इज्जौ क्यस्य' (894) से क्य को इज्ज आदेश

'लुक्' (235) से स्वर परे होने पर ऋ (स्वर) का लोप

'अज्झीनं परेण संयोज्यम्' इस न्याय से मिलाने पर

किज्ज + ते

शेष घडइ की तरह

■ (बहुलाधिकार के कारण कृग् धातु के बिना भी) कहीं इ को उ हो जाता है—

⊙ दुहा वि सो सुरवहूसत्थो (द्विधापि सः सुरवधूसार्थः—वह देवों की देवियों का समूह दो प्रकार से भी)

दुहा (देखें सू. 166)

वि (अपि)

अपि—यह अव्यय है

'पदादपेर्वा' (236) से पद से परे अपि के आदि स्वर का विकल्प से लोप

'पोवः' (24) से प् को व्

सो

तद् + सि

'तदश्च तः सोऽक्लीबे' (416) से त् को स्

'अन्त्य.....' (42) से द् का लोप

शेष सरो की तरह

सुरवहूसत्थो

सुरवधूसार्थ + सि

'ख-घ-थ....' (30) से ध् को ह्

---

[1] कृग् इत्यत्र गकारः सिद्धहैमशब्दानुशासने धातोरुभयपदित्वद्योतकः। भिक्षुशब्दानुशासने अस्य स्थाने नकारः।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'अनादौ....' (6) से थ् को द्वित्व
'द्वितीय....' (14) से थ् को त्
'ह्रस्वः.....' (12) से आ को अ
शेष सरो की तरह

■ कृग् धातु परे होने पर ऐसा क्यों?

⊙ दिहा गयं (द्विधा गतम्—दो प्रकार से गया है)

⊙ दिहा
द्विधा—यह अव्यय है
'सर्वत्र....' (9) से व् का लोप
'ख-घ-थ.....' (30) से ध् को ह्

⊙ गयं
गत + सि
'क-ग-च....' (17) से त् का लोप
'अवर्णो....' (19) से य श्रुति
शेष कैअवं की तरह
यहां कृग् धातु परे नहीं होने से द्विधा के इ को ओ तथा उ नहीं हुआ है।

167. **वा निर्झरे ना 1/98**

निर्झरे नकारेण सह इत ओत्वं वा स्यात्। ओज्झरो, निज्झरो।

■ निर्झर में नकार के साथ इ को ओ विकल्प से होता है।

⊙ ओज्झरो, निज्झरो (निर्झरः झरना)
निर्झर + सि
'वा निर्झरे ना' (167) से विकल्प से नकार सहित इ को ओ
'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप
'अनादौ....' (6) से झ् को द्वित्व
'द्वितीय.....' (14) से झ् को ज्
शेष सरो की तरह
पक्ष में—निज्झरो

168. **उज्जीर्णे 1/102**

जीर्णशब्दे ईत उत् स्यात्। जुण्णसुरा। क्वचिन्न—जिण्णे भोअणमत्ते।

■ जीर्ण शब्द में ई को उ होता है।

⊙ जुण्णसुरा (जीर्णसुरा—पुरानी मदिरा)
जीर्णसुरा + सि
'उज्जीर्णे' (168) से ई को उ
'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'अनादौ....' (6) से ण् को द्वित्व
शेष गङ्गा की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

■ (बहुलाधिकार के कारण ई को उ) कहीं नहीं भी—

⊙ जिण्णे भोअणमत्ते (जीर्णे भोजनमात्रे—भोजनमात्र के पच जाने पर)

⊙ जिण्णे

जीर्ण + ङि

'ह्रस्वः....' (12) से ई को इ

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'अनादौ....' (6) से ण् को द्वित्व

'डे म्मि ङेः' (409) से ङि को डे

'डित्यन्त्यस्वरादेः' (हेम. 2/1/114) से अ का लोप

ड् अनुबंध जाने पर

'अज्झीनं परेण संयोज्यम्' इस न्याय से मिलाने पर

⊙ भोअणमत्ते

भोजनमात्र + ङि

'क-ग-च....' (17) से ज् का लोप

'नो णः' (28) से न् को ण्

'ह्रस्वः....' (12) से आ को अ

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'अनादौ....' (6) से त् को द्वित्व

ङि की प्रक्रिया जिण्णे की तरह

169. **ऊर्हीन-विहीने वा 1/103**

अनयोरीत ऊत्वं वा स्यात्। हूणो, हीणो। विहूणो, विहीणो। विपूर्वको हीन इति किम्? पहीणजरमरणा।

■ हीन और विहीन के ई को ऊ विकल्प से होता है।

⊙ हूणो, हीणो (हीनः—न्यून, प्रतिवादी-विशेष)

⊙ विहूणो, विहीणो (विहीनः—वर्जित, त्यक्त)

इन दोनों रूपों में—

'ऊर्हीन-विहीने वा' (169) से विकल्प से ई को ऊ

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष सरो की तरह

वि (उपसर्ग) पूर्वक हीन (शबद) ऐसा क्यों?

⊙ पहीणजरमरणा (प्रहीणजरामरणाः—जरा और मरण से रहित)

प्रहीनणजरामरण + जस्

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'दीर्घह्रस्वौ मिथो वृत्तौ' (234) से र् के आ को अ

'जश्शसोर्लुक्' (396) से जस् का लोप

'जश्शस्....' (397) से अ को आ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

170. **नीपापीडे मो वा 1/234**

अनयोः पस्य मो वा स्यात्। नीमो, नीवो। आमेलो, आवेडो।

■ नीप और आपीड में प को म विकल्प से होता है।

⊙ नीमो, नीवो (नीपः—कदम्ब का पेड़)

नीप + सि

'नीपापीडे मो वा' (170) से विकल्प से प् को म्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से प् को म् नहीं वहां 'पो वः' (24) से प् को व् करने पर नीवो बनेगा।

⊙ आमेलो, आवेडो (देखें सू. 82)

171. **वोपरौ 1/108**

उपरौ उतोद् वा स्यात्। अवरिं, उवरिं।

■ उपरि में उ को अ विकल्प से होता है।

⊙ अवरिं, उवरिं (देखें सू. 52)

172. **गुरौ के वा 1/109**

गुरो स्वार्थे के सति आदेरुतोद् वा स्यात्। गरुओ, गुरुओ। क इति किं? गुरू।

■ गुरु (शब्द) में स्वार्थ में क होने पर आदि उ को अ विकल्प से होता है।

⊙ गरुओ, गुरुओ (गुरुकः—महान्, भारी)

गुरुक + सि

'गुरौ के वा' (172) से आदि उ को विकल्प से अ

'क-ग-च....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

पक्ष में—गुरुओ

(स्वार्थ में) क (परे होने पर) ऐसा क्यों?

⊙ गुरू (गुरुः—शिक्षक, धर्मोपदेशक)

गुरु + सि

शेष विण्हू की तरह

यहां स्वार्थ में क नहीं होने से आदि उ को अ भी नहीं हुआ है।

173. **इर्भ्रकुटौ 1/110**

भ्रुकुटौ आदेरुत इः स्यात्। भिउडी।

■ भ्रुकुटि में आदि उ को इ होता है।

⊙ भिउडी (भ्रुकुटिः—भौं-भंग)

भ्रुकुटि + सि

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'इर्भ्रुकुटौ' (173) से आदि उ को इ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'क-ग-च-ज...' (17) से क् का लोप
'टो डः' (22) से ट् को ड्
शेष सामिद्धी की तरह

174. **पुरुषे रोः 1/111**
पुरुषे रोरुत इः स्यात्। पुरिसो।

■ पुरुष में र के उ को इ होता है।

⊙ पुरिसो (पुरुषः—मर्द, जीव)
पुरुष + सि
'पुरुषे रोः' (174) से र् के उ को इ
'शषोः सः' (16) से ष् को स्
शेष सरो की तरह

175. **ऊत् सुभग मुसले वा 1/113**
अनयोरादेरुत ऊद् वा स्यात्।

■ सुभग और मुसल के आदि उ को ऊ विकल्प से होता है।

176. **ऊत्वे दुर्भग-सुभगे वः 1/192**
अनयोरूत्वे सति गस्य वः स्यात्।
सूहवो, सुहओ। मूसलं मुसलं। दूहवो, दुहओ।

■ दुर्भग और सुभग में (उकार को) ऊकार होने पर ग को व होता है।

⊙ सूहवो, सुहओ (सुभगः—सौभाग्य-युक्त)
सुभग + सि
'ऊत् सुभग-मुसले वा' (175) से उ को विकल्प से ऊ
'ख-घ-थ....' (30) से भ् को ह्
'ऊत्वे दुर्भग-सुभगे वः' (176) से ग् को व्
शेष सरो की तरह
पक्ष में—विकल्प से ऊ नहीं करेंगे वहां
'ख-घ-थ....' (30) से भ् को ह् तथा
'क-ग-च....' (17) से ग् का लोप करने पर सुहओ बनेगा।

⊙ मूसलं, मुसलं (मुसलम्—मूसल)
मुसल + सि
'ऊत् सुभग.....' (175) से उ को विकल्प से ऊ
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—मुसलं

⊙ दूहवो, दुहओ (दुर्भगः—कमनसीब, अनिष्ट)
दुर्भग + सि
'निर्दुरोर्वा' (162) से विकल्प से अन्त्य व्यंजन रेफ का लोप
'र्लुकि दुरो वा' (164) से उ को विकल्प से ऊ
'ख-घ-थ....' (30) से भ् को ह्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'ऊत्वे.....' (176) से ग् को व्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से ऊ नहीं करेंगे वहां

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'ख-घ-थ...' (30) से भ् को ह्

'क-ग-च-ज....' (17) से ग् का लोप करने पर दुहओ बनेगा।

177. **अनुत्साहोत्सन्ने त्सच्छे 1/114**

उत्साहोत्सन्नवर्जिते शब्दे यौ त्सच्छौ तयोः परयोरादेरुत ऊत् स्यात्। ऊसित्तो, ऊसुओ। अनुत्साहोत्सन्ने इति किं? उच्छाहो, उच्छन्नो।

■ उत्साह और उत्सन्न को छोड़कर त्स और च्छ वाले शब्दों के आदि उ को ऊ होता है।

⊙ ऊसित्तो (उत्सिक्तः—गर्वित, बढ़ा हुआ)

उत्सिक्त + सि

'अनुत्साहोत्सन्ने त्सच्छे' (177) से उ को ऊ

'क-ग-ट-ड....' (13) से प्रथम त् तथा क् का लोप

'अनादौ.....' (6) से त् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

⊙ ऊसुओ (उच्छुकः—जहां से शुक उद्‌गत हुआ हो वह)

उच्छुक + सि

'अनुत्साहो....' (177) से उ को ऊ

'अन्त्य.....' (42) से वाक्य की अपेक्षा अन्त्य च् का लोप

'निमित्ताभावे नैमित्तिकस्याप्यभावः' इस न्याय से छकार का पूर्व-स्वरूप शकार

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'क-ग-च....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

■ अनुत्साह और उत्सन्न को छोड़कर ऐसा क्यों?

⊙ उच्छाहो (उत्साहः—उत्साह, दृढ़ उद्यम)

⊙ उच्छन्नो (उत्सन्नः—छिन्न, खण्डित, नष्ट)

इन दोनों रूपों में—

'Ðस्वात्....' (40) से त्स् को छ्

'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय....' (14) से छ् को च्

शेष सरो की तरह

178. **ओत्संयोगे 1/116**

संयोगे परे आदेरुत ओत्त्वं स्यात्। तोण्डं, मोण्डं, कोट्टिमं, पोत्थओ, मोग्गरो, पोग्गलं।

■ संयोग परे होने पर आदि उ को ओकार होता है।

⊙ तोण्डं (तुण्डम्—मुख)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ मोण्डं (मुण्डम्—सिर)

⊙ कोट्टिमं (कुट्टिमम्—रत्नमय भूमि, अनार का पेड़)

इन सभी रूपों में—

'ओत्संयोगे' (178) से संयोग परे होने पर उ को ओ

शेष कैअवं की तरह

⊙ पोत्थओ (पुस्तकः—पोथी, किताब)

पुस्तक + सि

'ओत्संयोगे' (178) से उ को ओ

'स्तस्य....' (87) से स्त् को थ्

'अनादौ....' (6) से थ् को द्वित्व

'द्वितीय....' (14) से थ् को त्

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष सरो की तरह

⊙ मोग्गरो (मुद्गरः—मुद्गर)

मुद्गर + सि

'ओत्संयोगे' (178) से उ को ओ

'क-ग-ट-ड....' (13) से द् का लोप

'अनादौ....' (6) से ग् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

⊙ पोग्गलं (पुद्गलम्—रूपादि-विशिष्ट द्रव्य, मूर्त्त द्रव्य)

पुद्गल + सि

'ओत्संयोगे' (178) से उ को ओ

'क-ग-ट-ड....' (13) से द् का लोप

'अनादौ....' (6) से ग् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

179. **दुकूले वा लश्च द्विः 1/119**

दुकूले ऊकारस्य अद् वा स्यात्; तत्सन्नियोगे च लकारो द्विः। दुअल्लं, दुऊलं। आर्षे दुगुल्लं।

■ दुकूल में ऊ को अ विकल्प से होता है है उसके योग में लकार को द्वित्व होता है।

⊙ दुअल्लं, दुऊलं (दुकूलम्—दुपट्टा)

दुकूल + सि

'दुकूले वा लश्च द्विः' (179) से ऊ को विकल्प से अ तथा ल् को द्वित्व

'क-ग-च-ज....' (17) से क् का लोप

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—'क-ग-च....' (17) से क् का लोप करने पर दुऊलं बनेगा।

■ आर्ष में दुगुल्लं (दुकूलम्—दुपट्टा) भी बनता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

180. **ईर्वोद्व्यूढे 1/120**

उद्व्यूढे ऊत ईत्त्वं वा स्यात्। उव्वीढं, उव्वूढं।

■ उद्व्यूढ में ऊ को ई विकल्प से होता है।

⊙ उव्वीढं, उव्वूढं (उद्व्यूढम्—धारण किया हुआ)

उद्व्यूढ + सि

'क-ग-ट-ड....' (13) से द् का लोप

'ईर्वोद्व्यूढे' (180) से ऊ को विकल्प से ई

'अधो....' (5) से य् का लोप

'अनादौ....' (6) से व् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—उव्वूढं

181. **उर्भ्रू-हनूमत्कण्डूय-वातूले 1/121**

एषु ऊत उत्त्वं स्यात्। भुमया, हणुमन्तो, कण्डुअइ, वाउलो।

■ भ्रू, हनूमत्, कण्डूय और वातूल में ऊ को उकार होता है।

⊙ भुमया (भ्रूः—भौं)

भ्रू + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'उर्भ्रू-हनूमत्कण्डूय-वातूले' (181) से ऊ को उ

'भ्रुवो मया डमया' (602) से भ्रू शब्द से स्वार्थ में मया प्रत्यय

शेष गङ्गा की तरह

⊙ हणुमन्तो (हनूमान्—हनुमान्)

हनूमत् + सि

'उर्भ्रू ....' (181) से ऊ को उ

'नो णः' (28) से न् को ण्

'आल्विल्लोल्लाल-वन्त-मन्तेत्तेर-मणा मतोः' (594) से मतु प्रत्यय के स्थान पर मन्त आदेश

शेष सरो की तरह

⊙ कण्डुअइ (कण्डूयति—खुजलाता है)

कण्डूयति

'उर्भ्रू....' (181) से ऊ को उ

'क-ग-च-ज....' (17) से य् तथा त् का लोप

⊙ वाउलो (वातूलः—वात-रोगी, उन्मत्त, वातसमूह)

वातूल + सि

'उर्भ्रू....' (181) से ऊ को उ

'क-ग-च-ज.....' (17) से त् का लोप
शेष सरो की तरह

182. **मधूके वा 1/122**
मधूके ऊत उद् वा स्यात्। महुअं, महूअं।

■ मधूक में ऊ को विकल्प से उ होता है।

⊙ महुअं, महूअं (मधूकम्—महुआ फल)
मधूक + सि
'ख-घ-थ....' (30) से ध् को ह्
'मधूके वा' (182) से ऊ को विकल्प से उ
'क-ग-च-ज...' (17) से क् का लोप
शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—महूअं

183. **इदेतौ नूपुरे वा 1/123**
नूपुरे ऊत इत् एच्च वा स्यात्। निउरं, नेउरं, नूउरं।

■ नूपुर में ऊ को इ और ए विकल्प से होता है।

⊙ निउरं, नेउरं, नूउरं (नूपुरम्—पायल)
नूपुर + सि
'इदेतौ नूपुरे वा' (183) से विकल्प से ऊ को इ तथा ए
'क-ग-च-ज....' (17) से प् का लोप
शेष कैअवं की तरह

184. **स्थूणा-तूणे वा 1/125**
अनयोरूत ओत्वं वा स्यात्। थोणा, थूणा। तोणं, तूणं।

■ स्थूणा और तूण में ऊ को ओकार विकल्प से होता है।

⊙ थोणा, थूणा (स्थूणा—खम्भा)
स्थूणा + सि
'क-ग-ट.....' (13) से स् का लोप
'स्थूणा-तूणे वा' (184) से विकल्प से ऊ को ओ
शेष गङ्गा की तरह

पक्ष में—थूणा

⊙ तोणं, तूणं (तूणम्—तरकस, तूणीर)
तूण + सि
'स्थूणा.....' (184) से विकल्प से ऊ को ओ
शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—तूणं

185. **पृष्ठे वाऽनुत्तरपदे 1/129**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

पृष्ठे अनुत्तरपदे ऋत इद् वा स्यात्। पिट्ठी, पट्ठी। अनुत्तरपदे इति किं? महीवट्ठं।

■ पृष्ठ शब्द यदि उत्तरपद में न हो तो उसके ऋकार को इ विकल्प से होता है।

⊙ पिट्ठी, पट्ठी (पृष्ठिः—पीठ)

पृष्ठि + सि

'पृष्ठे वाऽनुत्तरपदे' (185) से विकल्प से ऋ को इ

'क-ग-ट-ड....' (13) से ष् का लोप

'अनादौ....' (6) से ठ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से ठ् को ट्

शेष सामिद्धी की तरह

पक्ष में—विकल्प से ऋ को इ नहीं करेंगे वहां

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ करने से पट्ठी बनेगा।

अनुत्तरपद में ऐसा क्यों?

⊙ महीवट्ठं (महीपृष्ठम्—भूमितल)

महीपृष्ठ + सि

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ

'पो वः' (24) से प् को व्

'क-ग-ट-ड....' (13) से ष् का लोप

'अनादौ....' (6) से ठ् को द्वित्व

'द्वितीय....' (14) से ठ् को ट्

शेष कैअवं की तरह

186. **मसृण-मृगाङ्क-मृत्यु-शृङ्ग-धृष्टे वा 1/130**

एषु ऋत इद् वा स्यात्। मसिणं, मसणं। मिअंको, मयंको। मिच्चू, मच्चू। सिंगं, संगं। धिट्ठो, धट्ठो।

■ मसृण, मृगाङ्क, मृत्यु, शृङ्ग और धृष्ट में ऋ को इ विकल्प से होता है।

⊙ मसिणं, मसणं (मसृणम्—स्निग्ध, सुकुमार)

मसृण + सि

'मसृण-मृगाङ्क-मृत्यु-शृङ्ग-धृष्टे वा' (186) से विकल्प से ऋ को इ

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—ऋ को इ विकल्प से नहीं करेंगे वहां

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ करने पर मसणं बनेगा।

⊙ मिअंको, मयंको (मृगाङ्कः—चाँद, चन्द्रविमान)

मृगाङ्क + सि

'मसृण....' (186) से विकलप से ऋ को इ

'क-ग-च-ज...' (17) से ग् का लोप

'ह्रस्वः.....' (12) से आ को अ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'ङअणनो....' (33) से ङ् को अनुस्वार

शेष सरो की तरह

पक्ष में—ऋ को इ विकल्प से नहीं करेंगे वहां

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ तथा

'अवर्णो...' (19) से य श्रुति करने पर मयंको बनेगा।

⊙ मिच्चू, मच्चू (मृत्युः—मौत, यमराज)

मृत्यु + सि

'मसृण....' (186) से विकल्प से ऋ को इ

'त्योऽचैत्ये' (37) से त्य् को च्

'अनादौ....' (6) से च् को द्वित्व

शेष विण्हू की तरह

⊙ सिंगं, संगं (शृङ्गम्—सींग, शिखर)

शृङ्ग + सि

'मसृण...' (186) से विकल्प से ऋ को इ

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'ङअणनो....' (33) से ङ् को अनुस्वार

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से ऋ को इ नहीं करेंगे वहां

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ करने पर संगं बनेगा।

⊙ धिट्ठो, धट्ठो (धृष्टः—प्रगल्भ, निर्लज्ज)

धृष्ट + सि

'मसृण....' (186) से ऋ को विकल्प से इ

'ष्टस्या...' (34) से ष्ट् को ठ्

'अनादौ....' (6) से ठ् को द्वित्व

'द्वितीय...' (14) से ठ् को ट्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से ऋ को इ नहीं करेंगे वहां

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ करने पर धिट्ठं बनेगा।

187. **निवृत्त-वृन्दारके वा 1/132**

अनयोर्ऋत उद् वा स्यात्। निवुत्तं, निअत्तं। वुंदारया, वंदारया।

■ निवृत्त और वृन्दारक में ऋ को उ विकल्प से होता है।

⊙ निवुत्तं, निअत्तं (निवृत्तम्—निवृत्ति)

निवृत्त + सि

'निवृत्त-वृन्दारके वा' (187) से विकल्प से ऋ को उ

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से ऋ को उ नहीं करेंगे वहां

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ तथा
'क-ग-च.....' (17) से व् का लोप करने पर निअत्तं बनेगा।

⊙ वुंदारया, वंदारया (वृन्दारकाः—देव, मनोहर)
वृन्दारक + जस्
'निवृत्त....' (187) से विकल्प से ऋ को उ
'ङञणनो....' (33) से न् को अनुस्वार
'क-ग-च.....' (17) से क् का लोप
'अवर्णो....' (19) से य श्रुति
'जश्शसोर्लुक्' (396) से जस् का लोप
'जश्शस्.....' (397) से अ को दीर्घ (आ)
पक्ष में—विकल्प से ऋ को उ नहीं करेंगे वहां
'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ करने पर वंदारया बनेगा।

188. **वृषभे वा वा 1/133**

वृषभे ऋतो वेन सह उद् वा स्यात्। उसहो, वसहो।

■ वृषभ में ऋ को वकार सहित उ विकल्प से होता है।
वृषभ + सि
'वृषभे वा वा' (188) से विकल्प से वकार सहित ऋ को उ
'शषोः सः' (16) से ष् को स्
'ख-घ-थ....' (30) से भ् को ह्
शेष सरो की तरह
पक्ष में—विकल्प से वकार सहित ऋ को उ नहीं करेंगे वहां
'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ करने पर वसहो बनेगा।

189. **गौणान्त्यस्य 1/134**

गौणशब्दस्य योऽन्त्यऋत् तस्य उत् स्यात्। पिउवणं।

■ गौण (अप्रधान) शब्दों का जो अन्त्य (अंतिम) ऋ है उसको उ होता है।

⊙ पिउवणं (पितृवनम्—पिता का वन)
पितृवन + सि
'गौणान्त्यस्य' (189) से ऋ को उ
'क-ग-च....' (17) से त् का लोप
'नो णः' (28) से न् को ण्
शेष कैअवं की तरह

190. **मातुरिद् वा 1/135**

मातृशब्दस्य गौणस्य ऋत इद् वा स्यात्। माइमंडलं, माउमंडलं। क्वचिद् अगौणस्यापि—माईणं।

■ गौण (दशा को प्राप्त) मातृ शब्द के ऋ को इ विकल्प से होता है।

⊙ माइमंडलं, माउमंडलं (मातृमण्डलम्—माताओं का समूह)
मातृमण्डल + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'मातुरिद् वा' (190) से ऋ को विकल्प से इ
'क-ग-च-ज...' (17) से त् का लोप
'ङ्अणनो....' (33) से ण् को अनुस्वार
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—विकल्प से ऋ को इ नहीं करेंगे वहां
'गौणान्त्यस्य' (189) से ऋ को उ करने पर माउमंडलं बनेगा।
(बहुलाधिकार के कारण) कहीं अगौण (मुख्य) को भी—

⊙ माईणं (मातृणाम्—माताओं की)
मातृ + आम्
'मातुरिद् वा' (190) से बहुलता से अगौण ऋ को इ
'क-ग-च....' (17) से त् का लोप
'टा-आमोर्णः' (401) से आम् को ण
'जश्शस्....' (397) से इ को दीर्घ (ई)
'क्त्वा-स्यादेर्ण-स्वोर्वा' (402) से विकल्प से ण पर अनुस्वार

191. **उदूदोन्मृषि 1/136**

मृषाशब्दे ऋत उत्, ऊत्, ओच्च स्यात्। मुसा, मूसा, मोसा। एवं मुसावाओ, मूसावाओ, मोसावाओ।

■ मृषा शब्द में ऋ को उ, ऊ तथा ओ होता है।

⊙ मुसा, मूसा, मोसा (मृषा—मिथ्या)
मृषा + सि
'उदूदोन्मृषि' (191) से ऋ को क्रमशः उ, ऊ तथा ओ
'शषोः सः' (16) से ष् को स्
शेष गङ्गा की तरह

⊙ मुसावाओ, मूसावाओ, मोसावाओ (मृषावादः—असत्य भाषण)
मृषावाद + सि
'उदूदोन्मृषि' (191) से ऋ को क्रमशः उ, ऊ तथा ओ
'शषोः सः' (16) से ष् को स्
'क-ग-च....' (17) से द् का लोप
शेष सरो की तरह

192. **रिः केवलस्य 1/140**

केवलस्य ऋतो रिरादेशः स्यात्। रिद्धी।

■ केवल ऋ को रि आदेश होता है।

⊙ रिद्धी (ऋद्धिः—समृद्धि)
ऋद्धि + सि
'रिः केवलस्य' (192) से ऋ को रि आदेश
शेष सामिद्धी की तरह

193. **ऋक्षे वा 2/19**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

ऋक्षे संयुक्तस्य छो वा स्यात्। रिच्छो, रिक्खो।

■ ऋक्ष में संयुक्त को छ विकल्प से होता है।

⊙ रिच्छो, रिक्खो (ऋक्षः—भालू, श्वापद)

ऋक्ष + सि

'रिःकेवलस्य' (192) से ऋ को रि आदेश

'ऋक्षे वा' (193) से संयुक्त को विकल्प से छ्

'अनादौ...' (6) से छ् को द्वित्व

'द्वितीय ....' (14) से छ् को च्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से संयुक्त को छ् नहीं करेंगे वहां

'क्षः खः....' (26) से क्ष् को ख्

'अनादौ......' (6) से ख् को द्वित्व तथा

'द्वितीय.....' (14) से ख् को क् करने पर रिक्खो बनेगा।

194. **ऋणर्ज्वृषभर्त्वृषौ वा 1/141**

ऋणादिषु ऋतो रिर्वा स्यात्। रिणं, अणं। रिज्जू, उज्जू। रिसहो, उसहो। रिऊ, उऊ। रिसी, इसी।

■ ऋण, ऋजु, ऋषभ, ऋतु और ऋषि में ऋ को रि विकल्प से होता है।

⊙ रिणं, अणं (ऋणम्—करजा या कर्ज)

ऋण + सि

'ऋणर्ज्वृषभर्त्वृषौ वा' (194) से ऋ को विकल्प से रि

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से ऋ को रि नहीं करेंगे वहां

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ करने पर अणं बनेगा।

⊙ रिज्जू, उज्जू (देखें सू. 62)

रिज्जू में 'ऋणर्ज्वृ....' (194) से ऋ को विकल्प से रि हुआ है।

⊙ रिसहो, उसहो (ऋषभः—प्रथम जिनदेव)

ऋषभ + सि

'ऋणर्ज्वृ....' (194) से ऋ को विकल्प से रि आदेश

'शषोः सः' (16) से ष् को स्

'ख-घ-थ....' (30) से भ् को ह्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—ऋ को विकल्प से रि नहीं करेंगे वहां

'उदृत्वादौ' (43) से ऋ को उ करने पर उसहो बनेगा।

⊙ रिऊ, उऊ (देखें सू. 59)

रिऊ में 'ऋणर्ज्वृ....' (194) से ऋ को विकल्प से रि हुआ है।

⊙ रिसी, इसी (देखें सू. 40)

रिसी में 'ऋणर्ज्वृ....' (194) से ऋ को विकल्प से रि हुआ है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

195. **आदृते ढिः 1/143**

आदृते ऋतो ढिरादेशः स्यात्। आढिओ।

■ आदृत में ऋ को ढि आदेश होता है।

⊙ आढिओ (आदृतः—सत्कृत, सम्मानित)

आदृत + सि

'क-ग-च....' (17) से द् तथा त् का लोप

'आदृते ढिः' (195) से ऋ को ढि आदेश

शेष सरो की तरह

196. **अरिर्दृप्ते 1/144**

दृप्ते ऋतोऽरिरादेशः स्यात्।

■ दृप्त में ऋ को अरि आदेश होता है।

197. **दृप्ते 2/96**

दृप्ते शेषस्य द्वित्वं न स्यात्। दरिअ-सीहेण।

■ दृप्त में शेष को द्वित्व नहीं होता है।

⊙ दरिअ-सीहेण (दृप्तसिंहेन—गर्विष्ठ शेर ने)

दृप्तसिंह + टा

'अरिर्दृप्ते' (196) से ऋ को अरि आदेश

'क-ग-ट....' (13) से प् का लोप

'अनादौ....' (6) से त् को द्वित्व की प्राप्ति

'दृप्ते' (197) से द्वित्व का निषेध

'क-ग-च....' (17) से त् का लोप

'ईर्जिह्वा....' (141) से इ को ई

'मांसादेर्वा' (139) से विकल्प से अनुस्वार का लोप

'टा-आमोर्णः' (401) से टा को ण

'टाण-शस्येत्' (400) से अ को ए

वर्ण-सम्मेलन करने पर

198. **लृत इलिः क्लृप्त-क्लृन्ने 1/145**

अनयोर्लृत इलिरादेशः स्यात्। किलित्तं, किलिन्नं।

■ क्लृप्त और क्लृन्न में लृ को इलि आदेश होता है।

⊙ किलित्तं (क्लृप्तम्—कल्पित, रचित)

⊙ किलिन्नं (क्लृन्नम्—आर्द्र)

इन दोनों रूपों में—

'लृत इलिः क्लृप्त-क्लृन्ने' (198) से लृ को इलि आदेश

शेष कैअवं की तरह

इसके अतिरिक्त किलित्तं में 'क-ग-ट....' (13) से प् का लोप तथा 'अनादौ....' (6) से त् को द्वित्व हुआ है।

199. **एत इद् वा वेदना-चपेटा-देवर-केसरे 1/146**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

एषु एत इद् वा स्यात्। विअणा, वेअणा। चविडा, चवेडा। दिअरो, देवरो। किसरं, केसरं। महिला महेला तु महिलामहेलाभ्यां शब्दाभ्यां भविष्यति।

■ वेदना, चपेटा, देवर और केसर में ए को इ विकल्प से होता है।

⊙ विअणा, वेअणा (वेदना—पीड़ा, संताप)

वेदना + सि

'एत इद् वा वेदना-चपेटा-देवर-केसरे' (199) से विकलप से ए को इ

'क-ग-च.....' (17) से द् का लोप

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष गङ्गा की तरह

पक्ष में—विकल्प से ए को इ नहीं करेंगे वहां वेअणा बनेगा।

⊙ चविडा, चवेडा (चपेटा—तमाचा, थप्पड़)

चपेटा + सि

'एत इद् वा......' (199) से विकल्प से ए को इ

'पो वः' (24) से प् को व्

'टो डः' (22) से ट् को ड्

शेष गङ्गा की तरह

पक्ष में—चवेडा

⊙ दिअरो, देवरो (देवरः—पति का छोटा भाई)

देवर + सि

'एत इद् वा......' (199) से विकल्प से ए को इ

'क-ग-च.......' (17) से व् का लोप

शेष सरो की तरह

पक्ष में—देवरो

⊙ किसरं, केसरं (केसरम्—पराग, सुवर्ण, छन्द-विशेष)

केसर + सि

'एत इद् वा...' (199) से विकल्प से ए को इ

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—केसरं

■ महिला तथा महेला (नारी) ये दोनों रूप महिला और महेला शब्दों से सिद्ध हो जाते हैं, यहां विकल्प से ए को इ नहीं किया गया है।

200. **ऊः स्तेने वा 1/147**

स्तेने एत ऊद् वा स्यात्। थूणो, थेणो।

■ स्तेन में ए को ऊ विकल्प से होता है।

⊙ थूणो, थेणो (स्तेनः—चोर)

स्तेन + सि

'ऊः स्तेने वा' (200) से विकल्प से ए को ऊ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'स्त्स्य.....' (87) से स्त् को थ्
'नो णः' (28) से न् को ण्
शेष सरो की तरह
पक्ष में—विकल्प से ए को ऊ नहीं करेंगे वहां थेणो बनेगा।

201. **इत्सैंधव-शनैश्चरे 1/149**
अनयोरैत इत् स्यात्। सिंधवं, सणिच्छरो।

■ सैंधव और शनैश्चर में ऐ को इ होता है।

⊙ सिंधवं (सैन्धवम्—सिंध देश का लवण)
सैन्धव + सि
'इत्सैंधव-शनैश्चरे' (201) से ऐ को इ
'ङञणनो.....' (33) से न् को अनुस्वार
शेष कैअवं की तरह

⊙ सणिच्छरो (शनैश्चरः—शनिग्रह)
शनैश्चर + सि
'शषोः सः' (16) से श् को स्
'नो णः' (28) से न् को ण्
'इत्सैंधव.....' (201) से ऐ को इ
'Ðस्वात्....' (40) से श्च् को छ्
'अनादौ....' (6) से छ् को द्वित्व
'द्वितीय.....' (14) से छ् को च्
शेष सरो की तरह

202. **सैन्ये वा 1/150**
सैन्ये ऐत इद् वा स्यात्। सिन्नं, सेन्नं।

■ सैन्य में ऐ को इ विकल्प से होता है।

⊙ सिन्नं, सेन्नं (सैन्यम्—सेना)
सैन्य + सि
'सैन्ये वा' (202) से ऐ को विकल्प से इ
'अधो....' (5) से य् का लोप
'अनादौ....' (6) से न् को द्वित्व
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—विकल्प से ऐ को इ नहीं करेंगे वहां
'ऐत एत्' (70) से ऐ को ए करने पर सेन्नं बनेगा।

203. **वैरादौ वा 1/152**
वैरादिषु ऐत अइरादेशो वा स्यात्। वइरं, वेरं। कइलासो, केलासो। कइरवं केरवं। वइसवणो, वेसवणो। वइसंपायणो, वेसंपायणो। वइआलिओ, वेआलिओ। वइसिओ, वेसिओ। चइत्तो, चेत्तो। इत्यादि।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

■ वैर आदि में ऐ को विकल्प से अइ आदेश होता है।

⊙ वइरं, वेरं (वैरम्—शत्रुता)

⊙ कइरवं, केरवं (कैरवम्—सफेद कमल, कपट)

इन दोनों रूपों में—

'वैरादौ वा' (203) से ऐ को विकल्प से अइ

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से ऐ को अइ नहीं करेंगे वहां

'ऐत एत्' (70) से ऐ को ए करने पर वेरं, केरवं बनेगा।

⊙ कइलासो, केलासो (कैलासः—पर्वत-विशेष, एक नागराज)

⊙ वइसवणो, वेसवणो (वेश्रवणः—कुबेर)

⊙ वइआलिओ, वेआलिओ (वैतालिकः—मंगल-स्तुति आदि से राजा को जगानेवाला मागध आदि)

इन सभी रूपों में—

'वैरादौ वा' (203) से ऐ को विकल्प से अइ

शेष सरो की तरह

इसके अतिरिक्त वइसवणो में 'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप तथा

'शषोः सः' (16) से श् को स् हुआ है।

वइआलिओ में 'क-ग-च....' (17) से त् तथा क् का लोप हुआ है।

पक्ष में—विकल्प से ए को अइ नहीं करेंगे वहां क्रमशः केलासो, वेसवणो, वेआलिओ बनेगा।

⊙ वइसंपायणो, वेसंपायणो (वैशम्पायनः—एक ऋषि का नाम)

⊙ वइसिओ, वेसिओ (वैशिकः—वेष से जीविका उपार्जन करने वाला)

इन दोनों रूपों में—

'वैरादौ वा' (203) से ऐ को विकल्प से अइ

'शषोः सः' (16) से श् को स्

शेष सरो की तरह

इसके अतिरिक्त वइसंपायणो में 'मोनुस्वारः' (399) से म् को अनुस्वार तथा

'नो णः' (28) से न् को ण् हुआ है।

वइसिओ में 'क-ग-च....' (17) से क् का लोप हुआ है।

पक्ष में—विकल्प से ऐ को अइ नहीं करेंगे वहां

'ऐत एत्' (70) से ऐ को ए करने पर क्रमशः वेसंपायणो, वेसिओ बनेगा।

⊙ चइत्तो, चेत्तो (चैत्रः—चैत्र मास)

चैत्र + सि

'वैरादौ वा' (203) से ऐ को विकल्प से अइ

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'अनादौ....' (6) से त् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

पक्ष में—विकल्प से ऐ को अइ नहीं करेंगे वहां

'ऐत एत्' (70) से ऐ को ए करने पर चेत्तो बनेगा।

204. **उच्चै-र्नीचैस्यअः 1/154**

अनयोरैतः अअ इत्यादेशः स्यात्। उच्चअं, नीचअं। उच्चनीचाभ्यां के सिद्धं। उच्चैर्नीचैसोस्तु रूपान्तरनिवृत्यर्थं वचनम्।

■ उच्चैः और नीचैः के ऐ को अअ यह आदेश होता है।

⊙ उच्चअं (उच्चैः—ऊँचा)

⊙ नीचअं (नीचैः—नीचे)

उच्चैस्, नीचैस्—यह दोनों अव्यय हैं, इनमें—

'उच्चैर्नीचैस्यअः' (204) से ऐ को अअ आदेश

'वा स्वरे मश्च' (243) से बहुलता से अन्य व्यंजन स् को भी मकार

'मोनुस्वारः' (399) से म् को अनुस्वार

■ उच्च और नीच शब्दों से स्वार्थ में क (प्रत्यय) होने पर उच्चअं, नीचअं रूप सिद्ध हो सकता है, पर उच्चैः, नीचैः शब्दों से अन्य रूपों की निवृत्ति के लिए इन शब्दों के ऐ को 'उच्चैर्नीचैस्ययअः' इस सूत्र से अअ यह आदेश किया गया है। (उच्चैः, नीचैः शब्दों से प्राकृत में उच्चअं, नीचअं यही रूप बन सकता है, दूसरा नहीं।)

205. **ईद् धैर्ये 1/155**

धैर्ये ऐत ईः स्यात्।

■ धैर्य में ऐ को ई होता है।

206. **धैर्ये वा 2/64**

धैर्ये र्यस्य रो वा स्यात्। धीरं, धिज्जं।

■ धैर्य में र्य को र विकल्प से होता है।

⊙ धीरं, धिज्जं (धैर्यम्—धैर्य)

धैर्य + सि

'ईद् धैर्ये' (205) से ऐ को ई

'धैर्ये वा' (206) से विकल्प से र्य् को र्

'अनादौ....' (6) से र् को द्वित्व की प्राप्ति

'र-होः' (7) से द्वित्व का निषेध

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से र्य् को र् नहीं करेंगे वहां

'ईद् धैर्ये' (205) से ऐ को ई

'द्य-य्य....' (113) से र्य् को ज्

'अनादौ.....' (6) से ज् को द्वित्व

'Đस्वः.....' (12) से ई को इ करने पर

धिज्जं बनेगा।

207. **ओतोद् वान्योन्य-प्रकोष्ठातोद्य शिरोवेदना-मनोहर-सरोरुहे क्तोश्च वः 1/156**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

एषु ओतोऽत्वं वा स्यात्, तत् सन्नियोगे च यथासंभवं ककारतकारयोर्वादेशः। अन्नन्नं, अन्नुन्नं। पवट्ठो, पउट्ठो। आवज्जं, आउज्जं। सिरविअणा, सिरोविअणा। मणहरं, मणोहरं। सररुहं, सरोरुहं।

■ अन्योन्य, प्रकोष्ठ, आतोद्य, शिरोवेदना, मनोहर और सरोरुह में ओ को अ विकल्प से होता है तथा उसके सन्नियोग में यथासंभव (प्रयोग के अनुसार) ककार और वकार को व आदेश होता है।

⊙ अन्नन्नं, अन्नुन्नं (अन्योन्यम्—परस्पर)

अन्योन्य + सि

'अधो......' (5) से दोनों य् का लोप

'अनादौ.....' (6) से दोनों न् को द्वित्व

'ओतोद् वान्योन्य-प्रकोष्ठातोद्य-शिरोवेदना-मनोहर-सरोरुहे क्तोश्च वः' (207) से ओ को विकल्प से अ

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से ओ को अ नहीं करेंगे वहां

'ह्रस्वः.....' (12) से ओ को करने पर अन्नुन्नं बनेगा।

⊙ पवट्ठो, पउट्ठो (प्रकोष्ठः—हाथ का पहुँचा)

प्रकोष्ठ + सि

'सर्वत्र.....' (9) से र् का लोप

'ओतोद्....' (207) से विकल्प से ओ को अ तथा क् को व्

'क-ग-ट....' (13) से ष् का लोप

'अनादौ.....' (6) से ठ् को द्वित्व

'द्वितीय.....' (14) से ठ् को ट्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से ओ को अ तथा क् को व् नहीं करेंगे वहां

'ह्रस्वः....' (12) से ओ को उ तथा

'क-ग-च....' (17) से क् का लोप करने पर पउट्ठो बनेगा।

⊙ आवज्जं, आउज्जं (आतोद्यम्—एक प्रकार का बाजा, नारद की वीणा)

आतोद्य + सि

'ओतोद्......' (207) से विकल्प से ओ को अ तथा त् को व्

'द्य-य्य....' (113) से द्य् को ज्

'अनादौ....' (6) से ज् को द्वित्व

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से ओ को अ तथा त् को व् नहीं करेंगे वहां

'ह्रस्वः....' (12) से ओ को उ तथा

'क-ग-च.... (17) से त् का लोप करने पर आउज्जं बनेगा।

⊙ सिरविअणा, सिरोविअणा (शिरोवेदना—सिर की वेदना)

शिरोवेदना + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'ओतोद्.....' (207) से विकल्प से ओ को अ

'एत इद् वा....' (199) से विकल्प से ए को इ

'क-ग-च....' (17) से द् का लोप

'नोण णः' (28) से न् को ण्

शेष गङ्गा की तरह

पक्ष में—सिरोविअणा

⊙ मणहरं, मनोहरं (मनोहरम्—सुन्दर)

⊙ सररुहं, सरोरुहं (सरोरुहम्—कमल)

इन दोनों रूपों में—

'ओतोद् .....' (207) से विकल्प से ओ को अ

शेष कैअवं की तरह

इसके अतिरिक्त मणहरं में 'नो णः' (28) से न् को ण् हुआ है।

पक्ष में—क्रमशः मणोहरं, सरोरुहं

208. **ऊत् सोच्छ्वासे 1/157**

सोच्छ्वासे ओत ऊत् स्यात्। सूसासो।

■ सोच्छ्वास में ओ को ऊ होता है।

⊙ सूसासो (सोच्छ्वासः—ऊर्ध्व श्वासवाला)

सोच्छ्वास + सि

'ऊत सोच्छ्वासे' (208) से ओ को ऊ

'सर्वत्र......' (9) से व् का लोप

'अन्त्य.....' (42) से समास में वाक्य की अपेक्षा च् का लोप

'निमित्ताभावे नैमित्तिकस्याप्यभावः' इस न्याय से छकार का पूर्वस्वरूप शकार

'शषोः सः' (16) से श् को स्

शेष सरो की तरह

209. **गव्यउ आअः 1/158**

गोशब्दे ओत अउ, आअ इत्यादेशौ स्तः। गउओ, गाओ।

■ गो शब्द में ओ को अउ और आअ यह आदेश होता है।

⊙ गउओ (गोकः—गाय)

गोक + सि

'गव्यउ आअः' (209) से ओ को अउ

'क-ग-च....' (17) से क् का लोप

गउअ + सि

शेष सरो की तरह

⊙ गाओ (गौः—गाय)

गो + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'गव्यउ आअ:' (209) से ओ को आअ

गाअ + सि

शेष सरो की तरह

210. **कौक्षेयके वा 1/161**

कौक्षेयके औत उद् वा स्यात्। कुच्छेअयं, कोच्छेअयं।

■ कौक्षेयक में औ को उ विकल्प से होता है।

⊙ कुच्छेअयं, कोच्छेअयं (देखें सू. 49)

कुच्छेअयं में 'कौक्षेयके वा' (210) से ओ को विकल्प से उ हुआ है।

211. **अउः पौरादौ च 1/162**

कौक्षेयके पौरादिषु च औत अउरादेशः स्यात्। कउच्छेअयं। पउरो, कउरवो, कउसलं, पउरिसं, सउहं, गउडो, मउली, मउणं, सउरा, कउला।

■ कौक्षेयक में और पौर आदि में औ को अउ आदेश होता है।

⊙ कउच्छेअयं (देखें सू. 49)

'अउः पौरादौ च' (211) से औ को अउ आदेश

शेष साधनिका कोच्छेअयं की तरह ही है।

⊙ पउरो (पौरः—नगर में रहने वाला)

⊙ कउरवो (कौरवः—कुरु वंश में उत्पन्न)

⊙ गउडो (गौडः—बंगाल का पूर्वी भाग)

इन तीनों रूपों में—

'अउः पौरादौ च' (211) से औ को अउ आदेश

शेष सरो की तरह

⊙ कउसलं (कोशलम्—चतुराई, दक्षता)

⊙ सउहं (सौधम्—सुधा-सम्बन्धी, चांदी)

⊙ मउणं (मौनम्—चुप्पी, मौन)

इन तीनों रूपों में—

'अउः....' (211) से औ को अउ आदेश

शेष कैअवं की तरह

इसके अतिरिक्त कउसलं में 'शषोः सः' (16) से श् को स्

सउहं में 'ख-घ-थ....' (30) से ध् को ह्

मउणं में 'नो णः' (28) से न् को ण् हुआ है।

⊙ पउरिसं (पौरुषम्—पुरुषत्व, वीरता)

पौरुष + सि

'अउः....' (211) से औ को अउ आदेश

'पुरुषे रोः' (174) से र् के उ को इ

'शषोः सः' (16) से ष् को स्

शेष कैअवं की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ मउली (मौलिः—मुकुट)

मौलि + सि

'अउः.....' (211) से औ को अउ आदेश

शेष पारद्धी की तरह

⊙ सउरा (सौराः—सूर्य के उपासक, सूर्य-सम्बन्धी)

⊙ कउला (कौलाः—तान्त्रिक मत को जानने वाले)

सौर + जस

कौल + जस्

इन दोनों रूपों में—

'अउः.....' (211) से औ को अउ

'जश्शसोर्लुक्' (396) से जस् का लोप

'जश्शस्....' (397) से अ को दीर्घ (आ)

212. **आच्च गौरवे 1/163**

गौरवे औत आत्वं अउश्च स्यात्। गारवं, गउरवं।

■ गौरव में औ को आ और अउ होता है।

⊙ गारवं, गउरवं (गौरवम्—अभिमान, गुरुत्व)

गौरव + सि

'आच्च गौरवे' (212) से औ को क्रमशः आ तथा अउ

शेष कैअवं की तरह

213. **नाव्यावः 1/164**

नौ शब्दे औत आवादेशः स्यात्। नावा।

■ नौ शब्द में औ को आव आदेश होता है।

⊙ नावा (नौः—नौका)

नौ + सि

'नाव्यावः' (213) से औ को आव आदेश

नाव + सि

'आत्' (हेम. 2/4/18) से स्त्रीलिंग में आप् प्रत्यय

प् अनुबंध जाने पर

'पदयोः....' (388) से संधि

शेष गङ्गा की तरह

214. **एत् त्रयोदशादौ स्वरस्य सस्वरव्यञ्जनेन 1/165**

त्रयोदश इत्येवंप्रकारेषु संख्याशब्देषु आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह एत् स्यात्।

■ त्रयोदश इस प्रकार के संख्या (वाचक) शब्दों में आदि स्वर को परले (बाद वाले) सस्वर व्यंजन सहित ए होता है।

215. **संख्या गद्गदे रः 1/219**

संख्यावाचिनि गद्गदे च दस्य रः स्यात्।

■ संख्यावाचि (शब्दों में) और गद्गद में द को र होता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

216. **दश-पाषाणे हः 1/262**

दशन्शब्दे पाषाणशब्दे च शषोर्हो वा स्यात्। तेरह,[1] तेवीसा, तेतीसा। बारह[2], गग्गरं। दह[3], दस। पाहाणो, पासाणो।

■ दशन् शब्द में और पाषाण शब्द में श और ष को ह विकल्प से होता है।

⊙ तेरह (त्रयोदश—तेरह)

त्रयोदशन् + जस्

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'एत् त्रयोदशादौ स्वरस्य सस्वरव्यञ्जनेन' (214) से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ए

तेदशन् + जस्

'संख्या गद्गदे रः' (215) से द् को र्

'दश-पाषाणे हः' (216) से विकल्प से श् को ह्

'अन्त्य......' (42) से न् का लोप

'जश्शसोर्लुक्' (396) से जस् का लोप

'जश्शस्.....' (397) से बहुलता के कारण दीर्घ का अभाव

⊙ तेवीसा (त्रयोविंशतिः—तेईस)

त्रयोविंशति + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'एत् त्रयोदशादौ.... (214) से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ए

तेविंशति + सि

शेष प्रक्रिया बीसा की तरह (देखें सू. 143)

⊙ तेतीसा (त्रयस्त्रिंशत्—तैतीस)

त्रयस्त्रिंशत् + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'एत् त्रयोदशादौ.....' (214) से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन के साथ ए

'क-ग-ट.....' (13) से स् का लोप

शेष प्रक्रिया तीसा की तरह (देखें सू. 143)

⊙ बारह (द्वादश—बारह)

द्वादशन् + जस्

'क-ग-ट.....' (13) से द् का लोप

'संख्या.....' (215) से द् को र्

'दश....' (216) से विकल्प से श् को ह्

'अन्त्य.....' (42) से न् का लोप

'जश्शसोर्लुक्' (396) से जस् का लुक्

---

[1] सू. 214 की वृत्ति का शेषांश।

[2] सू. 215 की वृत्ति का शेषांश।

[3] सू. 216 की वृत्ति का शेषांश।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'जश्शस्....' (397) से बहुलता से दीर्घ का अभाव

⊙ गग्गरं (गद्गदम्—हर्ष, प्रेम, हकला कर बोलना)

गद्गद + सि

'क-ग-ट....' (13) से द् का लोप

'अनादौ....' (6) से ग् को द्वित्व

'संख्या...... (215) से द् को र्

शेष कैअवं की तरह

⊙ दह, दस (दश—दस)

दशन् + जस्

'दश....' (216) से विकल्प से श् को ह्

'अन्त्य....' (42) से न् का लोप

'जश्शसोर्लुक्' (396) से जस् का लोप

'जश्शस्.....' (397) से बहुलता से दीर्घ का अभाव

पक्ष में—विकल्प से श् को ह् नहीं करेंगे वहां

'शषोः सः' (16) से श् को स् करने पर दस बनेगा।

⊙ पाहाणो, पासाणो (पाषाणः—पत्थर)

पाषाण + सि

'दश.....' (216) से ष् को विकल्प से ह्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से श् को ह् नहीं करेंगे वहां

'शषोः सः' (16) से ष् को स् करने पर पासाणो बनेगा।

217. **वा कदले 1/167**

कदले आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह एद् वा स्यात्। केलं, कयलं। केली, कयली।

■ कदल में आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ए विकल्प से होता है।

⊙ केलं, कयलं (कदलम्—केला)

कदल + सि

'वा कदले' (217) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ए

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ए नहीं करेंगे वहां

'क-ग-च-ज....' (17) से द् का लोप तथा

'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति करने पर कयलं बनेगा।

⊙ केली, कयली (कयली—केला का गाछ)

कदली + सि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'वा कदले' (217) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ए इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

पक्ष में—विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ए नहीं करेंगे वहां

'क-ग-च....' (17) से द् का लोप तथा

'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति करने पर कयली बनेगा।

218. **वेतः कर्णिकारे 1/168**

कर्णिकारे इतः परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह एद् वा स्यात्।

■ कर्णिकार में इकार को परले सस्वर व्यंजन सहित ए विकल्प से होता है।

219. **कर्णिकारे वा 2/95**

कर्णिकारे शेषस्य णस्य द्वित्वं वा स्यात्। कण्णेरो, कणेरो, कण्णिआरो, कणिआरो।

■ कर्णिकार में शेष ण को द्वित्व विकल्प से होता है।

⊙ कण्णेरो, कणेरो, कण्णिआरो, कणिआरो (कर्णिकारः—कनेर का गाछ, गोशालक का एक भक्त)

कर्णिकार + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'वेतः कर्णिकारे' (218) से विकल्प से इ को परले सस्वर व्यंजन सहित ए

'कर्णिकारे वा' (219) से विकल्प से शेष ण् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

पक्ष में—जहां विकल्प से ण् को द्वित्व नहीं करेंगे वहां कणेरो बनेगा।

जहां विकल्प से इ को परले सस्वर व्यंजन सहित ए नहीं करेंगे वहां 'क-ग-च....' (17) से क् का लोप करने पर कण्णिआरो बनेगा।

जहां विकल्प से ए भी नहीं करेंगे तथा ण् को भी द्वित्व नहीं करेंगे वहां कणिआरो बनेगा।

220. **अयौ वैत् 1/169**

अयिशब्दे आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह ऐद् वा स्यात्। ऐ बीहेमि[1], अइ देव।

■ अयि शब्द में आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ऐ विकल्प से होता है।

⊙ ऐ बीहेमि (अयि बिभेमि—अयि! डरता हूं)

ऐ (अयि—संभावना बोधक अव्यय)

अयि—यह अव्यय है

'अयौ वैत् (220) से आदि स्वर को विकल्प से परले सस्वर व्यंजन सहित ऐ

बीहेमि

भी + मिप्

'भियो भा-बाहौ' (685) से भी धातु को बीह् आदेश

बीह् + मिप्

---

1 विधानात् ऐकारस्यापि प्राकृते प्रयोगः।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'व्यञ्जना....' (638) से धातु के अंत में अकार का आगम
'वर्तमाना-पञ्चमी-शतृषु वा' (640) से विकल्प से अ को ए
'तृतीयस्य मिः' (624) से मिप् को मि

⊙ अइ देव (अयि देव—अयि! छेव)
अइ
अयि यह अव्यय है
'क-ग-च.....' (17) से य् का लोप
देव
देव + सि
इकार उच्चारण के लिए
'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

221. ओत् पूतर-बदर-नवमालिका-नवफलिका-पूगफले 1/170

एषु आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह ओत् स्यात्। पोरो, बोरं, नोमालिआ, नोहलिआ, पोप्फलं।

■ पूतर, बदर, नवमालिका, नवफलिका और पूगफल में आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ओ होता है।

⊙ पोरो (पूतरः—जल में होने वाला क्षुद्र जन्तु)
पूतर + सि
'ओत् पूतर-बदर-नवमालिका-नवफलिका-पूगफले' (221) से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ओ
शेष सरो की तरह

⊙ बोरं (बदरम्—फल-विशेष, बेर)
बदर + सि
'ओत् पूतर.....' (221) से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ओ
शेष कैअवं की तरह

⊙ नोमालिआ (नवमालिका—सुगन्धि वाला वृक्ष-विशेष)

⊙ नोहलिआ (नवफलिका—नवोत्पन्न फली)
इन दोनों रूपों में—
'ओत् पूतर.....' (221) से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ओ
'क-ग-च....' (17) से क् का लोप
शेष गङ्गा की तरह
इसके अतिरिक्त नोहलिआ में 'फो भ-हौ' (222) से फ् को ह् हुआ है।

⊙ पोप्फलं (पूगफलम्—सुपारी)
पूगफल + सि
'ओत् पूतर....' (221) से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ओ
'समासे वा' (351) से बहुलता से फ् को द्वित्व

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'द्वितीय.....' (14) से पूर्व फ् को प्

शेष कैअवं की तरह

222. **फो भ-हौ 1/236**

स्वरात् परस्यासंयुक्तस्यानादेः फस्य भहौ स्तः[1] । क्वचिद् भः—रेभो, सिभा। क्वचित्तु हः—मुत्ताहलं। क्वचित् उभावपि—सभलं, सहलं। सेभालिया, सेहालिया। सभरी, सहरी। गुभइ, गुहइ। स्वरादिति किं? गुंफइ। असंयुक्तस्येति किं? पुप्फं। अनादेरिति किं? फणी। बाहुलकात् रत्तफणी।

■ स्वर से परे असंयुक्त और अनादि फ को भ और ह होता है। कहीं (फ को) भ—

⊙ रेभो (रेफः—रकार, दुष्ट, क्रूर)

रेफ + सि

'फो भ-हौ' (222) से फ् को भ्

शेष सरो की तरह

⊙ सिभा (शिफा—वृक्ष का जटाकार मूल)

शिफा + सि

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'फो भ-हौ' (222) से फ् को भ्

शेष गङ्गा की तरह

कहीं (फ को) ह—

⊙ मुत्ताहलं (मुक्ताफलम्—मोती)

मुक्ताफल + सि

'क-ग-ट....' (13) से क् का लोप

'अनादौ..... (6) से त् को द्वित्व

'फो भ-हौ' (222) से फ् को ह्

शेष कैअवं की तरह

■ कहीं (फ को भ और ह) दोनों ही—

⊙ संभालं, सहलं (सफलम्—सार्थक)

सफल + सि

'फो भ-हौ' (222) से फ् को क्रमशः भ् तथा ह्

शेष कैअवं की तरह

⊙ सेभालिया, सेहालिया (शेफालिका—लता-विशेष)

शेफालिका + सि

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'फो भ-हौ' (222) से फ् को क्रमशः भ् तथा ह्

'क-ग-च....' (17) से क् का लोप

'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति

---

[1] फस्य भहौ यथादर्शनं शिष्टप्रयोगानुसारेणैव भवतः।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष गङ्गा की तरह

⊙ सभरी, सहरी (शफरी—मछली)

शफरी + सि

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'फो भ-हौ' (222) से फ् को क्रमशः भ् तथा ह्

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

⊙ गुभइ, गुहइ (गुफति—गूंथता है)

गुफति

'फो भ-हो' (222) से फ् को क्रमशः भ् तथा ह्

'क-ग-च....' (17) से त् का लोप

■ स्वर से परे ऐसा क्यों?

⊙ गुंफइ (गुम्फति—गूंथता है)

गुम्फति

'मोनुस्वारः' (399) से बहुलता से अनन्त्य म् को अनुस्वार

'क-ग-च....' (17) से त् को लोप

यहां बीच में म् का व्यवधान होने से फ को भ तथा ह नहीं हुआ है।

■ असंयुक्त में ऐसा क्यों?

⊙ पुप्फं (देखें सू. 52)

■ अनादि में ऐसा क्यों?

⊙ फणी (फणी—सर्प, नाग)

फणिन् + सि

'अन्त्य....' (42) से न् का लोप

शेष पारद्धी की तरह

यहां फ आदि में होने से उसे भ तथा ह नहीं हुआ है।

■ बहुलाधिकार से (स्वर से परे अनादि और असंयुक्त फ को भ और ह आदेश नहीं भी होता है)—

⊙ रत्तफणी (रक्तफणी—लाल सर्प)

रक्तफणिन् + सि

'अन्त्य....' (42) से न् का लोप

'क-ग-ट....' (13) से क् का लोप

'अनादौ....' (6) से त् को द्वित्व

शेष पारद्धी की तरह

223. **नवा मयूख-लवण-चतुर्गुण-चतुर्थ-चतुर्दश-चतुर्वार-सुकुमार-कुतूहलोदूखलोलूखले 1/171**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

एषु आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह ओद् वा स्यात्। मोहो, मऊहो। लोणं, लवणं। चोग्गुणो, चउग्गुणो। चोत्थो, चउत्थो। चोद्दह, चउद्दह। चोव्वारो, चउव्वारो। सोमालो, सुकुमालो। कोहलं, कोउहलं। ओहलो, उऊहलो। ओक्खलं, उलूहलं। मोरो, मयूरो इति तु मोरमयूरशब्दभेदात्।

■ मयूख, लवण, चतुर्गुण, चतुर्थ चतुर्दश, चतुर्वार, सुकुमार, कुतूहल, उदूखल, और उलूखल में आदि स्वर को परले (बाद वाले) सस्वर व्यंजन सहित ओ विकल्प से होता है।

⊙ मोहो, मऊहो (मयूखः—किरण, कांति, शिखा)

मयूख + सि

'नवा मयूख-लवण-चतुर्गण-चतुर्थ-चतुर्दश-चतुर्वार-सुकुमार-कुतूहलोदूखलोलूखले' (223) से आदि स्वर को परले (बाद वाले) सस्वर व्यंजन सहित विकल्प से ओ

'ख-घ-थ...' (30) से ख् को ह्

शेष सरो की तरह

पक्ष में — विकल्प से ओ नहीं करेंगे वहां

'क-ग-च' (17) से य् का लोप करने पर मऊहो बनेगा।

⊙ लोणं, लवणं (लवणम्—नमक)

⊙ कोहलं, कोउहलं (कुतूहलम्—कौतुक, परिहास)

इन दोनों रूपों में—

'नवा मयूख....' (223) से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित विकल्प से ओ

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से ओ नहीं करेंगे वहां लवणं बनेगा।

कोउहलं (देखें सू. 96)

⊙ चोग्गुणो, चउग्गुणो (चतुर्गुणः—चौगुना)

⊙ चोत्थो, चउत्थो (चतुर्थः—चौथा)

⊙ चौव्वारो, चउव्वारो (चतुर्वारः—चार दरवाजे वाला)

इन तीनों रूपों में—

'नवा मयूख.....' (223) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ओ

'सर्वत्र...' (9) से र् का लोप

'अनादौ....' (6) से चोग्गुणो में ग् को, चोत्थो में थ् को तथा चोव्वारो में व् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

इसके अतिरिक्त चोत्थो में 'द्वितीय....' (14) से थ् को त् हुआ है।

पक्ष में—विकल्प से ओ नहीं करेंगे वहां

'क-ग-च....' (17) से त् का लोप करने पर क्रमशः चउग्गुणो, चउत्थो, चउव्वारो बनेगा।

⊙ चोद्दह, चउद्दह (चतुर्दश—चौदह)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

चतुर्दशन् + जस्

'नवा मयूख....' (223) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ओ

'सर्वत्र...' (9) से र् का लोप

'अनादौ....' (6) से द् को द्वित्व

'दश....' (216) से श् को ह्

'अन्त्य.......' (42) से न् का लोप

'जश्शसोर्लुक्' (396) से जस् का लोप

'जश्शस्...' (397) से बहुलता से दीर्घ का अभाव

पक्ष में—विकल्प से ओ नहीं करेंगे वहां

'क-ग-च...' (17) से त् का लोप करने पर चउद्दह बनेगा।

⊙ सोमालो, सुकुमालो (सुकुमारः—अति कोमल)

सुकुमार + सि

'नवा मयूख...' (223) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ओ

'हरिद्रादौलः' (64) से र् को ल्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से ओ नहीं करेंगे वहां सुकुमालो बनेगा।

⊙ ओहलो, उऊहलो (उदूखलः—उलूखल, गूगल)

उदूखल + सि

'नवा मयूख....' (223) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ओ

'ख-घ-थ...' (30) से ख् को ह्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से ओ नहीं करेंगे वहां

'क-ग-च....' (17) से द् का लोप करने पर उऊहलो बनेगा।

⊙ ओक्खलं, उलूहलं (उलूखलम्—उलूखल)

उलूखल + सि

'नवा मयूख ....(223) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ओ

'सेवादौ वा' (92) से विकल्प से ख् को द्वित्व

'द्वितीय...' (14) से ख् को क्

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से ओ तथा द्वित्व नहीं करेंगे वहां

'ख-घ-थ....' (30) से ख् को ह् करने पर उलूहलं बनेगा।

⊙ मोरो (मोरः—मयूर)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ मयूरो (मयूरः—मयूर)

शेष सरो की तरह

■ मोरो, मयूरो दोनों रूप मोर और मयूर नामक शब्द भेद से निष्पन्न हैं। प्रस्तुत सूत्र से यहां कुछ कार्य नहीं हुआ है।

224. **अवापोते 1/172**

एतेषु आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह ओद् वा स्यात्। ओअरइ, अवयरइ। ओसरइ, अवसरइ। ओवणं, उअवणं। क्वचिन्न—अवगयं, अवसद्दो, उअ रवी।

■ अव, अप और उत में आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ओ विकल्प से होता है।

⊙ ओअरइ, अवयरइ (अवतरति—जन्म लेता है)

⊙ ओसरइ, अवसरइ (अपसरति—सरकता है)

इन दोनों धातु रूपों में—

'अवापोते' (224) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ओ

'क-ग-च....' (17) से तीनों त् का लोप

पक्ष में—विकल्प से ओ नहीं करेंगे वहां

'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति करने पर अवयरइ बनेगा।

'पोवः' (24) से प् को व् करने पर अवसरइ बनेगा।

⊙ ओवणं, उअवणं (उतवनम्—अथवा वन है)

उतवन + सि

'अवापोते' (224) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ओ

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से ओ नहीं करेंगे वहां

'क-ग-च...' (17) से त् का लोप करने उअवणं बनेगा।

■ (बहुलाधिकार के कारण) कहीं (विकल्प से ओ) नहीं भी होता है—

⊙ अवगयं (अवगतम्—जाना हुआ)

अवगत + सि

'क-ग-च....' (17) से त् का लोप

'अवर्णो...' (19) से य श्रुति

शेष कैअवं की तरह

⊙ अवसद्दो (अपशब्दः—कुत्सित शब्द)

अपशब्द + सि

'पोवः' (24) से प् को व्

'शषोः सः' (16) से श् को स्

'सर्वत्र....' (9) से ब् का लोप

'अनादौ.... (6) से द् को द्वित्व

शेष सरो की तरह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ उअ रवी (उत रविः—अथवा सूर्य)

उत-रवि + सि

'क-ग-च....' (17) से त् का लोप

शेष पारद्धी की तरह

225. **ऊच्चोपे 1/173**

उपशब्दे आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह ऊत् ओच्चादेशौ वा स्तः। ऊआसो, ओआसो, उववासो। ऊहसिअं, ओहसिअं उवहसिअं। ऊज्झाओ, ओज्झाओ, उवज्झाओ।

■ उप शब्द में आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित ऊ तथा ओ आदेश विकल्प से होता है।

⊙ ऊआसो, ओआसो, उववासो (उपवासः—अनाहार)

उपवास + सि

'ऊच्चोपे' (225) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित क्रमशः ऊ, ओ

'क-ग-च.....' (17) से व् का लोप

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से ऊ तथा ओ नहीं करेंगे वहां 'पो वः' (24) से प् को व् करने से उववासो बनेगा।

⊙ ऊहसिअं, ओहसिअं, उवहसिअं (उपहसितम्—जिसका परिहास किया गया है)

उपहसित + सि

'ऊच्चोपे' (225) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित क्रमशः ऊ, ओ

'क-ग-च.....' (17) से त् का लोप

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से ऊ तथा ओ नहीं करेंगे वहां

'पोवः' (24) से प् को व् करने पर उवहसिअं बनेगा।

⊙ ऊज्झाओ, ओज्झाओ, उवज्झाओ (उपाध्यायः—शास्त्रों का अध्यन कराने वाला)

उपाध्याय + सि

'ऊच्चोपे' (225) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित क्रमशः ऊ, ओ

'साध्वस....' (103) से ध्य् को झ्

'अनादौ....' (6) से झ् को द्वित्व

'द्वितीय .....' (14) से झ् को ज्

'क-ग-च....' (17) से य् का लोप

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से ऊ, ओ नहीं करेंगे वहां

'पोवः' (24) से प् को व् करने पर उवज्झाओ बनेगा।

226. **उमो निषण्णे 1/174**

निषण्णे आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह उम आदेशो वा स्यात्।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

■ निषण्ण में आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित उम आदेश विकल्प से होता है।

227. **वादौ 1/229**

आदौ स्थितस्य असंयुक्तस्य नस्य णो वा स्यात्। णुमण्णो, नुमण्णो। णिसण्णो, निसण्णो। णरो, नरो। णई, नई। असंयुक्तस्येति किं? नाओ।

■ आदि में स्थित असंयुक्त न को ण विकल्प से होता है।

⊙ णुमण्णो, नुमण्णो, णिसण्णो, निसण्णो (निषण्णः—डूबा हुआ)

निषण्ण + सि

'उमो निषण्णे' (226) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित उम आदेश

'वादौ' (227) से विकल्प से न् को ण्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—विकल्प से न् को ण् नहीं करेंगे वहां नुमण्णो बनेगा।

विकल्प से केवल उम नहीं करेंगे वहां न् को ण् तथा 'शषोः सः' (16) से ष् को स् करने पर णिसण्णो बनेगा।

जहां न् को ण् भी नहीं करेंगे विकल्प से वहां निसण्णो बनेगा।

⊙ णरो, नरो (नरः—मनुष्य)

नर + सि

'वादौ' (227) से विकल्प से न् को ण्

शेष सरो की तरह

पक्ष में—नरो

⊙ णई, नई (नदी—नदी)

नदी + सि

'वादौ' (227) से विकल्प से न् को ण्

'क-ग-च....' (17) से द् का लोप

इकार उच्चारण के लिए

'अन्त्य....' (42) से स् का लोप

■ असंयुक्त में (न् को ण्) ऐसा क्यों?

⊙ नाओ (न्यायः—न्याय)

न्याय + सि

'अधो....' (5) से प्रथम य् का लोप

'क-ग-च....' (17) से द्वितीय य् का लोप

शेष सरो की तरह

228. **प्रावरणे अङ्ग्वाऊ 1/175**

प्रावरणे आदेः स्वरस्य परेण सस्वरव्यञ्जनेन सह अङ्गुआउ इत्यादेशौ वा स्तः। पंगुरणं, पाउरणं, पावरणं।

■ प्रावरण में आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित अङ्गु और आउ यह आदेश विकल्प से होता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ पंगुरणं, पाउरणं, पावरणं (प्रावरणम्—वस्त्र)

प्रावरण + सि

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'प्रावरणे अङ्ग्वाऊ' (228) से विकल्प से आदि स्वर को परले सस्वर व्यंजन सहित क्रमशः अङ्गु और आउ

शेष कैअवं की तरह

इसके अतिरिक्त पंगुरणं में 'ङञणनो....' (33) से ङ् को अनुस्वार हुआ है।

पक्ष में—पावरणं

229. **निष्प्रती ओत्परी माल्य-स्थोर्वा 1/38**

माल्ये शब्दे स्थाधातौ च परे निर् प्रति इत्येतौ यथासंख्यं ओत् परि इत्येवंरूपौ वा स्तः। अभेदनिर्देशः सर्वदेशार्थः। ओमालं, निम्मल्लं। परिट्ठा, पइट्ठा।

■ माल्ये शब्द परे होने पर निर् (उपसर्ग) को ओत् तथा स्था धातु परे होने पर प्रति (उपसर्ग) को परि यह रूप (आदेश) विकल्प से होता है।

प्रश्न होता है कि व्याकरण के नियमानुसार स्थानी (जिसको आदेश होना है) षष्ठ्यन्त और आदेश प्रथमान्त होता है परन्तु इस सूत्र में स्थानी (निष्प्रती) और आदेश (ओत्परी) दोनों ही प्रथमान्त हैं, ऐसा क्यों?

व्याकरण के नियमानुसार स्थानी षष्ठ्यन्त ही होता है परन्तु इस सूत्र में सूत्रकार ने स्थानी और आदेश की विभक्ति में अभेद का निर्देश करके (दोनों को प्रथमान्त रखकर) यह बताया है कि आदेश सर्वदेश (सम्पूर्ण अंश) को होता है।

⊙ ओमालं, निम्मल्लं (निर्माल्यम्—निर्मलता)

निर्मलता + सि

'निष्प्रती ओत्परी माल्य-स्थोर्वा' (229) से विकल्प से निर् को ओ

'अधो....' (5) से य् का लोप

'अनादौ....' (6) से ल् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु.....' (18) से द्वित्व का निषेध

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—विकल्प से निर् को ओ नहीं करेंगे वहां

'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप

'अधो....' (5) से य् का लोप

'अनादौ....' (6) से म् तथा ल् को द्वित्व

'ह्रस्वः....' (12) से आ को अ करने पर निम्मल्लं बनेगा।

⊙ परिट्ठा, पइट्ठा (प्रतिष्ठा—आदर, सम्मान)

प्रतिष्ठा + सि

'निष्प्रती....' (229) से विकल्प से प्रति को परि आदेश

'क-ग-ट....' (13) से ष् का लोप

'अनादौ....' (6) से ठ् को द्वित्व

'द्वितीय....' (14) से ठ् को ट्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

शेष गङ्गा की तरह

पक्ष में—पइट्ठा (देखें सू. 46)

230. **गृहस्य घरोऽपतौ 2/144**

गृहशब्दस्य घर इत्यादेशः स्यात् पतिशब्दश्चेत् परो न। घरो, घरसामी। अपताविति किं? गहवई।

■ गृह शब्द को घर यह आदेश होता है यदि पति शब्द परे न हो तो।

⊙ घरो (गृहम्—मकान)

गृह + सि

'गृहस्य घरोऽपतौ' (230) से गृह को घर आदेश

घर + सि

शेष सरो की तरह

⊙ घरसामी (गृहस्वामी—घर का मालिक)

गृहस्वामिन् + सि

'गृहस्य...' (230) से गृह को घर आदेश

'सर्वत्र....' (9) से व् का लोप

'अन्त्य....' (42) से न् का लोप

शेष पारद्धी की तरह

■ पति शब्द को छोड़कर ऐसा क्यों?

⊙ गहवई (गृहपतिः—गृहस्थ, संसारी)

गृहपति + सि

'ऋतोत्' (35) से ऋ को अ

'पो वः' (24) से प् को व्

'क-ग-च....' (17) से त् का लोप

शेष पारद्धी की तरह

यहां पति शब्द परे होने से गृह को घर आदेश नहीं हुआ है।

231. **वेणौ णो वा 1/203**

वेणौ णस्य लो वा स्यात्। वेलू, वेणू।

■ वेणु में ण को ल विकल्प से होता है।

⊙ वेलू, वेणू (वेणुः—बाँस, एक राजा, बंसी)

वेणु + सि

'वेणौ णो वा' (231) से विकल्प से ण् को ल्

शेष विण्हू की तरह

पक्ष में—वेणू

232. **यमुना-चामुण्डा-कामुकातिमुक्तके मोनुनासिकश्च 1/178**

एषु मस्य लुक् स्यात्, लुकि मस्य स्थानेऽनुनासिकश्च। जउँणा, चाउँण्डा, काउँओ।

■ यमुना, चामुण्डा, कामुक और अतिमुक्तक में मकार का लुक् होता है और लुक् मकार के स्थान में अनुनासिक होता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

⊙ जउँणा (यमुना—जमुना नदी)
यमुना + सि
'आदेर्यो जः' (73) से य् को ज्
'यमुना-चामुण्डा-कामुकातिमुक्तके मोनुनासिकश्च' (232) से म् का लुक् तथा म् के स्थान में अनुनासिक
'नो णः' (28) से न् को ण्
शेष गङ्गा की तरह

⊙ चाउँण्डा (चामुण्डा—एक देवी का नाम)
चामुण्डा + सि
'यमुना.....' (232) से म् का लुक् तथा म् के स्थान में अनुनासिक
शेष गङ्गा की तरह

⊙ काउँओ (कामुकः—कामी)
कामुक + सि
'यमुना....' (232) से म् का लुक् तथा म् के स्थान में अनुनासिक
'क-ग-च.... (17) से क् का लोप
शेष सरो की तरह

233. **गर्भितातिमुक्तके णः 1/208**

अनयोस्तस्य णः स्यात्। अणिउँतयं। क्वचिन्न—अइमुंतयं। गब्भिणो।

■ गर्भित और अतिमुक्त के त को ण होता है।

⊙ अणिउँतयं (अतिमुक्तकः—एक जैन मुनि का नाम)
अतिमुक्तक + सि
'गर्भितातिमुक्तके णः' (233) से त् को ण्
'यमुना....' (232) से म् का लुक् तथा म् के स्थान में अनुनासिक
'क-ग-ट....' (13) से प्रथम क् का लोप
'क-ग-च....' (17) से द्वितीय क् का लोप
'अवर्णो......' (19) से य श्रुति
'गुणाद्याः....' (614) से पुल्लिंग अतिमुक्तक शब्द का नपुंसक लिंग में प्रयोग
शेष कैअवं की तरह

■ (बहुलाधिकार के कारण) कहीं (त को ण) नहीं भी—

⊙ अइमुंतयं (देखें सू. 52)

⊙ गब्भिणो (गर्भितः—गर्भ-युक्त)
गर्भित + सि
'सर्वत्र....' (9) से र् का लोप
'अनादौ.....' (6) से भ् को द्वित्व
'द्वितीय....' (14) से भ् को ब्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'गर्भिता.....' (233) से त् को ण्

शेष सरो की तरह

234. **दीर्घह्रस्वौ मिथो वृत्तौ 1/4**

वृत्तिः समासः। तत्र दीर्घह्रस्वौ मिथो बहुलं स्तः। तत्र ह्रस्वस्य दीर्घः—अंतावेई, सत्तावीसा। क्वचिन्न—जुवइअणो। क्वचिद् विकल्पः—वारीमई, वारिमई। भुआयंतं, भुअयंतं। पईहरं, पइहरं। वेलूवणं, वेलुवणं। दीर्घस्य ह्रस्वः—निअंब-सिल-खलिअ-वीइमालस्स। क्वचिद् विकल्पः—जउँण-यडं, जउँणा-यडं। नइ-सोत्तं, नई-सोत्तं। गोरि-हरं, गोरी-हरं। वहु-मुहं, वहू-मुहं।

आगया तुह पयम्मि य लच्छी,
निच्चला खलु मुणीसर जाआ।
तो मणो वि मम निच्च्लभावं,
लद्धुमेत्थ चिअ णिच्चं रमइ ॥1॥

■ वृत्ति का अर्थ है—समास। वहां (समास में) परस्पर (मिथः) दीर्घ और ह्रस्व बहुलता से होते हैं। ह्रस्व को दीर्घ के उदाहरण—

⊙ अंतावेई (अन्तर्वेदिः—गंगा और यमुना के बीच का देश)

अन्तर्वेदि + सि

'ङञणनो....' (33) से न् को अनुस्वार

'सर्वत्र.......' (9) से र् का लोप

'दीर्घह्रस्वौ मिथो वृत्तौ' (234) से ह्रस्व को दीर्घ

'क-ग-च....' (17) से द् का लोप

शेष पारद्धी की तरह

⊙ सत्तावीसा (सप्तविंशतिः—सत्ताईस)

सप्तविंशति + सि

'क-ग-ट....' (13) से प् का लोप

'अनादौ....' (6) से त् को द्वित्व

'दीर्घ.....' (234) से ह्रस्व को दीर्घ

शेष प्रक्रिया वीसा की तरह (देखें सू. 143)

■ कहीं (ह्रस्व को दीर्घ) नहीं भी होता है—

⊙ जुवइअणो (युवतिजनः—जवान स्त्री-पुरुष)

युवतिजन + सि

'आर्देयो जः' (73) से य् को ज्

'क-ग-च....' (17) से त् तथा ज् का लोप

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष सरो की तरह

■ कहीं (ह्रस्व को दीर्घ) विकल्प से—

⊙ वारीमई, वारिमई (वारिमतिः—जलवाली)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

वारिमति + सि

'दीर्घ.....' (234) से विकल्प से इ को दीर्घ

'क-ग-च....' (17) से त् का लोप

शेष सामिद्धी की तरह

⊙ भुआयंतं, भुअयंतं (भुजयन्त्रम्—ताबीज)

भुजयन्त्र + सि

'क-ग-च....' (17) से ज् का लोप

'दीर्घ....' (234) से विकल्प से अ को दीर्घ

'ङञणनो....' (33) से न् को अनुस्वार

'सर्वत्र......' (9) से र् का लोप

'अनादौ....' (6) से त् को द्वित्व की प्राप्ति

'न दीर्घानु.....' (18) से द्वित्व का निषेध

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—भुअयंतं

⊙ पईहरं, पइहरं (पतिगृहम्—पति का घर)

पतिगृह + सि

'क-ग-च....' (17) से त् का लोप

'दीर्घ....' (234) से विकल्प से इ को दीर्घ

'गृहस्य....' (230) से गृह को घर आदेश

'ख-घ-थ.....' (30) से घ् को ह्

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—पइहरं

⊙ वेलूवणं, वेलुवणं (वेणुवनम्—बांसों का वन)

वेणुवन + सि

'वेणौ णो वा' (231) से विकल्प से ण् को ल्

'दीर्घ....' (234) से उ को विकल्प से दीर्घ

'नो णः' (28) से न् को ण्

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—वेलुवणं

■ दीर्घ को ह्रस्व के उदाहरण—

⊙ निअबंसिल-खलिअ-वीइमालस्स (नितम्बशिला-स्खलित-वीचिमालस्य—पर्वतीय मध्यभाग की शिलाओं से जिसकी लहरों की पंक्तियां निकली हैं उसके)

नितम्बशिलास्खलितवीचिमाल + ङस्

'क-ग-च....' (17) से दोनों त् तथा च् का लोप

'मोनुस्वारः' (399) से बहुलता से अनन्त्य म् को अनुस्वार

'शषोः सः' (16) से ल् के आ को अ

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'दीर्घ....' (234) से ल् के आ को अ
'क-ग-ट...' (13) से स् का लोप
'ङसः स्सः' (408) से ङस् को स्स
वर्ण सम्मेलन करने पर

■ कहीं (दीर्घ को ह्रस्व) विकल्प से—

⊙ जउँण-यडं, जउँणा-यडं (यमुना-तटम्—यमुना का किनारा)
यमुनातट + सि
'आदेर्यो जः....' (73) से य् को ज्
'यमुना....' (232) से म् का लुक् तथा म् के स्थान में अनुनासिक
'नो णः' (28) से न् को ण्
'दीर्घ....' (234) से विकल्प से आ को अ
'अवर्णो.....' (19) से य श्रुति
'टो डः' (22) से ट् को ड्
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—जउँणा-यडं

⊙ नइ-सोत्तं, नई-सोत्तं (नदी-स्रोतः—नदी का झरना)
नदीस्रोतस् + सि
'क-ग-च.....' (17) से द् का लोप
'दीर्घ.....' (234) से विकल्प से ई को इ
'सर्वत्र......' (9) से र् का लोप
'अनादौ....' (6) से त् को द्वित्व
'अन्त्य....' (42) से स् का लोप
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—नई-सोत्तं

⊙ गोरि-हरं, गोरी-हरं (गौरीगृहम्—शुक्ल-वर्णा स्त्री का घर)
गौरीगृह + सि
'औत ओत्' (49) से औ को ओ
'दीर्घ.... (234) से विकल्प से ई को इ
'गृहस्य....' (230) से गृह को घर आदेश
'ख-घ-थ....' (30) से घ् को ह्
शेष कैअवं की तरह
पक्ष में—गोरी-हरं

⊙ वहु-मुहं, वहू-मुहं (वधू-मुखम्—पत्नी का मुख)
वधूमुख + सि
'ख-घ-थ....' (30) से ध् और ख् को ह्

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

'दीर्घ....' (234) से विकल्प से ऊ को उ

शेष कैअवं की तरह

पक्ष में—वहू-मुहं

■ **श्लोकार्थः—**

हे मुनीश्वर (तुलसी)! तुम्हारे चरण में लक्ष्मी आयी हुई है और वह (चंचल लक्ष्मी भी) निश्चल हो गई है (आपके पास आकर स्थिर हो गई है)। इसलिए मेरा (महाप्रज्ञ का) मन भी निश्चल भाव को प्राप्त करने के लिए यहां ही (आपके चरण में ही) नित्य रमण करता है।

॥ पूर्वसंधि का प्रथम भाग सम्पन्न ॥

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun